एक-अनेक

[श्री लमगोड़ाजी के अबतक के एकांकी नाटकों का एक अनुपम संकलन]

प्रकाशक

परां-पर्वत

राय जयकिशन रोड

पटना-८ (बिहार)

प्रकाशक :
लोरीटा,
पर्ण-पर्वत
राय जयकिशन रोड, पटना-८ (बिहार)

□

□

आवरण-शिल्प : काशीनाथ आर्य

□

मुद्रक :
धर्मयुग प्रेस न्यू
कदमकुआँ, पटना-३

□

प्राप्ति-स्थान : पर्ण-पर्वत
राय जयकिशन रोड
पटना-८ (बिहार)

□

मूल्य : बारह रुपये

एक-अनेक बाबूराम लोमगोड़ा

मौन साहित्य साधक एवं सफल नाटककार

श्री बाबूराम लमगोड़ा

जीवन और जगत की यथार्थ अनुभूतियों को नाटकों के माध्यम से शाश्वत स्वर प्रदान करनेवाले नाटककार, श्री बाबूराम लमगोड़ा की प्रत्येक कृति समय के दर्पण की अद्वितीय छवि है। अटूट लगन, सतत साधना एवं 'कर्मण्येवाधिकारस्ते' से उत्प्रेरित बाबूराम जी ने अतीत की कोमल भावनाओं को नया संस्कार दिया है, वर्त्तमान के यथार्थ को उचित प्रतिष्ठा दी है और भविष्य के सपने को सँवारने के लिए आशा की ज्योति जलायी है। फलस्वरूप इन्होंने **दिव्य नृत्य, कृतम्-स्म्र, जब सरदार ने मिट्टी से मर्द बनाये, वह साँझ; वह शव, हम सुनहले कल की ओर बढ़ रहे हैं** जैसी एकांकियों, **प्रणय पल, आत्मसमर्पण, सौगंध, सब शेष हो गया, कोशा** जैसे ऐतिहासिक नाटक, **पारिजात, कचदेवयानी, कंस और कृष्ण** जैसे पद्य नाटक तथा **गाँव की ओर, बाबा की सारंगी, और गुम्मद गिर गया, यह मौत जिन्दगी है, डूबते हुए इन्सान, अपनी धरती अपना देश, महामानवेर सागर तीरे, एक और मुनादी** जैसे सामाजिक नाटकों का प्रणयन कर अपने गहन अध्ययन, मौलिक सूझबूझ एवं दार्शनिक चिन्तन का सर्वोत्तम प्रमाण पेश किया है। बाबूराम लमगोड़ा द्वारा रचित नाटकों का मूल्यांकन, महिला कॉलेज, लखनऊ की डा० कंचनलता सब्बरवाल की इन पंक्तियों से स्पष्ट है :—

'श्री बाबूराम सिंह लमगोड़ा कृत नाटक रंगमंच तथा पठन की दृष्टि से सर्वथा उपयुक्त होते हैं। विषय की दृष्टि से लेखक ने हिन्दी नाटक साहित्य को एक नवीन भूमि दी है जो अबतक सर्वथा उपेक्षित थी। इनके संवाद सहज, सरल और हृदयस्पर्शी होते हैं। कृत्रिमता की कहीं गुंजाइश नहीं है।

निश्चय ही आज का नाटककार ऐतिहासिक दृष्टिकोण से कतराकर यथार्थ, अति यथार्थ की पीड़ा से दर्शकों के मन को बेधना चाहता है। संभव

है इस प्रक्रिया में उसे यथार्थ के तीर की नोक का ज्ञान हो, किन्तु उसके मूल का, जिसपर उसके वेग का सम्पूर्ण दायित्व निर्भर करता है, अता-पता न हो। ऐसे ही नाटककार परम्परा से टूटकर कुछ नया देन की सगर्व घोषणा करते हैं किन्तु सही स्रष्टा वे ही हैं जो परम्परा अखंडित किये बिना ही उसे नयी दिशा देते हैं। ऐसे साहित्य साधकों के प्रति हमारा क्या कर्त्तव्य है, बहन डा० कंचनलता जी के शब्दों :— 'साहित्य सृजन के क्षेत्र में, सच्चे अर्थों में, आज वे ही काम कर रहे हैं जो आज के शोरगुल से दूर हैं, प्रशंसा-अप्रशंसा के प्रति जो उदासीन हैं। जिनकी अन्तरात्मा में घुटन है, सीलन है और है निरन्तर संघर्ष करने की अक्षुण्ण क्षमता जो अपनी अनुभूतियों को सहज पेश करने में सक्षम हैं। वस्तुत इस प्रकार के प्रयास को प्रोत्साहित कर हमें हिन्दी की इस अबाध गति को सहज प्रवाह में बहने देना चाहिये, जो कल के मूल्यांकन के लिए छटपटा रही है।'

वस्तुतः समुचित मूल्यांकन एवं संयमित प्रोत्साहन के अभाव में बहुतेरी प्रतिभायें काल के दुर्भेद स्याह-पट के अन्दर रह जाती हैं। सजग, सुधि सजग को उनकी प्रस्तुति के लिए सत्प्रयत्न करना चाहिए।

श्री बाबूराम जी के साहित्यिक अवदान का साहित्य जगत आभारी रहेगा, हमारा यह विश्वास है।

—प्रो० रामबुझावन सिंह
हिन्दी विभाग,
पटना विश्वविद्यालय

इसमें :—

पृष्ठभूमि

चाणक्य का संकल्प पूरा हो चुका था। मगध के प्रसिद्ध नन्दवंश के ध्वंसावशेष पर सम्राट चन्द्रगुप्त की विजय-कीर्त्ति लहराने लगी थी। प्रधान अमात्य चाणक्य की कूटनीति के सामने तत्कालीन आर्यावर्त्त के शेष राजवंश घुटने टेक चुके थे। बिखरी शक्तियाँ सिमट कर पाटलीपुत्र के राजप्रासाद में प्रवेश कर चुकी थी। अचानक एक दिन चाणक्य प्रधान अमात्य के पद से त्यागपत्र देकर पाटलीपुत्र की वीथियों को पार कर अज्ञात दिशा की ओर चल दिया और अपने पीछे राक्षस नाम के एक व्यक्ति को विशाल मगध साम्राज्य के प्रधान अमात्य के पद पर छोड़ गया। राक्षस का असली नाम सुबुद्धि शर्मा था। अन्तिम नन्द के समय में वह अमात्य के पद पर था। तत्कालीन नन्द सम्राट के अन्तिम दिनों में एक हत्या करने के संदेह पर उसे सपरिवार आजीवन कारावास का दंड मिला। पूरे परिवार के लिये भोजन के रूप में एक सेर सत्तू और ढाई सेर जल राज्य की ओर से प्रत्येक दिन रात्रि के प्रथम पहर की समाप्ति पर मिलता था। कहा जाता है कि सुबुद्धि शर्मा के परिवार के अन्य सदस्य कारावास में ही मर गये और उन्हीं मृतकों की हड्डियों से सुरंग खोद कर सुबुद्धि शर्मा कारावास से निकल भागा। तब तक नन्दवंश का नाश हो चुका था। यही सुबुद्धि शर्मा बाद में राक्षस के नाम से चाणक्य के बाद मगध का प्रधान अमात्य बना और सम्राट चन्द्रगुप्त के राज्य-काल में यथेष्ठ नाम पैदा किया। एकांकी की घटनायें लेखक की अपनी कल्पना है। सुकेशी का नाम कल्पित है।

पाटलिपुत्र का राक्षस

नाटक के पात्र ।

(१) सुबुद्धि शर्मा—सम्राट् नन्द के समय में मगध साम्राज्य का अमात्य ।

(२) राक्षस —बाद में यही सुबुद्धि शर्मा राक्षस के नाम से चाणक्य के बाद मगध का प्रधान अमात्य हुआ ।

(३) सुकेशी —सुबुद्धि शर्मा की पत्नी

(४) पहलापुत्र —उम्र सात वर्ष

(५) दूसरा पुत्र—उम्र पाँच वर्ष

(६) तीसरा पुत्र—उम्र दो वर्ष के लगभग

(७) चाणक्य —मगध साम्राज्य का प्रधान अमात्य

(८) प्रहरी —मगध साम्राज्य का

प्रथम अंक

प्रथम दृश्य

[मंच पर गहरा भयोत्पादक अन्धकार व्याप्त है। अन्धकार को चीरता कई पदचाप दूर से समीप आते हैं। पास आने पर पदचाप बन्द हो जाते हैं और लौह कपाट खुलने का भीषण शब्द होता है।]

प्रहरी की आवाज—भीतर जाओ, महाराज नंद ने तुमलोगों का आजन्म कारा-वास का दंड दिया है और रहने के लिए यह बन्दीगृह। (लौह कपाट बन्द होने का शब्द। फिर प्रहरी का पदचाप समीप से दूर जाता है।)

"मंच पर व्याप्त अन्धेरा हटता है। बन्दीगृह के एक कक्ष में सुबुद्धि शर्मा, उसकी पत्नी सुकेशी गोद में बालक लिये दिखलायी पड़ती है। सुबुद्धि शर्मा के दो पुत्र जिनकी उम्र सात वर्ष और पाँच वर्ष की है, पास ही खड़े दिखलायी पड़ते हैं। गोद के बालक को छोड़ कर शेष की आँखों पर काली पट्टियाँ बँधी हैं। पट्टियाँ खोलते हैं। अपनी-अपनी दृष्टि स्थिर करते हैं।"

बड़ा पुत्र —हम कहाँ है माँ ?

सु० शर्मा —बन्दीगृह में बेटा।

मंझला पुत्र —यह क्या होता हैतात् ?

सुकेशी —अपराधियों के पड़ाव का ठौर।

मं० पुत्र —अपराधी किसे कहते है माँ ?

सु० शर्मा —किसी व्यक्ति विशेष के ऊपर लगाये गये आरोप साम्राज्य तथा सम्राट् की ओर से प्रमाणित कर दिये जाने पर वह व्यक्ति अपराधी घोषित कर दिया जाता है।

बड़ा पुत्र —हमलोगों के अपराध क्या हैं तात् ?

मं० पुत्र —तो हमलोग अपराधी हैं ?

सु० शर्मा —नहीं, हमने कोई अपराध नहीं किया है ?

मं० पुत्र —किन्तु माँ जो कहती है।

बड़ा पुत्र —तुम्हीं कहो माँ, हमने कौन-सा अपराध किया है ?

सुकेशी —हमारे ऊपर सामूहिक रूप से मगध के प्रधान अमात्य शकटार की हत्या करने का आरोप है।

सु० शर्मा —सर्वथा मिथ्या है। हमने किसी की हत्या नहीं की है।

मं० पुत्र —हमारे महालय के सरोवर से जो लाश आज सबेरे निकाली गई थी, वह मगध साम्राज्य के प्रधान अमात्य शकटार की थी माँ ?

सुकेशी —हाँ बेटा।

बड़ा पुत्र —हमारे महालय के सरोवर में वह लाश कहाँ से आयी माँ ?

सुकेशी —कौन जाने बेटा।

मं० पुत्र —हमारे महालय के सरोवर में महामात्य की लाश मिली, इसलिए हम अपराधी हैं माँ ?

सुकेशी —मगध सम्राट् नंद का अनुमान है कि प्रधान अमात्य बनने की लालच में तुम्हारे पिता ने षड्यंत्र रचकर महामंत्री शकटार

की हत्या कर दी और दोष से बचने के लिये उसकी लाश सरोवर में फेंक दी।

सु० शर्मा —कुछ क्षण पूर्व तक मैं भी मगध साम्राज्य का अमात्य था। महाराज नंद और इस विशाल मगध साम्राज्य की सेवा में था। सम्राट् का विश्वासपात्र और साम्राज्य का शुभ चिन्तक था......

सुकेशी —इससे क्या होता है, सम्राट् के पास ऐसे प्रमाण होंगे, जिससे आप पर लगाये गये आरोपों की पुष्टि होती होगी; तभी तो सम्राट् ने आपको तथा आपके पूरे परिवार को दोषी ठहराया है।

बड़ा पुत्र —माँ ठीक ही कहती है पिताजी। आपने महामात्य शकटार को अपने यहाँ प्रीतिभोज पर निमंत्रित किया था।

मं० पुत्र —गत रात महामात्य हमारे घर आने वाले थे।

सु० शर्मा —किन्तु वह नहीं आया।

सुकेशी —आया था। प्रहरी कह रहा था; उसने महामंत्री शकटार को हमारे महालय में प्रवेश करते देखा था। प्रहरी का कहना है; कि महामंत्री शकटार हमारे महालय के प्रवेश-द्वार पर अपने रथ से उतर गया और पैदल ही महालय की ओर चल दिया।

सु० शर्मा —किन्तु हमारे अतिथि-कक्ष में वह नहीं आया। रात्रि के पिछले पहर तक हम उसकी प्रतीक्षा करते रहे।

बड़ा पुत्र —फिर हमारे ऊपर सन्देह क्यों किया गया तात् ?

सुकेशी —प्रहरी की बातों से इतना तो प्रमाणित हो ही जाता है कि महामंत्री शकटार गत रात्रि हमारे घर आये थे।

मं० पुत्र —घर आने से ही कोई, किसी की हत्या तो नहीं कर देता माँ।

सुकेशी —सम्राट् नंद को ऐसा विश्वास है कि गत रात्रि भोजन में विष देकर हमलोगों ने महामंत्री की हत्या कर दी और दोष से बचने के लिए उसकी लाश सरोवर में फेंक दी।

सु० शर्मा —प्रहरी की बातों में मुझे सच्चाई प्रतीत होती है।

बड़ा पुत्र —कैसे तात ?

सुकेशी —फिर तो आपने महामंत्री की हत्या अवश्य की है।

सु० शर्मा —विश्वास करो सुकेशी, मैंने उसकी हत्या नहीं की है। साम्रट् का सन्देह निराधार है। शकटार ने अपनी हत्या आप की है।

मं० पुत्र —ऐसा भी कोई करता है तात्।

बड़ा पुत्र —सर्वथा नई बात कह रहे हैं तात्।

सुकेशी —ऐसा आप किस आधार पर कहते हैं देव।

सु० शर्मा —लोकलाज से बचने के लिए उसने आत्महत्या की है। अपने ज्येष्ठ पुत्र स्थूलभद्र के आचरणों से वह बहुत ही दुखी था। एक वारांगना उसके घर की कुलवधु बन कर आनेवाली है, जो वह नहीं चाहता था।

सुकेशी —वारांगना कोशा और स्थूलभद्र के प्रेम की चर्चा तो पाटलिपुत्र के घर-घर में है। एक वारांगना किसी संभ्रान्त कुल की कुलवधु बने, कोई नहीं चाहेगा।

सु० शर्मा —लेकिन स्थूलभद्र ऐसा ही चाहता है। अनेक प्रकार से समझाने पर भी वह अपने हठ पर अड़ा हुआ है। पाटलिपुत्र

की नगरवधु कोशा को गृहबधु बना कर अपने साथ घर लिबा लाने के लिये वह तुला हुआ है ।

सुकेशी —सुना है, बारह वर्षों से वह कोशा के ही साथ रह रहा है और उस पर बारह लक्ष मुद्राएँ व्यय कर चुका है।

सु० शर्मा —तुमने यथार्थ ही सुना है। महामंत्री शकटार अपने पुत्र स्थूलभद्र के व्यवहारों से ऊब चुका था। लोक में उसकी प्रतिष्ठा घटती जा रही थी। पद-मर्यादा, प्रतिष्ठा और कुल की लाज की रक्षा करने में वह सर्वथा असमर्थ था। जब उसने कोई विकल्प नहीं देखा तो गत रात्रि हमारे महालय के सरोवर में डूब कर अपने प्राण दे दिये।

सुकेशी —मुझे भी आश्चर्य हो रहा था देव कि जो शकटार अन्य-अवसरों पर हमारे महालय की सीढ़ियों तक अपने रथ पर आता था, गत रात्रि महालय के प्रवेश-द्वार पर ही वह अपने रथ से क्यों उतर गया था।

मुझला पुत्र —भूख लगी है माँ ।

बड़ा पुत्र —मुझे भी लगी है माँ ।

सुकेशी —हम बन्दी हैं बेटे ।

मं० पुत्र —क्या बन्दी को भूख नहीं लगती माँ।

सु० शर्मा —लगती है बेटा, किन्तु बन्दी लाचार होता है।

बड़ा पुत्र —आज सबेरे से ही हमलोग उपवास पर है।

सुकेशी —जानती हूँ बेटा।

मु० पुत्र — फिर तो कोई व्यवस्था करो न माँ ?

सु० शर्मा —थोड़ी देर और ठहर जा। प्रहरी आता ही होगा।
[प्रहरी का पदचाप दूर से समीप आता है।]

बड़ा पुत्र —वह आ रहा है पिताजी।

[प्रहरी आता है। उसके एक हाथ में सत्तू की पोटली है और दूसरे में मिट्टी का जलपात्र।]

मं० पुत्र —हमारे लिये भोजन लाया है माँ।

सुकेशी —हां बेटा, ऐसा ही लगता है।

(प्रहरी सत्तू तथा जलपात्र कपाट के छिद्र से भीतर देता है।)

प्रहरी —भोजन है, एक सेर सत्तू और ढ़ाई सेर जल।
रात दिन में एक बार इसी समय मिला करेगा। सम्राट् की ऐसी ही आज्ञा है। (छिद्र बन्द कर प्रहरी जाता है।)

सु० शर्मा —सुना न देवी ? पाँच प्राणियों के लिये एक सेर सत्तू और ढ़ाई सेर जल ? रात-दिन में एक बार अर्द्ध रात्रि के समय मिला करेगा।

सुकेशी —हम बन्दी हैं देव, और बंदियों का अपना कुछ नहीं होता है।

सु० शर्मा —मानता हूँ देवी, किन्तु पर्याप्त आहार तो मिलना ही चाहिए। (सुकेशी सत्तु सान कर अपने पुत्रों को खिलाती है।)

मं० पुत्र — यह क्या है माँ ?

सु० शर्मा —सत्तू है।

बड़ा पुत्र —लेकिन हम तो इसका नाम भी नहीं जानते है।

सुकेशी —तब तुम मगध साम्राज्य के अमात्य सुबुद्धि शर्मा के पुत्र थे और अब एक बन्दी के पुत्र हो। तुम्हें यही ग्रहण करना होगा।

मं० पुत्र —यह तो तालु में सट गया मां मुँह चलाने में नहीं बन रहा है।

मुं० पुत्र —मुझसे भी नहीं चलेगा माँ। मेरी भूख मर गयी।

सु० शर्मा —(रो पड़ता है) अब तो हमें सत्तू ग्रहण करने का ही अभ्यास करना होगा बेटा। दिन भर के भूखे हो, थोड़ा और ग्रहण करो।

मं० पुत्र —आप नहीं ग्रहण करेंगे तात् ?

सुकेशी —हम भी ग्रहण करेंगे बेटा, तुम दोनों ग्रहण तो करो।

बड़ा पुत्र —बस माँ बस, अब रहने दो।

सु० शर्मा —भूखे रह गये तो रात में नींद नहीं आयेगी।

मं० पुत्र —आयेगी तात्, हम बहुत थके जो हैं।

सुकेशी —नहीं ग्रहण करना चाहते तो मुँह-हाथ धो लो और कक्ष के उस कोने में जाकर सो रहो।

(दोनों पुत्र मुँह-हाथ धोते है। कक्ष के एक कोने में जाकर लेटते हैं। एक क्षण मौन।

मं० पुत्र —नींद नहीं आ रही है माँ।

बड़ा पुत्र —पाषाण की कठोरता शरीर को कष्ट देते हैं माँ।

सु० शर्मा —कल क्या थे भूल जा बेटे, नींद अपने-आप आ जायेगी।

(मौन)

सुकेशी —दिनभर के भूखे हैं देव, कुछ ग्रहण नहीं करेंगे ?

सु० शर्मा —इच्छा नहीं है देवी।

सुकेशी —फिर तो ——

सु० शर्मा —समझ गया। तैयार करो।
(मंच पर अन्धेरा होता है। रात्रि को निस्तब्धता भयंकर प्रतीत होती है। संगीत। एक क्षण बाद ।)

सुकेशी —सो गये देव !

सु०शर्मा —नहीं देवी, नींद नहीं आ रही है।

सु० केशी —हम कहाँ हैं देव ?

सु० शर्मा —बन्दीगृह में ।

सुकेशी —यह बन्दीगृह कहाँ है !

सु० शर्मा —कह सकना कठिन है ।

सुकेशी —मुझे जैसी स्त्री के लिये कहना कठिन हो सकता है, किन्तु मगध अमात्य सुबुद्धि शर्मा के लिये यह बतलाना कठिन नहीं है ।

सु० शर्मा —मानता हूँ देवा । यहाँ आते समय हमारी आँखों पर पट्टियाँ बँधी थी और हमें बहुत घुमा फिरा कर यहाँ लाया गया है ।

सुकेशी —इतनी बात तो मैं भी समझती हूँ, फिर भी अनुमान ता आप लगा ही सकते हैं। (मौन)

सु० शर्मा —(कुछ क्षण बाद) सो गयी देवी ?

सुकेशी —नहीं देव।

सु० शर्मा —फिर क्या सोच रही हो ?

सुकेशी —राजधानी से दूर पूरब-उत्तर की दिशा में स्थित किसा दुर्ग में हम बन्दी हैं ।

सु० शर्मा —तुमने कैसे अनुमान लगाया।

सुकेशी —सूर्य दाक्षिपायन हैं, हमें जब यहाँ लाया जा रहा था, सूर्य की किरणें हमारे पीठ पर पड़ रही थी।

सु० शर्मा —मान गया, तुम्हें तो गुप्तचर विभाग में होना चाहिए था।

सुकेशी —कक्ष के उतरी वातायन से रुक-रुक कर जो हवा आती है, वह जल की नमी लिये हुए होती है।

सु० शर्मा —(**वातायन के पास जाता है और आहट लेता है।**) तुम ठीक कहती है सुकेशी गंगानदी के किनारे किसी दुर्ग में हम रखे गये हैं। मल्लाहों की मटियाली धुनें और चप्पुओं के छप-छप शब्द कभी मन्द और कभी तीव्र सुनाई पड़ते हैं।

सुकेशी —अब तो अनुमान कीजिए हम कहां है ?

(**दोनों मौन रहते हैं**)

सु० शर्मा —मैं तो कुछ और ही सोच रहा हूँ देवी।

सुकेशी —वह क्या देव ?

सु० शर्मा —महाराज नद से इस अन्याय का प्रतिशोध लेने के लिए हमें जीवित रहना है।

सुकेशी —यथार्थ है देव।

सु० शर्मा —किन्तु हमारे जीवित रहने के साधन बहुत सीमित हैं। मगध सम्राट् नंद हमें भूख से तड़प-तड़प कर मरते देखना चाहता है।

सुकेशी —अंधकारमय भविष्य के अँधेरे में टटोल कर हमें अपने मार्ग निर्धारित करने होंगे देव। यहाँ से बच कर निकल भागने की कोई युक्ति हो सकती है तो करें।

सु० शर्मा —सुबुद्धि शर्मा की बुद्धि काम नहीं कर रही है देवी।

सुकेशी —महाराज नंद से प्रतिशोध लेने के लिए तब तक हम में से कोई जीवित भी रहेगा देव।

सु० शर्मा किन्तु उस दिन तक हमें जीवित रहना होगा।

सु०केशी —यह असंभव है।

सू० शर्मा —संभव है देवी, तभी तो कहता हूँ।

सुकेशी —कैसे देव ?

सु० शर्मा —यदि हम अपनी संख्या घटा कर अपने सीमित आहार के अनुपात में कर ले तो।

सुकेशी —आप कहना क्या चाहते हैं ?

सु० शर्मा —अपनी सन्तान का मोह हमें त्यागना होगा।

सुकेशी —क्यों ?

सु० शर्मा —अपनी सन्तान को भूख और ध्यास से तड़प-तड़प कर मरते हम नहीं देख सकते।

सुकेशी —तो हम उनकी हत्या कर दें।

सु० शर्मा —हमारी परिस्थितियाँ हमें विवश कर रही है देवी। भावनाओं से ऊपर उठो और अपने कर्तव्य को पहिचानो।

सुकेशी० —क्या कह रहे हैं देव ?

सु० शर्मा —देवी समझती है, सुबुद्धि शर्मा की बुद्धि मारी गयी है। वह दुर्बुद्धि की बातें करता है। नहीं देवी, नहीं। उसकी बुद्धि ठीक है। कोमल भावनायें हमारा सत्यानाश कर देंगी। हमें तयार हो जाना चाहिये। (मौन)

सुकेशी —ऐसा करना जघन्य अपराध होगा देव।

सु० शर्मा —और उससे भी जघन्य होगा हम सबों का एक-एक कर घुट-घुट कर मर जाना। महाराज नंद से प्रतिशोध लेने की बातें हमारी मृत्यु के साथ ही मर जायेंगी।

सुकेशी —सो तो है देव।

सु० शर्मा —इसलिये तो कहता हूँ, उठो, साहस करो। दोनों गाढ़ी नींद में सो रहे हैं। बड़े का गला मैं दबा दूँगा और मंझले का तुम दबा देना।

सुकेशी —मैं उनकी माँ हूँ देव।

सु०शर्मा —इस समय से नहीं तुम किसी की माँ हे और नहीं मैं किसी का पिता हूँ। सुबुद्धि शर्मा अभी इसी क्षण से मर गया। जिसे तुम अपने सामने देख रही हो वह एक राक्षस है। संसार में अब वह राक्षस के ही नाम से जाना जायेगा।

(घरघराहट की आवाज)

[पर्दा गिरता है]

—०—

दूसरा दृश्य

मंच पर फैले गहरे अंधकार को चीरता किसी स्त्री के बिलख-बिलख कर रोने का स्वर सुनाई पड़ता है। अन्धकार धीरे- धीरे हटता है। कारवास के कक्ष में सुकेशी अपनी गोद में अपने मृत बालक का शव लिए रोती दिखलायी पड़ती है। पास ही भूमि पर सुबुद्धि शर्मा शोक- संतप्त बैठा है। सुकेशी मुर्छित होकर एक ओर लुढक जाती है। सुबुद्धि शर्मा उठता है और मृत बालक का शव सुकेशी की गोद से उठा कर कारावास के एक कोने में फेंक कर लौटता है। सुकेशी के पास बैठता है और उसका सिर अपनी जांघ पर रख कर चैतन्य करने का प्रयत्न करता है। :

सु० शर्मा —सुकेशी। (सुबुद्धि शर्मा की आंखोसे आंसू निकल कर मुर्छित सुकेशी के मुख पर गिरता है। सुकेशी चैतन्य होती है।

सुकेशी —देव ?

सु० शर्मा —हाँ देवी। आज मेरी आंखों भी रिक्त हो गयीं। स्नेह और ममता की थोड़ी- सी जमा पूँजी जो मेरे पास थी, वह आज चू गयी देवी।

सुकेशी —हम दोनों ही रिक्त हैं देव।

सु० शर्मा —हाँ देवी : हम टूट चुके हैं।

सुकेशी —तो देव भी आज विचलित हो गये। धैर्य आज स्वयं अधैर्य हो गया।

सु०शर्मा —ऐसा ही समझो देवी। समय के प्रवाह में हमरा सब कुछ समाप्त हो गया, पद, मर्यादा, घन पुत्र आज कोई भी तो हमारे पास नहीं है। जीवन में इतने असहाय और रिक्त हम कभी नहीं थे ।

सुकेशी —विदित है, किन्तु पौरुष हार जाने से तो कार्य नहीं होगा देव। दुर्भाग्य समझ कर शान्त रह जाने से तो हमारा शेष जीवन इस बंदीगृह में ही समाप्त हो जायेगा।

सु०शर्मा —सम्राट् नंद का प्रिय पात्र और मगध अमात्य सुबुद्धि शर्मा को ऐसे दिन भी देखने थे, कौन जानता था देवी। जिसकी मंत्रणा के बिना महराज नंद कोई कार्य नहीं करता था वही सुबुद्धि शर्मा इस कारावास में बन्दी जीवन से निराश अपनी अंतिम घड़ियाँ गिन रहा है। विधि का इतना क्रूर प्रहार—— (रोता है, किन्तु आँसू नहीं निकलते हैं।)

सुकेशी —मगध अमात्य सुबुद्धि शर्मा इतने दुर्बल चित्त हैं यह मैंने पहली बार जाना।

सु० शर्मा —सुकेशी ?

सुकेशी —जिस सुबुद्धि शर्मा की सूझ बूझ की राज्य में इतनी चर्चा थी, उस सुबुद्धि शर्मा के मुख से कायरता की बातें शोभा नहीं देती। पौरुष के अंतिम सांस तक आपको परिस्थितियों से लड़ना है देव।

सु० शर्मा —एक माँ की व्यथा मैं भली प्रकार समझता हूँ देवी, किन्तु लाचारियों के सन्मुख हम विवश हैं।

सु० केशी —देव, सुबुद्धि शर्मा की पत्नी बनकर आपके घर आयी थी और आज भी मैं उस सुबुद्धि शर्मा की पत्नी ही मात्र हूँ। बीच में माँ की अवस्था तो एक संयोग था। अतीत, अतीत है देव, वह लौट नहीं सकता।

सु० शर्मा —मानता हूँ देवी।

सु केशी —हमारा प्रत्येक बीता हुआ दिन अतीत में बदलता जा रहा है और प्रत्येक बीते दिनों के साथ हमारी शक्ति क्षीण होती जा रही है देव।

सु० शर्मा —फिर क्या करूँ ? परिस्थितियों से उतना भयभीत मैं कभी नहीं हुआ था।

सकेशी —अब भी समय है, यहाँ से भाग निकलने का कोई मार्ग ढूँढ़िये। (सुबुद्धि शर्मा की दृष्टि सामने की दीवार से सट कर जाती हुई चींटियों की पंक्ति पर पड़ती है। वह ध्यान-पूर्वक देखता है और अचानक मौन देखकर सुकेशी उठ कर बैठती है। कभी सुबुद्धि शर्मा को देखती है और कभी उस ओर जिस ओर सुबुद्धि शर्मा एकटक देख रहा है।)

सु० शर्मा —(प्रसन्नता के स्वर में) मिल गया देवी। मिल गया।

सु केशी क्या ?

स० शर्मा —भागने का मार्ग।

सुकेशी —तो झटपट कीजिए, बिलम्ब होने पर प्रहरी आ जायेगा।

स० शर्मा —आ जाने दो।

सुकेशी —फिर हम भाग कैसे सकेंगे ?

स० शर्मा —सरलता से।

सुकेशी —देव क्या कह रहे हैं ? होश में तो हैं; कहाँ है मार्ग ?

स० शर्मा —सामने देखो।

सुकेशी —देख तो रही हूँ, वहाँ कुछ नहीं है।

स० शर्मा —चींटियों की वह पंक्ति देख रही हो देवी। सामने के उस चौकोर पत्थर के किनारे से निकल कर दीवार के किनारे-किनारे उस ओर जा रही है।

सुकेशी —वह तो देखा रही हूँ।

स० शर्मा —उस चौकोर पत्थर के नीचे सुरंग का द्वार है।

सु० केशी —यह आपने कैसे जाना देव ?

स०शर्मा —पत्थर के चौकोर टुकड़े को गाढ़े गारे से जोड़ कर यह कक्ष निर्मित किया गया है। ऐसे गाढ़े गारे में चींटियाँ छिद्र नहीं बना सकतीं। उस चौकोर टुकड़े के चारों ओर ठोस गारा नहीं लगा हुआ है, तभी तो चींटियाँ छिद्र बना कर निकल सकी हैं। पत्थर का वह चौकोर टुकड़ा सुरंग के मुँह पर लगा हुआ है। सुरंग का मार्ग दस हाथ तक मिट्टी से भरा हुआ है।

सुकेशी —हो सकता है देव, चीटियों के पैरों में गीली मिट्टी लगी है। देखिए न, जिस ओर जा रही हैं—मिट्टी की एक मद्धिम रेखा अपने पैरों से बनाती जाती हैं।

सु० शर्मा —मेरा अनुमान शत-प्रतिशत सही है देवी।

सुकेशी —फिर तो उस चौकोर पत्थर को हटाने का उपाय हो तो करें।

सु० शर्मा —मुझे तो ऐसा कुछ दिखलायी नहीं पड़ता।

सुकेशी —फिर तो हम भाग चुके। गहन अन्धकार में प्रकाश की जो एक क्षीण रेखा दिखलायी पड़ी थी, वह मिट जाना चाहती है।

सु०शर्मा —ऐसा नहीं होगा देवी। (उठ कर एक ओर जाता है और मृत बालकों की हड्डियों लेकर लौटता है।)

सुकेशी —इन हड्डियों का क्या होगा देव।

सु० शर्मा —इन्हें हड्डियाँ न कहो देवी, बज्र कहो बज्र। देवताओं ने एक बार दधीचि की हड्डियों का बज्र बना दानवों का संहार किया था। आज सुबुद्धि शर्मा अपने पुत्रों की हड्डियों के बज्र से नंद वंश का नाश करेगा। संहार के इस यज्ञ में तुम्हारा सहयोग वांछनीय है देवी। उठाओ अपने पुत्रों की हड्डियाँ ओर जुट जाओ इस पुनीत यज्ञ में।

सुकेशी —क्या करना होगा देव।

सु० शर्मा —उस चौकोर पत्थर के टुकड़े के चारों ओर लगे गारे को इन हड्डियों से रगड़ कर छुड़ाना होगा। (दोनों काम में जुटते हैं। रगड़ने की आवाज आती है। मंच पर अंधेरा फैलता है। एक क्षण बाद प्रकाश उभरता है। दोनों उस

टुकड़े को हटाकर एक ओर रखते है। सुरंग में भरी मिट्टी दिखलायीं पड़ती है।)

सु० केशी —आपका अनुमान सही निकला देव। अब हम कुछ कर सकेंगे।

स० शर्मा —हाँ देवी। मैं सुरंग की मिट्टी खोदता हूँ और तुम उस मिट्टी को भूमि पर फैलाते जाना।

सु० केशी —ऐसा ही होगा देव। (दोनों अपने कार्य में व्यस्त हैं।

(पर्दा गिरता है।)

तीसरा दृश्य

[पर्दा उठने पर मंदिर के प्रवेश-द्वार के दोनों ओर यक्ष की मूर्त्तियाँ खड़ी दिखलायी पड़ती हैं। मंदिर के एक ओर एक विशाल वृक्ष है। द्वार के एक ओर खड़ी यक्ष की मूर्त्ति हिलने लगती है। सामने से चाणक्य पूजा करने के लिए आता दिखलायी पड़ता है। मूर्त्ति को हिलते देख कर उसके बढ़ते पैर थम जाते हैं। भयभीत वह उसी प्रकार खड़ा रहता है। मूर्त्ति अब जोर से हिलती है। चाणक्य साव-धान होता है। वहाँ से हट कर पेड़ की ओट में छिप जाता है। मूर्त्ति हिलती रहती है और अचानक मुँह के बल गिरती है। मूर्त्ति के गिरने से जो स्थान रिक्त हुआ है वह एक द्वार जैसा लगता है। एक क्षण निस्तब्धता छायी रहती है। किसी प्रकार का कोई आहट नहीं। एक क्षण बाद मूर्त्ति के स्थान पर एक दूसरी मूर्त्ति को खड़ी देख चाणक्य स्तंभित रह जाता है। इस मूर्त्ति के बाल बढ़े हुए और रुखे सूखे हैं। नाखून बहुत बढ़े हैं। मूर्त्ति के शरीर पर वस्त्र नहीं है। कँधे पर हड्डी लिये है। मूर्त्ति सब मिलाकर बहुत डराबनी लगती है। एक क्षण वह मूर्त्ति द्वार पर खड़ी रहती है पुनः चौकन्ने होकर धीरे-धीरे सामने की ओर

बढ़ती है। मूर्त्ति अब वृक्ष के पास आ गयी है। वृक्ष की ओट से चाणक्य निकलता है।]

चाणक्य —कौन ? सुबुद्धि शर्मा ? (मूर्त्ति के बढ़ते पैर रुक जाते हैं। चाणक्य मूर्त्ति के सामने आकर खड़ा होता है। सुबुद्धि शर्मा एकटक चाणक्य को देखता है।)

सुबुद्धि शर्मा —तो तुमने अंततः मुझे पहिचान ही लिया। इस वेष में भी ? तुम्हारी आँखें बड़ी तेज हैं चाणक्य। उनसे बच निकलना बहुत कठिन है।

चाणक्य —पहिचानता कैसे नहीं ? मगध सम्राट् महानंद के कुशल अमात्य सुबुद्धि शर्मा को यदि चाणक्य भूल जाय तो फिर उस सुबुद्धि शर्मा को कौन याद रखेगा ? सर्वप्रथम मुझे उस दिन मिले थे, जब मैं कुश की जड़ों में मट्ठा डाल रहा था। दूसरी बार तुम उस दिन मिले, जब सम्राट् महानंद के महालय से मुझे अपमानित कर निकाला जा रहा था। शिखा खोल कर जब मैंने नंदवंश के महानाश करने की शपथ ली थी, तुम मेरे सामने खड़े थे। तुम्हारी ही प्रेरणा से मैं अलेक्जेंडर से मिलने गया था। उस दिन मेरे मार्ग-व्यय की व्यवस्था भी तुमने ही की थी।

सु० शर्मा —तो तुम्हारी वह शिखा इस समय भी खुली ही हुई है ?

चाणक्य —नहीं, यह देखो बँधी है।

सु० शर्मा —मेरे सारे प्रयत्न निकल गये। प्रतिशोध लेने की भावना की जिस शिला पर खड़ा था, उसे तुमने तड़ डाला

चाणक्य। अब खड़ा भी नहीं रह सकता। मुझे सहारा दो। (हड्डी उसके हाथ से छूट कर गिरती है और टूट जाती है। सु० शर्मा चाणक्य के कंधों का सहारा लेता है।)

चाणक्य —तुम जीवित हो, यह मुझे विदित था, किन्तु कहाँ हो? इसका पता प्रयत्न करने पर भी मैं नहीं लगा सका। तुम्हें इस दशा में देख कर मुझे अत्यधिक क्लेश हुआ है।

सु० शर्मा —जिस सुबुद्धि शर्मा को तुम जानते थे—वह तो कभी का मर चुका है चाणक्य। जिसको तुम सामने देख रहे हो, उसका नाम राक्षस है। राक्षस।

चाणक्य — मैंने समझा नहीं।

सु० शर्मा —और तुम्हें समझ कर अपने घावों को हरा करना मैं नहीं चाहता चाणक्य। अब तक मेरे साथ जो कुछ बीता है— वह तो केवल मैं ही जानता हूँ। (रुक कर) प्रधान अमात्य शकटार की हत्या करने के संदेह पर मुझे सपरिवार बन्दीगृह में डाल दिया गया था। पूरे परिवार के भोजन के लिये एक सेर सत्तू और ढाई सेर पानी मिलता था। भला कहो, किसी को इस प्रकार भी तड़पा-तड़पा कर मारा जाता है।

चाणक्य —फिर क्या हुआ ?

सु० शर्मा —होना क्या था ? नंद से प्रतिशोध लेने के लिये जीवित रहना था सो जीबित हूँ। अपने इन हाथों से अपने तीन-

तीन पुत्रों को मैंने गला दबा कर मार डाला है ! ऐसा सुबुद्धि शर्मा नहीं कर सकता था चाणक्य, कोई राक्षस ही कर सकता था। अपने मृत पुत्रों की हड्डियाँ से सुरंग की द्वार खोद कर यहाँ तक आया हूँ। आदमी कितना स्वार्थी हो सकता है यह मैंने बन्दीगृह में जाना।

चाणक्य —तो सुबुद्धि शर्मा को मैं भी राक्षस ही कह कर पुकारूँ!

राक्षस —हाँ ! लोक में अब इसी नाम से मेरी प्रसिद्धि होगी। राक्षस कहला कर ही मैं जीवित रह सकूँगा। सुबुद्धि शर्मा बन कर तो मैं एक क्षण भी जीवित नहीं रह सकता ।

चाणक्य —ठीक है, पर तुम्हे एक उपकार करना होगा !

सु० शर्मा —वह क्या !

चाणक्य —मगध साम्राज्य के प्रधान अमात्य का पद अब तुम्हें संभालना होगा। सम्राट् चंद्रगुप्त तथा इस विशाल मगध साम्राज्य को तुम्हारे जैसे अमात्य की अत्यधिक आवश्यकता है। साम्राज्य के कामों से मैं विरक्त होना चाहता हूँ।

सु० शर्मा —किसलिये;

चाणक्य —एक तो साम्राज्य के कामों से मेरा जी ऊब गया है और दूसरे अर्थशास्त्र पर एक ग्रन्थ लिखना चाहता हूं वह एकान्त में ही संभव है।

सु० शर्मा —अब तक क्यों नहीं गये ?

चाणक्य —तुम जो यहीं मिले थे। तुम्हारी बुद्धि और चंद्रगुप्त की भुजाओं पर मुझे पूरा भरोसा है। जिस मगध साम्राज्य की नींव मैंने डाली है, तुम उसे और भी सुदृढ़ करोगे, ऐसा मेरा विश्वास है। यहीं ठहरो, पूजा समाप्त कर मैं शीघ्र आता हूँ।

सु० शर्मा —किन्तु, मैं अकेला नहीं हूँ चाणक्य।

चाण० —तो और कौन है ?

सु० शर्मा —मेरे पत्नी सुकेशी।

चाणक्य —वह कहां है ?

सु० शर्मा —सुरंग में।

चाणक्य —बाहर क्यों नहीं अती ?

सु० शर्मा —लज्जा ढांकने के लिये कोई वस्त्र उसके पास नहीं है, है इसलिये।

चाणक्य —यह लो।

(अपनी चादर सु० शर्मा को देता है। चादर लेकर सु० शर्मा सुरंग में जाता है और चाणक्य मंदिर में।)

पर्दा गिरता है।

समाप्त

जब वल्लभ भाई ने मिट्टी से मर्द बनाये

पात्र

□

वृक्ष

यात्री

पटवारी

किसान

गाँव का पटेल

स्वयं-सेवक

एक वृद्ध किसान पत्नी

कुछ अन्य स्त्रियाँ

प्रथम दृश्य

पृष्ठभूमि से—

ताल को सोच न भ्रात को सोच, न सोच तिया परलोक तरे को।
गाँव को सोच न ठाँव को सोच, न खान को सोच न सोच घरे को॥
संग को सोच न अंग को सोच, है सोच कबौं न किए को करे को।
अंग्रेज के चंगुल में फँसि पीड़ित, सोच कृषि जन हाथ धरे को॥
शत बार करौं प्रणाम हिय ते, नरो में नरोत्तम वीर पटेल को।
हाथ दिये मिट्टी बन मर्द, है आये-गयो संग्राम लरै को॥

(पर्दा उठता है और एक विशाल पीपल के वृक्ष के नीचे, गीत से प्रभावित होता एक यात्री बैठा दिखलायी पड़ता है।)

यात्री— (आश्चर्य से) यह किसकी आवाज है ? कहाँ से आ रही है ? कौन गा रहा है ? जनपद तो यहाँ से दूर है। इस सुनसान घाटी में उस वीर पुरुष को शत-शत प्रणाम कौन कर रहा है ?

वृक्ष —मैं कर रहा हूँ।

यात्री —क्यों ?

वृक्ष —क्योंकि वह वन्दनीय है। शत बार प्रणाम के योग्य है।

यात्री —तुम कौन हो ?

वृक्ष —जिसकी छाया में तुम बैठे हो।

यात्री —वृक्ष ! तो यह गीत तुम गा रहे थे ?

वृक्ष —हाँ, मैं ही गा रहा था। सन् १९२८ में वारडोली की धरती पर प्रथम बार जब उसके पद-चिह्न बने थे मेरे शरीर की टहनियों पर खड़ी पत्तियाँ उस दिन उस वीर पुंगव के स्वागत में झुक गयी थीं। (मौन) जानते हो .परदेशी; उस घटना के आज पूरे पचास वर्ष बीत गये।

यात्री —उस समय तो मेरा जन्म भी नहीं हुआ था। होश संभालने पर किताबों के पृष्ठों पर इतना अवश्य पढ़ा था कि यह वारडोली की ही धरती थी जिसने देश को सरदार पटेल जैसा राष्ट्रनेता प्रदान किया था।

वृक्ष —लेकिन वारडोली आने के पूर्व तो वह केवल वल्लभ भाई पटेल था। उसे सरदार बनाने का गौरव इस वारडोली को है।

यात्री —मैं बहुत दूर से पैदल चल कर आया हूँ; मुझे उस वारडोली का दर्शन नहीं कराओगे, वृक्ष !

वृक्ष —अपनी आँखों देखी उस कहानी को कहने के लिए मैं भी वर्षों से किसी की प्रतीक्षा कर रहा था। अपने मन का बोझ हल्का करने के लिए छटपटा रहा था। तुम्हें पाकर मेरा चित्त प्रसन्न हुआ है। आओ; मेरे साथ आओ —

(यात्री उठकर पृष्ठभूमि की ओर जाता है)

पृष्ठभूमि —**(वृक्ष की आवाज में)** इधर आओ; यह देखो; सूरत का यह छोटा किन्तु रमणीय प्रदेश ताप्ती, मिठोला तथा पूर्णा नदियों से घिरा हुआ। कोसों तक हरे-भरे लहलहाते खेत, आम के घने बागीचे, बड़े-बड़े वृक्षों की टेढ़ी-मेढ़ी कतारें—सब मिलाकर

गुजरात उद्यान की सुन्दर वाटिका का खिला हुआ गुलाब है—यह वारडोली।

यह वही वारडोली है, जिसने हमें अनुभव करा दिया है कि ग्राम-संगठन के बल पर असम्भव भी सम्भव हो सकता है। बारडोली जिसने सत्य, संगठन एवं दृढ़ता का संसार के सामने नवीन आदर्श रखा। वारडोली जिसने यह सिद्ध कर दिया कि कोई देश या जाति अपने मिथ्या भय को त्यागकर, अधिकारों की प्राप्ति के लिए यदि सन्नद्ध हो जाये, तो विजय निश्चित है।

कुर्मी और अन्य पिछड़ी जातियों की वारडोली, जिसका नाम भी सन् १९२८ के पूर्व कोई नहीं जानता था—अचानक १९२८ में उन्हीं कुर्मी और पिछड़ी जातियों के बल पर इतना बड़ा आन्दोलन खड़ा किया गया, जिसकी मिसाल संसार के इतिहास में दुर्लभ है। वारडोली; जिसने राजसत्ता को फूँक मारकर उड़ा दिया। वारडोली, जिसने इतिहास को लौहपुरुष, आधुनिक भारत का निर्माता और राजनीति का चाणक्य, सरदार वल्लभ भाई पटेल प्रदान किया।

सन् १९२८ के आसपास तत्कालीन गोरी सरकार ने वार-डोली की लगान २२ प्रतिशत बढ़ा दी। बढ़े दर पर कर वसूली के लिए कठोरता बरती जाने लगी। गरीब जनता तिल-मिला उठी। चारों ओर तहलका मच गया। किसानों पर अत्याचार होने लगे। वारडोली की धरती कराह उठी। बढ़े कर के प्रतिरोध में जब बारडोली की जनता की सारी कागजी कारंवाई निष्फल हो गयी, तब बारडोली की मिट्टी के सपूतों ने

करबन्दी सत्याग्रह का आह्वान किया। वारडोली की गरीब किन्तु दृढ़ जनता संगठित होने लगी। सत्याग्रह की तैयारियाँ होने लगीं। सेनायें सजने लगीं। सत्याग्रह का शंखनाद दूर-दूर तक सुनाई पड़ने लगा। और तब वारडोली की उस भोली, निरीह जनता के आग्रह पर इतिहास प्रसिद्ध उस करबन्दी सत्याग्रह का नेतृत्व करने, वल्लभ भाई पटेल, सन् १९२८ की फरवरी की एक शाम को, वारडोली की धरती पर प्रथम बार पधारे। वल्लभ भाई के वारडोली आगमन का समाचार तूफान की तरह फैल गया। बारडोली की दिशायें चहचहा उठीं और सुन्दरियों के कोकिल कंठों से यह स्वर फूट पड़ा :—

सखी रे आजे हे प्रभु जी पधारिया
मारे उग्या छे सोनाना सूर रे
वल्लभ भाई घर आविया।
मारा जन्म मरण घटी जाय रे; वल्लभ··
लाइय ब्रह्माते नंद नू सुखरे—वल्लभ··
जेणे तत्तवयासीनो लीधो ल्हाय रे—वल्लभ··
धरो हरि गुरु सैतो नुं ध्यान रे—वल्लभ··
मुको माया के दो मोह मद रे—वल्लभ··
मारा अन्तर माँ एक रस थाय रे—वल्लभ··
मारू क्षेल गयूँ देह अभिमान रे—वल्लभ··
जोई अन्तर नामेल घटी जाय रे—वल्लभ··
जेना वेद गीता या गया गान रे—वल्लभ··

माया रंग पतंग जथे उड़ी रे—वल्लभ··
थाम आनन्द ब्रह्मस्वरूप रे—वल्लभ··
ते अलग रहेश राहु कोई रे—वल्लभ
वाणी पहेला बांधोनी नेम पाल रे—वल्लभ
ह्वे करवा नं न थी रहयु कोई रे—वल्लभ···
अपना देहीना दुख न की दमयाँ रे—वल्लभ—

(पर्दा उठता है और वल्लभाई पटेल के स्वागत में गीत गान करती सुन्दरियाँ एक ओर से प्रवेश करती हैं। गीत समाप्ति के बाद दूसरी ओर जाती हैं)

—(रुधे कंठ से) मुझे अब भी अच्छी तरह स्मरण है; भक्ति में सराबोर यह गीत सुन कर वल्लभ भाई पटेल की आँखों में प्रेमाश्रु उभर आये थे। वे भाव-विह्वल हो उठे थे। गद्‌गद् कंठ से उन बहनों से उन्होंने कहा था; 'मैं तुम्हारा भाई हूँ। तुम्हारा आशीर्वाद लेने आया हूँ।'

—(पृष्ठभूमि) इस पिछड़े इलाके की पिछड़ी जनता में आत्मबल और आत्म-विश्वास पैदा करने में वल्लभ भाई को कितनी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा होगा, कितना कठोर परिश्रम करना पड़ा होगा, सोचकर आश्चर्य होता है। सचमुच वल्लभ भाई पटेल इतिहास का अद्भुत पुरुष था।

—उन दिनों वल्लभ भाई को क्या सब करना पड़ा था, वह मैं जानता हूँ परदेशी। कंधे पर सत्याग्रह का झंडा लिये वल्लभ भाई गाँव-गाँव घूमने लगे। वारडोली का शायद ही कोई गाँव ऐसा बचा हो, जहाँ वे नहीं गये हों। उन किसानों के दिलों में ढाढ़स

बँधाने के लिये वल्लभ भाई हर जगह पहुँचने लगे। सभायें होने लगीं और उन ग्रामीण सभाओं में वल्लभ भाई की ओजभरी वाणी सुनाई पड़ने लगी :—

''मैं आपको यह चेतावनी दे रहा हूँ कि अब एक क्षण भी आमोद-प्रमोद में बैठने का समय नहीं है। वारडोली की कीर्त्ति सारे भूमंडल में फैल रही है। अब तो हमें मर मिटना है या पूर्ण सुखी होना है। हमारे गिर जाने में देश की मानहानि है। हमारे डटे रहने में ही बेड़ा पार है। हमें वारडोली का डंका देश-देशान्तर में बजाना है।

आप ईर्ष्या मत कीजिये। एक को बिगड़ते हुए देखकर जब दूसरा मनुष्य हँसता है तो ऐसे देश का कभी भला नहीं होगा। अस्तु, युद्ध की घोषणा हो चुकी है। प्रत्येक गाँव को सेना की छावनी समझिये।

वृक्ष की आवाज—और इस प्रकार वह अद्भुत पुरुष गाँव-गाँव दौड़ने लगा। सत्याग्रह की आग फैलने लगी। गाँव-गाँव जाग उठा। वारडोली का सारा वायुमंडल कुछ ही दिनों में कुछ से कुछ हो गया। इतना ही नहीं, वल्लभ भाई की ललकार सुनकर देश के अन्य भागों से सत्याग्रही वारडोली पहुँचने लगे। कवियों की ओज-भरी वाणी; 'विराट रूप हो किसान, स्वराज आज लो किसान' वारडोली की गली-गली में गूँजने लगी। कविवर फूलचन्द जी के कंठ से कंठ मिलाकर गाँववाले गाने लगे; 'डंका बाजै लड़वैया का शूर जाग-जाग रे। कायर भाग-भाग रे।' वारडोली के वीरों

का एक विचित्र मेला लग गया। यह भगवती पुण्यभूमि विजय-घोष में डूब गयी। सर्वत्र आजादी के झंडे फहराने लगे।

वल्लभ भाई अपने जोशीले भाषणों द्वारा बारडोली के किसानों में वीरता का संचार करने लगे। इस चमत्कार का वर्णन करते हुए बम्बई के एक नेता ने बम्बई की एक सार्वजनिक सभा में उन्हें सरदार कहकर पुकारा। गाँधीजी को उनका नाम पसंद आया। तब से उनका नाम सरदार प्रसिद्ध हुआ। एक बार एक पटवारी ने एक किसान को पकड़ लिया :—

(पर्दा उठता है और किसान को डाँटता-फटकारता पटवारी दिखलायी पड़ता है)

पटवारी— भले आदमी, तुम लगान क्यों नहीं देते ?

किसान— घटा दो तो दूँगा।

पटवारी— और नहीं घटाया गया तो ?

किसान— लड़ूँगा। अपने हक के लिये आखरी दम तक लड़ूँगा।

पटवारी— अरे चल, चल ! तुम्हारे जैसे लड़वैये बहुत देखे हैं। सरकार तुम्हें उजाड़ कर रख देगी।

किसान— चाहे जितनी आपदाएँ आएँ, हमें कितने ही कष्ट झेलने पड़े, किन्तु हम पैर पीछे नहीं हटायेंगे। यह लड़ाई हमारे सम्मान का प्रश्न है। सरकार चाहे जो करे, किन्तु हम उसे एक पैसा भी उठा कर नहीं देंगे।

पटवारी— किसी की रटी हुई बातों को दुहराने से कब तक काम चलेगा। तुम्हारे अपने पास तो कुछ है नहीं।

किसान— तुम कल की बातें कह रहे हो पटवारी जी; आज की नहीं। हमें निरा ढोल समझना सरकार की भूल है, तुम्हारी भूल है। हमारी एकता दृढ़ है। यह लड़ाई हम अपने भीतर के साहस से लड़ रहे हैं।

पटवारी— केवल बाहरी कोलाहल से कुछ नहीं होगा भैया।

किसान— तुम भ्रम में हो पटवारी। हमारे नेता बल्लभ भाई ने बारडोली के वायुमंडल को बदल दिया है। हमारी प्रतिष्ठा को प्रत्येक गाँव से जोड़ दिया है। एक ऐसा वातावरण तैयार कर दिया है, जिसमें स्वराज की सुगन्ध फैल रही है। प्रत्येक किसान के मुख-मंडल पर सरकार के साथ लड़ने का दृढ़ निश्चय प्रतिभासित हो रहा है। तुम नहीं देखते ?

पटवारी— लेकिन कहीं फूट पड़ गयी तो ?

किसान— ऐसा नहीं होगा।

पटवारी— भले आदमी फूट पड़ने पर जब प्रत्येक किसान लगान दे ही देगा तो कुछ पहले ही क्यों नहीं दे देते।

किसान— ऐसी बातें मुँह से नहीं निकालो पटवारी जी, अन्यथा बहुत बुरा होगा। सारे जिले के लोग लगान भले ही दे दें, किन्तु मैं थूक कर नहीं चाटता।

पटवारी— लेकिन मेरे सामने भले ही ना कह दो किन्तु बड़े अधिकारियों के सामने तुम अपना थूक अवश्य चाटोगे।

किसान— तुम देख लेना, ऐसा मैं कभी नहीं करूँगा। बड़े अधिकारी जब थे; तब थे। अब तो वल्लभ भाई हमारे नेता हैं। उनकी जैसी

आज्ञा होगी, हम वैसा ही करेंगे। बोलो वल्लभ भाई पटेल की जय। (जय कहता हुआ एक ओर जाता है। पटवारी दांत पीसता खड़ा रहता है। एक ओर से गांव का पटेल आता है)

पटवारी— क्यों पटेल। लगान क्यों नहीं जमा कराते ?

पटेल— कोई देता ही नहीं पटवारी। गांव के लोगों ने लगान नहीं देने का निश्चय कर लिया है।

पटवारी— तहसीलदार कह रहे थे, सभी पटेलों ने अपना-अपना लगान जमा कर दिया है, ऐक तुम्हीं हो जिसने एक पैसा भी जमा नहीं किया है।

पटेल— ऐसा करने पर मुझे लोग अपनी बिरादरी से काट देंगे। मैं कुछ नहीं दे सकता।

पटवारी— तो अपनी पटेली छोड़ दो।

पटेल— छोड़ दूंगा।

पटवारी— अपना त्याग-पत्र दो।

पटेल— वही करने मैं तहसीलदार के पास जा रहा हूं।

पटवारी— तो चलो। (दोनों जाते हैं)

पृष्ठभूमि से—(वृक्ष की अवाज) वारडोली की कीर्तिगाथा से सौन्दर्य की प्रतिमायें भी जाग उठी थीं। उनका वह देश-अनुराग अकथनीय था। बालिकायें जय-जयकार करतीं। बहुएं हिल-मिलकर गीत गातीं। उनके संगीत में सत्याग्रह का संदेश होता। वारडोली के किसानों की स्त्रियां भी रण-शौर्य से भर गयी थीं। उनका निश्छल प्रेम, दर्शनीय और अनुकरणीय था। एक किसान की स्त्री एक

स्वयंसेवक से पूछ रही थी—(पर्दा उठता है और स्वयंसेवक से बातें करती बारडोली की एक वृद्धा किसान स्त्री दिखलायी पड़ती है)

स्त्री— भाई यह तो बतलाओ, इस लड़ाई में हम स्त्रियों पर कौन-कौन-सी विपत्तियाँ आयेंगी ?

स्वयंसेवक —पहले जप्ती होगी। सब सामान सरकार लूटकर ले जायेगी। हमारी भूमि छीन लेगी।

स्त्री— यह तो कोई बड़ी बात नहीं हुई।

स्वयंसेवक —हमें कृष्ण मन्दिर (जेल) जाना होगा।

स्त्री— यह तो कुछ कठिन बात है। पर जैसे हम घर रहती हैं, वैसी ही हम वहाँ भी रह लेंगी।

स्वयंसेवक —माता जी; आप भला जेल कैसे जायेंगी, जेल जाना कोई खेल थोड़े ही है। आप तो स्त्री हैं ?

स्त्री— जैसे तुम जेल जाओगे वैसे हम भी चली चलेंगी।

स्वयंसेवक —हम तो सरकार का नियम तोड़ेंगे, इसलिये जेल जायेंगे और तुम ?

स्त्री— अरे बेटा, जो कानून तुम तोड़ोगे वही कानून हम स्त्रियाँ भी तोड़ेंगी। जैसे पुरुष लोग करेंगे वैसे ही हम स्त्रियाँ भी करेंगी। यह यज्ञ है न बेटा, हमारे सहयोग के बिना भला यह कैसे पूरा होगा।

स्वयंसेवक —तुम धन्य हो माँ। तुम जैसी माताओं के रहते बारडोली कभी

नहीं झुकेगा। हम जीतेंगे। (झुककर स्त्री का पैर छूता है)
पर्दा उठता है।

वृक्ष की आवाज—इस प्रकार वारडोली का वह कर-बन्दी सत्याग्रह अक्टूबर १९२८ तक चलता रहा। अंत में तंग आकर तत्कालीन गोरी सरकार ने सरदार पटेल की शर्त्तों को मान लिया। सत्याग्रह वापस लिया गया। वारडोली की विजय हुई। वारडोली की इस विजय पर सारे भारत में प्रसन्नता छा गयी। इस प्रकार सरकार के प्रयत्नों से वारडोली का नाम विश्व इतिहास में अमर हो गया। खुशी और प्रसन्नता की इस बेला में कवि श्री नरसिंह राव ने यह पद पढ़ा—

अत्र योगेश्वरो गांधी वल्लभश्च धूर्धुरः।
तत्र श्री विजयो भूतिध्रुवा कीर्तिर्मतिर्मम।।

एक और मुनादी

पात्र

□

स्वर-१

स्वर-२

मि० चमचा

मि० काँटा

मिस सिकल

स्वर-३

स्त्री-स्वर

उद्घोषक

मुनादी देनेवाला

बूटा सिंह

शमशेर सिंह

प्रथम दृश्य

मंच पर गहरा अँधेरा है। रात्रि के गहन अंधकार में एक वृद्ध पुरुष के रोने का करुण स्वर सुनायी पड़ता है। एक पगध्वनि उसी दिशा में बढ़ती प्रतीत होती है, जिधर से रोने का स्वर आ रहा है।

स्वर १—(पग-ध्वनि बन्द) रात की इस मरी हुई खामोशी में, शासकों के इस सराय में कौन रो रहा है ? (पग-ध्वनि) तुम बा ऽ ऽ ऽ ऽ

स्वर-२—हाँ, तुम कौन हो ?

स्वर-१—नहीं पहचाना ?

स्वर-२—नहीं। तब मेरे पास चालीस करोड़ लोगों जितनी आँखें थीं और अब एक भी नहीं। इसलिए लाचारी है।

स्वर-१—तुम्हारा सबसे प्यारा भक्त …………

स्वर-२—समझ गया, यहाँ कैसे आना हुआ ?

स्वर-१—तुम्हारा रोना सुनकर। इस प्रकार क्यों रो रहे हो ?

स्वर-२—जानना चाहते हो, तो वह देखो।

मंच के एक कोने में प्रकाश होता है। एक बंगले की चहारदीवारी के एक भाग पर बड़े-बड़े अक्षरों में लाल रंग से लिखा दिखलायी पड़ता है; 'गाँधी के हत्यारे राष्ट्र की हत्या पर उतारू'

स्वर-१--यह तो एक मामूली पोस्टर की भाषा है। इसमें ऐसी कोई खास बात नहीं है जिस पर रोया जाये।

स्वर-२—तुम बाहर की इन दो आँखों से झाँक रहे हो; मन की आँखों से झाँको तो पता चले।

स्वर-१—पर मुझे तो कुछ भी गलत नही दिखलायी देता।

स्वर-२—वर्षों से अधिकार भोगनेवाला व्यक्ति कुछ ऐसा ही देखता-सुनता और समझता है।

स्वर-१—ऐसी बात नहीं; तुम्हारे प्रति श्रद्धा-भक्ति हमारे लोगों में तब भी थी और अब भी है।

स्वर-२—ऐसा तुम कह सकते हो, क्योंकि मेरे नाम पर तुमने एक लम्बे अर्से तक अधिकार भोगा है।

स्वर-१—तुम तो बुरा मान गये।

स्वर-२—इस लिखावट को तुम खूब ध्यान से देखो और समझने की कोशिश करो तो तुम्हें मालूम होगा कि हमारे अपने ही भाई-बन्धुओं ने अपने भीतरी रूपों का कितना भद्दा प्रदर्शन किया है।

स्वर-१—इसमें भला ऐसी कौन-सी बात लिखी है जो तुम्हें प्रतिकूल लगती है। ठीक ही तो लिखा है; 'गाँधी के हत्यारे राष्ट्र की हत्या पर उतारू'।

स्वर-२—मैंने कहा था न कि तुम्हारी अन्दर की आँखें बन्द हैं। तुम सच्चाई से घबड़ाते हो। किसी की गोली मारकर हत्या करने से उसकी वास्तविक मृत्यु नहीं होती है।

स्वर-१—तो ?

स्वर-२—उस व्यक्ति के आदर्शों की हत्या ही उसकी असली मृत्यु होती है। मारनेवाले ने केवल मेरे पार्थिव शरीर का अन्त किया था और हमारे लोग, मुझ पर श्रद्धा का फूल चढ़ानेवाले, मेरे आदर्शों की हत्या कर रहे है।

स्वर-१—मेरा मन नहीं मानता। हमारे लोग ऐसा कभी नहीं कर सकते। तुम्हारे सत्य, प्रेम, अहिंसा और त्याग की हत्या कर भला वे कितने रोज जिन्दा रह सकते हैं।

स्वर-२—मैं भी कभी ऐसा ही मानता था; किन्तु अब मेरा विश्वास ढह चुका है। मेरी आस्था हिल चुकी है।

स्वर-१—किसी चहारदीवारी पर एक साधारण लिखावट देखकर या पढ़कर इस प्रकार अनुमान लगाना भूल भी तो हो सकती है।

स्वर-२—तो तुम चाहते हो कि अनुमान की सच्चाई की परख के लिए हमें अपने लोगों के पास चलना चाहिए और सच्चाई को अपनी आँखों से देखनी चाहिए।

स्वर-१—हाँ।

स्वर-२—ठीक है; चलो।

लाठी की ठक-ठक की आवाज

स्वर-१—रुको; देखो स्वतन्त्र भारत का नमूना।

स्वर-२—किसीका बँगला है ?

स्वर-१—एक नेता का है। किन्तु इस व्यक्ति में तुम्हारे आदर्शों के प्रति अधिक श्रद्धा, भक्ति और विश्वास है।

स्वर-२—आश्चर्य है ! !.........

पग-ध्वनि और डंडे की ठक-ठक की आवाज । फाटक खुलने का स्वर । मंच के पूरे भाग पर प्रकाश फैलता है। नेताजी का ड्राइंग रूम दिखलायी पड़ता है । फर्श पर विदेशी कालीन बिछी है । ड्राइंग रूम आधुनिक तौर-तरीके के अनुसार सजा हुआ है। दीवारों पर बड़े-बड़े नेताओं की तस्वीरें लगी हैं। यह नेता एक मंत्री है । मंत्री जी आम तौर से जहाँ बैठकर मिलनेवालों से मिलते हैं—ठीक उसके सामनेवाले कोने में, एक टेबुल पर, महात्मा गाँधी की तस्वीर रखी हुई है। दो दरवाजे हैं; एक बाहर की ओर खुलता है और दूसरा भीतर की ओर ।

स्वर-२—तो यह अतिथि-कक्ष है ।

स्वर-१—ऐसा ही लगता है ।

स्वर-२—त्याग की इससे बढ़िया मिसाल भला और क्या हो सकती है। आजादी की लड़ाई हमने विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार से आरम्भ की थी और आजादी के बाद विदेशी वस्त्रों को हमने फिर से स्वीकारा है।

स्वर-२—ऐसी बात नहीं है बापू; मन्त्रियों को देश-विदेश के बड़े लोगों से मिलना पड़ता है; इसलिए ठाट बाट से रहना औपचारिक रूप से उचित ही जँचता है ···· और फिर हम अब सब तरह से सम्पन्न होते जा रहे हैं। इसका अनुमान तो बाहरवाले हमारे मन्त्रियों की रहन-सहन के ढंग से ही जान सकते हैं ।

स्वर-२—जिस देश के दो-तिहाई लोग भूखे और नंगे हैं, उस देश के किसी मन्त्री को इस प्रकार रहना शोभा नहीं देता । यह वह देश है जहाँ एक सम्राट् का मन्त्री फूस की बनी झोपड़ी में रहता था। आधी धोती पहनता और आधी ओढ़ता था ।

स्वर-१—तब और अब में आसमान-जमीन का अन्तर आ गया है । चाणक्य यदि आज के युग में पैदा होता तो उसका भी रंग-ढंग बदला होता ।

किसी के आने की आहट

स्वर-२- लगता है कोई आ रहा है ?

स्वर-१—तो हम इस कोने में छिप जायँ, आओ ।

मिस्टर काँटा अपनी कीमती खादी की पैंट तथा शर्ट पहने बाहर के दरवाजे से ड्राइंग रूम में प्रवेश करता है । सिर पर गाँधी टोपी है । धप्प् से अपनी सीट पर बैठता है और सिर पर से टोपी उतारकर हवा करता है । उसके पीछे मि० चमचा हाथ में ब्रीफकेस लिए आता है । काँटा के सामनेवाली सीट पर बैठता है । दीवार घड़ी बारह बजाती है ।

मि० चमचा—तो रात के बारह बज गये ?

मि० काँटा—तो क्या हुआ ?

मि० चमचा—कुछ नहीं, यों ही ।

मि० काँटा –ओफ ! बड़ी गर्मी है ।

मि० चमचा—(**उठकर पंखे का स्वीच आन करता है**) यह लीजिये ।

मि० काँटा—अरे यार गला सूख रहा है ।

मि० चमचा—ऐसी बात है तो हुजूर यह लीजिये ।

ब्रीफकेस से स्कॉच ह्विस्की की बोतल निकालकर अपने और मि० काँटा के बीच रखी टेबुल पर रखता है ।

मि० काँटा—(**ह्विस्की की बोतल हाथ में लेकर देखता है**) अरे यह तो हेग है। सवा सोलह आने फॉरन लीकर कहाँ से मैनेज किया ?

मि० चमचा—यह सब हुजूर का धन्धा नहीं, अपना धन्धा है। कहाँ से आया है और कहाँ जायेगा यह सब मुझपर छोड़िये। (ग्लास में ढालकर दोनों पीते हैं।) फॉर योर हेल्थ एन्ड वीगर (ग्लास का टकराना)

मि० काँटा—कुछ चखना-मखना है तो निकालो न ।

मि० चमचा—सॉरी, मैं तो भूल ही गया था ।

ब्रीफकेस से भूने हुए काजू का पैकेट निकालता है। दोनों खाते हैं।

मि० काँटा—वन्डरफुल, कहाँ से लिया है ?

मि० चमचा—फॉरन माल है

मि० काँटा—कोई सिगरेट है ।

मि० चमचा—जरूर है ।

ब्रीफकेस से ५५५ का नया पैकेट निकालकर दोनों पीते हैं।

मि० काँटा—बहुत मजेदार सिगरेट है ।

मि० चमचा—आपके लिए हुजूर, केवल आपके लिए ब्रिस्टल लन्दन से मँगवाया है ।

मि० काँटा—यह सब कोई देख तो नहीं रहा है ।

मि० चमचा—बड़ी बेसब्री से हुजूर की ओर देख रहा है ।

(उठकर गाँधी जी की तस्वीर का मुँह दीवार की ओर करता है।) अब ठीक है। (अपनी सीट पर बैठता है।)

मि० काँटा—आज की सफलता के लिए तुम्हें धन्यवाद दिये बिना मैं नहीं रह सकता मि० चमचा। यह तो तुम्हीं थे जिसकी वजह से आज की मीटिंग ग्रैन्ड रही। बहुत बड़ी संख्या में लोगों को तुमने जमा किया था ! सब मिलाकर तुम एक व्यवहार कुशल, कार्य

कुशल और चुस्त-दुरुस्त आदमी हो। एक अपने लोग हैं जो बहुत पैंतरेबाजी और पैसे खर्च करने पर भी लोगों को जमा नहीं कर पाते हैं। बस नाम की मिटिंग होती है। एड्रेस करने में कोई मजा नहीं आता। तुम जैसे लोग जब मिल जाते हैं तो दिल, दिमाग और दुनियाँ कुछ और ही होती है।

मि० चमचा—हुजूर को मेरा इन्तजाम पसन्द आया जानकर यह प्रसन्नता हुई। इससे भी अधिक प्रसन्नता नशाबन्दी पर हुजूर का एक्सटेम्पोर भाषण सुनकर हुआ। हुजूर बोलते क्या है ? लोगों का मन मोह लेते है। मॉब के लोग आपके भाषण की भूरि-भूरि प्रशंसा कर रहे थे।

मि० काँटा—अच्छा। लोगों पर भाषण का असर कैसा रहा ?

मि० चमचा—मत पूछिये, जो लोग मैदान में लुक-छिप कर पी रहे थे वे भी भाषण के ताव में आ गये। जबतक आपका भाषण चलता रहा किसी ने कुल्हड़ मुँह से नहीं लगाया।

मि० काँटा—चलो, कुछ देर के लिए ही सही, नशाबन्दी सफल तो रहा।

मि० चमचा—बिल्कुल रहा हुजूर। आप इतना अच्छा भाषण करते हैं कि सुनकर तबीयत फड़क उठती है।

मि० काँटा—करता नहीं यार, पढ़ता हूँ। अपने राम ने तो केवल भाषण पढ़ने की ट्रेनिंग ली है। लिखने के लिए एक से एक इन्टलेक्चुअल चन्द पैसों में मिल जाते हैं।

मि० चमचा—फिर तो हुजूर का भाषण तैयार करनेवाले को भी दाद देनी होगी। उसमें भाषण को असरदार बनाने की काफी क्षमता है।

मैं तो हुजूर को सलाह दूँगा कि हर अवसर और विषय पर किसी एक व्यक्ति से ही अपना भाषण तैयार करवाया करें तो ज्यादा अच्छा रहे ।

मि० काँटा—बजा फरमाते हो, ऐसा ही होगा ।

मि० चमचा—खुशी के मौके पर एक बात तो मैं कहना ही भूल गया । (ठहर कर) वह तो जेनरल इन्सुरेंस कम्पनी वाला मैनेजर है……

मि० काँटा—क्या कह रहा था ?

मि० चमचा—उसको एक एजेंट की जरूरत है ।

मि० काँटा—लेकिन मैं तो एजेंसी ले नहीं सकता ।

मि० चमचा—दिलवा तो सकते हैं ।

मि० काँटा—खुलासा कहो, समझा नहीं ।

मि० चमचा—मिस सिकल को उसने उस रोज आपके साथ नुमाइश में देखा था । वह मिस के डील-डौल से इतना प्रभावित है कि मत पूछिये । ऐसा विश्वास कर बैठा है कि यदि मिस कम्पनी की एजेसी लें तो उसका बिजनेस चमक उठे ।

मि० काँटा—वाकई, मेरी लाडली है ही वैसी । जो भी एक नजर देखता है, उससे प्रभावित हुए बगैर नही रहता ।

मि० चमचा--इसलिये तो मैं कह रहा था, घर बैठे बिना बुलाये लक्ष्मी आ रही है तो आने दिया जाये ।

मि० काँटा—सोचना पड़ेगा ।

मि० चमचा—इसमें भला सोचने की कौन-सी बात है। कम्पनीवाला मैनेजर दस हजार रुपये प्रति माह कमीशन देने के लिये तैयार है। केवल हुजूर के हाँ की देर है।

मि० काँटा—इतना बड़ा बिजनेस वह कर भी सकेगी? मुझे सन्देह है।

मि० चमचा—जब सारा काम मिस ही करेगी फिर हम और आप किस मर्ज की दवा हैं। काम हम करेंगे और नाम मिस का रहेगा।

मि० काँटा—गुड आइडिया। किन्तु इन्स्योरेन्स के लिए..................

मि० चमचा—आपका क्षेत्र बहुत व्यापक है। फिर आपका यह बँगला है। ये सब भी तो कभी आग-पानी और आकस्मिक घटनाओं के शिकार हो ही सकते हैं।

मि० काँटा—वन्डरफुल! तुम्हारे दिमाग का जवाब नहीं।

मि० चमचा—(एग्रीमेंट फार्म निकालता है) ये एग्रीमेंट फार्म हैं, मिस के सिगनेचर चाहिए।

मि० काँटा—हो जायेगा; फार्म मुझे दो।

मि० चमचा—यह लीजिये, फार्म पर मिस का एड्रेस यहीं का रहेगा।

मि० काँटा—ठीक है। **फार्म लेकर अन्दर जाता है। एक क्षण बाद मिस मिकल नाइट गाउन (नाइटी) पहने ड्राइंग रूम में प्रवेश करती है और मि० चमचा के गले से लिपटती है। मि० चमचा कमर में हाथ डालता है और खींचकर अपने पास बिठाकर चूमता है।**

मि० सिकल—पापा इतनी जल्दी मान जायेंगे मैं नहीं समझती थी।

मि० चमचा—लेकिन अब तो समझो तुम्हें क्या करना है?

मि० सिकल—पापा की कार लेकर कल बहुत सवेरे होटल पहुँचना है। कार में माल लदवाकर वहाँ से चल देना है। फिर माल को उसकी जगह पहुँचाकर दस बजे से पहले कार पापा को वापस कर देनी है ताकि वे ठीक समय पर बैठक में जा सकें।

मि० चमचा—वेरी गुड।

दोनों शराब पीते हैं। मंच पर अंधेरा है। शराब ढालने की आवाज और रोमांस के क्षणों की खिलखिलाहट तथा चूमने की आवाज।

स्वर-२ —अब और सहा नहीं जाता है।

डंडे की ठक-ठक के साथ पगध्वनि

तुम्हें मेरे साथ चलना होगा।

स्वर-१ —कहाँ।

स्वर-२ —जहाँ मैं चल रहा हूँ।

स्वर-१ —कुछ पता तो चले।

स्वर-२ —चल जायेगा; मेरे साथ आओ। मौजूदा परिस्थितियों में देश में एक और क्रांति की आवश्यकता है।

स्वर-१ —लेकिन क्रांति का माहौल देश में नहीं है। लोग क्रांति नहीं चाहते।

स्वर-२ —तुम समझते हो आजादी हासिल करने के पहले की जिंदादिली उत्साह, त्याग की क्षमता और बलिदान की भावना लोगों में नहीं है? लोग-बाग एक तरह से मुर्दा हो चुके हैं? सक्रिय होने की अपेक्षा तटस्थ रहकर तमाशबीन बने रहना अधिक पसन्द करते हैं?

स्वर-१—बहुत कुछ ऐसा ही समझता हूँ; क्योंकि आम आदमी को लिखने-पढ़ने और बोलने की आजादी से कोई मतलब नहीं हैं। आम आदमी को केवल पेट भरने की गरज है।

स्वर-२—ऐसी धारणा महज एक भूल है। आग तो वही है, केवल राख से ढँक गई है ।

स्वर-१—मुझे मालूम है, तुम कहाँ जा रहे हो ?

स्वर-२ - ठीक समझा है। आग की ढेर पर पड़ी राख को एक वही हटा सकता है।

स्वर-१—फिर तो मुझे जाने दो, मैं उसके पास नहीं जा सकता।

स्वर-२—क्यों ?

स्वर-१—यह बाद में बतलाऊँगा। अभी तो मुझे जल्दी है। अप अमृतसर मेल के आने का समय हो रहा है; मुझे शीघ्र-से-शीघ्र उसके पास पहुँच कर............

तेज भागती पगध्वनि

स्वर-२—समझ गया ।

डंडे की ठक-ठक की आवाज धीरे-धीरे विलीन

स्वर-३—(**ठक-ठक की ध्वनि दूर से समीप आती है ।**) डंडे की ठक-ठक ....यह पगध्वनि ? वर्षों बाद...—...सब कुछ तो जाना-पहचाना जैसा है ।

ठक-ठक की ध्वनि से प्रतीत होता है कि कोई सीढ़ियाँ चढ़ रहा है ।

स्वर-२—तो तुम जाग रहे हो ?

स्वर-३—हाँ ।

स्वर-२—नहीं, तुम अब भी सो रहे हो । यदि जागते होते तो जो कुछ आज देश में हो रहा है; वह नहीं होता ।

स्वर-३—भला मैं क्या कर सकता हूँ; मेरा तो सब कुछ सर्वोदय के लिए समर्पित है ।

स्वर-२—जब सर्वनाश हो रहा हो तो फिर सर्वोदय की सत्यता स्वतः समाप्त हो जाती है।

स्वर-३—बापू ऽ ऽ ऽ ऽ

स्वर-२—बहुत सारी उम्मीदें लेकर तुम्हारे पास आया था । मुझे निराश होना पड़ेगा ऐसा मैं नहीं समझता था ।

स्वर-३—मैं राजनीति से अलग हो चुका हूँ; इसलिये मेरे साथ लाचारी है ।

स्वर-२—लेकिन इसका मतलब यह कहाँ होता है कि देश अधोगति को प्राप्त करे और तुम सरीखा आदमी देश, समाज और जनता से अलग रहकर टुकुर-टुकुर तमाशा देखे । क्या इसी दिन के लिए देश के लोगों ने अपनी-अपनी कुर्बानियाँ दी थीं ? तुमने जेल में तरह-तरह की यातनायें झेली थीं ? तुम्हें पता है कि देश में लोकतन्त्र दफन हो रहा है और एकाधिपत्य उभर रहा है ।

स्वर-३—जानता हूँ ।

स्वर-२—फिर चुप क्यों हो ?

स्वर-३—थका हूँ; साधनहीन हूँ ।

स्वर-२—तुम इस कोठरी से बाहर निकलो; साधन तुम्हें खड़ा दिखलाई पड़ेगा ।

स्वर-३—तुम कहते हो तो…… द्वार खुलने की आवाज) कुछ तो नहीं है ।

स्वर-२—उस ओर ……उत्तर की दिशा की ओर …… पंजे पर खड़े होकर देखो तो………कुछ दिखलाई पड़ रहा है ?………वह देखो आगे-आगे हाथ में रंग-बिरंगी झंडियाँ लिए पाठशालाओं में पढ़ते नन्हें सिपाही—जिनके अभी दूध के दाँत ही टूटे हैं …… जिन्होंने अभी-अभी चलना सीखा है; अलख जगाते चले आ रहे हैं—"जयप्रकाश बाहर आओ; हम नन्हों को राह दिखाओ" । (**सम्मिलित स्वर बच्चों का**) और वह देखो उन नन्हें सिपाहियों के पीछे चली आ रही है, स्कूली विद्यार्थियों की वह टोली, जिनकी आवाज में बहादुरानी बुलंदी है, जिनकी मुट्ठियों में कल का भारत कैद है;—"गूँजे धरती और आकाश, देश का नेता जयप्रकाश" । और उनके पीछे-पीछे दिशाओं के कम्पायमान करते चले आ रहे हैं; कॉलेजों के शिक्षार्थी, जिनके पैरों में ताल है, हाथ में मशाल है और आवाज में कमाल है; "वक्त देता है आवाज जे० पी० भारत का सरताज ।" और सब के पीछे-पीछे समुन्दर की मनमानी लहरों के मानिन्द बढ़ता चला आ रहा है वह विशाल जन-समूह ।

'सोते से हम जाग चुके हैं; मन में निश्चय ठान चुके हैं;
देश की खातिर मर मिटने को, सिर पर कफन बाँध निकले हैं ।

(गीत)

सरफरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है,
देखना है जोर कितना बाजुए कातिल में है ।

स्वर-३—यह सब मैं क्या देख रहा हूँ ।

स्वर-२ —यह न पूछो; देश पर संकट मड़रा रहा है; इस वक्त किनाराकशी करना देश के साथ गद्दारी करना होगा। अब तुम तैयार हो जाओ और इसकी बागडोर संभालो, नहीं तो वक्त आगे निकल जायेगा और तुम बहुत पीछे छूट जाओगे ।

स्वर-३—तुम्हारा आदेश मेरे लिए उसूल है। इनका नेतृत्व में अवश्य करूँगा। मैं जा रहा हूँ ।

तेजी से सीढ़ियाँ उतरने की आवाज

स्वर-२—जाओ; मेरा आशीर्वाद है, तुम सफल होगे ।

* दृश्यान्त *

* दूसरा दृश्य *

मंच पर अन्धेरा है। पृष्ठभूमि से संवाद।

स्त्री स्वर- (खुमारी के स्वर में) ऊँ हूँ; सोने दो न।

स्वर-१ —उठो, नहीं तो तुम्हारी यह नींद तुम्हें ले डूबेगी।

स्त्री स्वर—मैं इतनी गाफिल नहीं हूँ।

स्वर-१ —यह तो आनेवाला समय ही बतलायेगा।

स्त्री स्वर—वह तो मेरी मुट्ठी में कैद है।

स्वर-१ —ऐसा समझना तुम्हारी भूल है लड़की, समय के पंख होते हैं; पर नहीं। वह आम आदमी के मानिंद जमीन पर खड़ा होकर नहीं चलता, हवा में उड़ता है। उसकी गति बहुत तीव्र है।

स्त्री स्वर—लेकिन जो मेरी मुट्ठी कैद है, वह गतिहीन है।

स्वर-१ —जब दिशायें मौन हों; हवा शांत हो और आसमान लाल हो तो क्या समझना चाहिए।

स्त्री स्वर—तूफान उठाने वाला है।

स्वर-१ —और वह समय बहुत नजदीक आ गया है।

स्त्री स्वर- आने दो, मैं भी तैयार बैठी हूँ। तूफान मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकेगा।

स्वर-१ —आनेवाले कल को अपना समझना नादानी है।

स्त्री स्वर—तुम कहना क्या चाहते हो ?

सम्मिलित —तुम प्रतिनिधि नहीं रहे हमारे, कुर्सी-गद्दी छोड़ दो ।

दूर से समीप आता है ।

उद्घोषक —एक अदृश्य मौन के इशारे पर जन-मानस का वह वृद्ध सिपाही अपने थके शरीर का भार अपनी पुरानी बेत की छड़ी पर टेकता, अपने कमरे से निकलकर जनपथ पर खड़ी भीड़ के आगे-आगे चलने लगा । वर्त्तमान समाज, संस्थान और सरकार में सर्वांग व्याप्त भ्रष्टाचार के खिलाफ देश की निरीह और असहाय जनता उसकी एक आवाज पर जमा होने लगी । प्रदर्शन होने लगे । उसके सबल नेतृत्व में कारवाँ बढ़ने लगा । चार नवम्बर १९७४ को पटने के उस ऐतिहासिक कूच के समय उस पर तड़ातड़ लाठियाँ बरसायी गयीं; किन्तु वह बच निकला । उन्तीस अक्तूबर १९७४ को लुधियाना स्टेशन पर उस पर पीछे से वार किया गया, किन्तु वह वहाँ भी बच गया । पानीपत जाते समय उसकी कार पर लठैतों ने डंडे से भीषण प्रहार किया, किन्तु वह बल-बाल बच गया । दो अप्रैल १९७५ को कलकत्ते में उस पर जानलेवा आक्रमण हुआ; परन्तु बचानेवाले ने इस बार भी उसके प्राणों की रक्षा की ।

इस सारी कठिनाइयों के बावजूद सम्पूर्ण क्रांति का वह कारवाँ बढ़ता गया । आन्दोलन की लहर देश में फैलती गयी । छह मार्च १९७५ को दिल्ली में देश के विभिन्न भागों से आयी जन-शक्ति का विराट प्रदर्शन और उनकी यह माँग की "हम भारत के नागरिक बिहार की जनता

के संघर्ष के प्रति जो पूरे देश की भावना का प्रतीक है एकात्मकता जाहिर करते हैं। हमारा आज का यह अभि-यान न्याय की प्राप्ति और लोकतन्त्र की रक्षा के लिए है।" उस विराट-प्रदर्शन को देखकर तत्कालीन भारत की सरकार घबड़ा उठी। सरकार के रहनुमाओं को ऐसा भान होने लगा कि अब उनकी कुर्सी और गद्दी सुरिक्षत नहीं है। खतरा उनके सिरों पर मड़रा रहा है। अंतत देश की तत्कालीन सरकार ने छब्बीस जून १९७५ को इमरजेंसी की घोषणा की और देश भर में यह मुनादी पिटवा दी।

मंच पर प्रकाश फैलता है। मुनादी का ढोल पीटता एक व्यक्ति प्रवेश करता है। एक साथ ढोल पर तीन बार रह-रहकर चोट मारता है। पुनः मुनादी की गुहार लगाता है।

खबरदार; होशियार
खलक खुदा का, मुलुक बाश्शा का
हुकुम शहर कोतवाल का...... .....
हर खासो आम को आगाह किया जाता है
कि खबरदार रहे
और अपने-अपने किवाड़ों को अन्दर से
कुंडी चढ़ाकर बन्द कर ले
गिरा ले खिड़कियों के पर्दे
और बच्चों को बाहर सड़क पर न भेजे
क्योंकि;

एक बहत्तर वर्ष का बूढ़ा आदमी
सलतनत से बगावत करता
कौम मुलक और बाश्शा के साथ गद्दारी करता
बाश्शा पर कीचड़ उछालता
अनुशासन तोड़ता
बच्चे, बूढ़े, युवक, युवतियों को बरगलाता
बाश्शा की बनवायी सड़क पर निकल पड़ा है।
खबरदार, होशियार
जिसने भी महलसरा की चाहरदिवारी फलाँग कर
अन्दर झाँकने की कोशिश की
उसकी
आँखें फोड़ दी जायेंगी
पैर तोड़ दिये जायेंगे
और बाकी बचे शरीर का कचूमर निकालकर
गन्दी बस्ती के नाले में फेंक दिया जायेगा।
बाश्शा सलामत को खून-खराबा पसन्द नहीं
इसलिए
हर खासो आम को आगाह किया जाता है
खबरदार किया जाता है
होशियार किया जाता है।
खलक खुदा का, मुलुक बाश्शा का
हुकुम............

ढोल पर चोट मारता एक ओर जाता है।

उद्घोषक—और इस प्रकार १९४२ की आजादी की उस लड़ाई के शेष बचे अकेले इस सिपाही को तत्कालीन भारत की सरकार ने बागी घोषित कर दिया। उसे गद्दार कहकर पुकारा। लोकतांत्रिक भारत में, जनता के बीच अपने विचारों को रखने का उसका वह नागरिक अधिकार छीन लिया गया और खराब स्वास्थ्य रहने के बावजूद, उसे कैद कर, चंडीगढ़ भेज दिया गया।

सीकचों के बीच जे० पी० का चेहरा दिखलायी पड़ता है।

* *दृश्यान्त* *

नोट :—मुनादी की उपरोक्त पंक्तियाँ श्री धर्मवीर भारती जी की, धर्मयुग में प्रकाशित, 'मुनादी' कविता से ली गयी हैं। कुछेक पंक्तियाँ नाटककार ने अपनी ओर से जोड़ दी हैं। उक्त पंक्तियों के प्रयोग के लिए माननीय श्री धर्मवीर भारती की पूर्व अनुमति प्राप्त कर ली गयी थी।

—नाटककार

पृष्ठभमि से—२६ जून १९७५ की काली रात के अँधेरे में आपातकालीन स्थिति की घोषणा के साथ ही भारत की सरजमीन पर आतंक उतर आया। नेताओं को चुन चुन कर जेलों में ठूँस दिया गया। तब से लेकर १० मार्च १९७७ तक देश बदलते मौसम की चादरें तानता रहा। खामोशी का आलम चारों ओर कायम था। हर मासूम चेहरे पर आतंक लोहे की चादर ओढ़े बैठा नजर आता था। देश का प्रत्येक नागरिक अपना आत्मसम्मान खो चुका था। उसकी हिम्मत टूट चुकी थी। फिर भी वह अपनी खोयी प्रतिष्ठा के लिये, अपने खोये अधिकारो के लिये अन्दर ही अन्दर कसमसाती रही। खोये आत्मसम्मान की वापसी के लिये साहस जुटाती रही। कुछ कर डालने के लिये मौके की तलाश में गुमसुम बैठी रही। बदलते मौसम का जायका लेती रही।

जैसे-तैसे १९७६ समाप्त हो चुका था। १९७७ अपने प्रथम चरण मे प्रवेश कर चुका था। भारत की तत्कालीन सरकार आम चुनाव की घोषणा कर चुकी थी।

आपातकालीन स्थिति उठा ली गयी थी और इसके साथ ही मुरझाये चेहरे खिल उठे थे। नेतागण रिहा कर दिये गये थे।

चुनाव हुआ। नतीजे निकले। भारत की तत्कालीन सरकार चुनाव के इस दाव पर अपना सब कुछ हार चुकी थी।

* तीसरा दृश्य *

पर्दा उठता है और सिपाही बूटा सिंह तथा शमशेर बँगले के फाटक पर ड्यूटी पर दिखलायी पड़ते हैं। दोनों के सिरों पर लाल टोपियाँ है। शमशेर फाटक की एक ओर अपने डंडे पर भार दिये आड़े-तिरछे खड़ा है। बूटा सिंह एक ओर बैठा खैनी लगा रहा है। एक खाली कुर्सी पड़ी हुई है।

बूटा सिंह—भइया शमशेर; मौसम बदल गया न।

शमशेर —हाँ भाई; बदल गया है।

बूटा सिंह—खामोशी का वह आलम ....

शमशेर —चला गया है।

बूटा सिंह—हर मासूम चेहरे पर से आतंक की लोहे की चादर......—

शमशेर —हट गयी है।

बूटा सिंह—देशवासियों का खोया हुआ सम्मान.........

शमशेर —वापस मिल गया है।

बूटा सिंह—हारा हुआ सिपाही.........

शमशेर —इस बार मैदान जीत गया है।

बूटा सिंह—देश की धरती से एकाधिपत्य.........

शमशेर —फिलहाल दफन कर दिया है।

बूटा सिंह—और लोकतन्त्र ?

शमशेर —ताबूत से निकलकर आम आदमी की सड़क पर चलने-फिरने लगा है ।

बूटा सिंह—और तुम्हारा वह सलीब पर टँगा मसीहा, जिसे लोगों ने सलीब से उतारकर फर्श पर लिटा दिया था ....

शमशेर —स्वस्थ है। भगवान उसे लम्बी उमर दे; मेरी यही कामना है ।

बूटा सिंह—तो हमने इतने कम समय में तूफान उठते देखा है। तूफान को भीषण गति से चलते देखा है । बहुतों को इस भीषण तूफान में नेस्त-नाबूद होते देखा है; और उन्हें भी देखा है जिनके ऊपर से तूफान गुजर गया और वह खड़े के खड़े रह गये ।

शमशेर —देखा है । तूफान के शांत हो जाने के बाद जो कुछ देश में हो रहा है; हम वह भी देख रहे है । (रुककर) मगर आज तुम इतना खोद-खोदकर यह सब क्यों पूछ रहे हो ?

बूटा सिंह—भइया; इन बातों के दरमियान तुम्हें किसी ऐसी चीज पर नजर पड़ी जो अपनी जगह पर थमी है ।

शमशेर —ना भाई; मेरी नजर में ऐसी कोई चीज नहीं दिखलायी देती है जो नहीं बदली है । पहले की तरह जक-थक थमी है ठहरी है ।

बूटा सिंह उठता है । डंडे को बगल में दबा लिया है । खैनी मलता शमशेर की ओर बढ़ता है ।

बूटा सिंह—एक चीज है जो अब भी वैसा ही है, जैसा पहले था ।

शमशेर —वह क्या ?

बूटा सिंह—हमारा यह डंडा ।

शमशेर —धत्तेरे की; मैं तो समझ रहा था कोई नई बात कहोगे ।

बूटा सिंह —हकूमत चाहे राजा की हो या रानी की । परजा की हो या परजापति की । हमारे डंडे की महिमा जस की तस रहती है।

शमशेर —लेकिन मैं इस बात को इतना महत्त्व नहीं देता ।

बूटा सिंह —समझता हूँ; तुम्हारी निगाहों में वोट का महत्त्व डंडे से अधिक है; क्यों ? (**खैनी शमशेर को देता है ।**)

शमशेर --(**खैनी लेकर मुँह में डालता है ।**) इसके लिए कहीं प्रमाण ढूँढ़ने जाना है; सब कुछ तो देख ही रहे हो । हर बँगले के गेट पर से पुराने नेम प्लेट रातोरात हट गये और नये-नये टँग गये है । जो बँगले के अन्दर थे और यह समझ रहे थे कि हम कभी बँगला छोड़कर नहीं जायेंगे, आज बँगले के बाहर सड़क पर घूम रहे है और जो कल सड़क पर घूम रहे थे आज बँगले के अन्दर हैं ।

बूटा सिंह —तो क्या हुआ ? हमारे डंडे की रक्षापंक्ति की जरूरत उन्हें भी थी जो कुछ दिन पहले बँगले के अन्दर थे; और आज इन्हें भी है जो अभी-अभी अन्दर गये हैं । लोकतंत्र रहे या राजतंत्र, सामंततंत्र रहे या तानाशाहतंत्र; कोई फर्क नहीं पड़ता । हमारे डंडे के बिना कोई तंत्र नहीं चल सकता । तंत्र आयेंगे-जायेंगे, लेकिन हमारा डंडा थमा रहेगा ।

शमशेर —(**मि० चमचा को आता देखकर**) आओ बाबूजी आओ, इधर बहुत दिनों के बाद दिखलायी पड़े हो ।

मि० चमचा —सब कुछ बदल गया है न; और बदली हुई परिस्थितियों में इन्सान को बदलने में कुछ वक्त तो लग ही जाता है ।

बूटा सिंह —अब तो सब कुछ ठीक हो गया है न ?

मि० चमचा—हो रहा है, धीरे-धीरे ।

शमशेर —ठीक समय पर आये हो। एक बात का फैसला करो, हम दोनों सुबह से ही उलझे हुए हैं ।

बूटा सिंह —हाँ, हाँ बाबूजी से ही लॉटरी निकलवा लो। मुझे कोई एतराज नहीं है ।

मि० चमचा—आखिर बात क्या है ?

बूटा सिंह —यह डंडा अधिक महत्त्व रखता है या वोट। मेरा साथी कहता है वोट का महत्त्व डंडे से अधिक है और मैं कहता हूँ डंडे का महत्त्व वोट से अधिक है ।

शमशेर —अब तुम कहो, किसकी बात सही है ।

मि० चमचा—तुम दोनों गलती कर रहे हो। न तो उसका वोट उतना महत्त्व रखता है और न तुम्हारा यह डंडा ।

दोनों —फिर किसका महत्त्व सबसे ऊपर है ?

मि० चमचा—(**कुर्सी पर बैठता है।**) इस कुर्सी का। सब कुछ इस कुर्सी पर बैठने और बने रहने के लिए ही होता रहता है, हो रहा है और होता रहेगा ।

दोनों —हमारा ध्यान तो इस ओर गया ही नहीं था; ससुरी बहुत देर से खाली पड़ी थी ।

मि० चमचा—यह कुर्सी बड़ी मायावनी है। इस पर बैठते ही कौवा, कोयल की बोली बोलने लगता है और बगुला हंस की चाल चलने लगता है ।

शमशेर —सौ की एक कही है तुमने। तबीयत खुश हो गयी तुम्हारी बात सुनकर।

बूटा सिंह —बिलकुल ठीक कहते हो; पहले भी यही देखता रहा हूँ और आज भी यही देख रहा हूँ।

शमशेर —यह सब तो हुआ, किन्तु एक बात मुझे अजूबा लगती है।

मि० चमचा — वह क्या ?

शमशेर — जब मि० काँटा मिनिस्टर थे और इस बँगले मे रहते थे तब तुम्हारा आना जाना बहुत होता था। तुम खास आदमी थे; ऐसा हम सब समझते थे। लेकिन....

मि० चमचा —लेकिन क्या ?

बूटा सिंह — अब तो सरकार बदल गयी है और मि० काँटा की जगह उस बँगले मे मिनिस्टर आला रहने लगे हैं।

मि० चमचा —यह सब मै जानता हूँ।

शमशेर — फिर क्या करने आये हो।

मि० चमचा —मेरा नाम तुम्हें मालूम है ?

बूटा सिंह —तुम मि० चमचा हो।

मि० चमचा —और मेरा काम ?

शमशेर —साग-सब्जी परोसना, टीन से घी निकालना, प्लेट में रखे भोजन को पेट में पहुँचाने में काँटा की मदद करना।

मि० चमचा —और चाय में चीनी मिलाना, खाते-खाते जब अजीर्ण हो जाये तो दवा को पेट में पहुँचाना भी मेरा ही काम है। समझे !

बूटा सिंह —समझ गया; मि॰ चमचा के लिए हर हालत में स्थान सुरक्षित है। बँगले का दरवाजा खुला है; तुम जा सकते हो। (**अन्दर जाने का संकेत**)

मि॰ चमचा —काफी होशियार नजर आते हो। (**अन्दर जाता है।**)

शमशेर —आते-जाते, गाहे-वे-गाहे हम दोनों का भी खियाल रखना।

ढिंढोरा पीटनेवाला ढोल पीटता प्रवेश करता है। ढोल पर तीन बार चोट मारता है और फिर गुहार लगाता है।

ढिंढोरावाला —खबरदार, होशियार

खलक खुदा का, मुलुक हर खासो आम का

हुकम वक्त की आवाज का

कि हर कोई खबरदार रहे

होशियार रहे

और अन्दर की कुंडी गिरा ले

खोल दे किवाड़ों के पल्ले

हटा ले खिड़कियो के पर्दे

और बाहर सड़क पर निकल आये

क्योंकि;

पचहत्तर बरस का बूढ़ा आदमी

अपनी काँपती कमजोर आवाज में

हवा में हाथ उठा-उठाकर
देश के हर आदमी को
सावधान कर रहा है
पुकार-पुकारकर कह रहा है
कि खबरदार रहो होशियार रहो
हर किसी को यह इजाजत है कि—
महलसरा की चहारदिवारी फलांग कर
अन्दर झाँक कर देखें; कि —
उसका वोट पाकर
महलसरा के अन्दर बैठनेवाला
सरकार का, शक्ति का और उसके वोट का
गलत इस्तेमाल तो नहीं कर रहा है ?
यदि कोई ऐसा करता पाया जाये; तो—
हर खासो-आम को अधिकार है कि—
गलत करनेवाले को वापस बुला ले
खबरदार, होशियार
महलसरा की कुर्सी पर बैठनेवाला
आम आदमी का सेवक है
उसका दर्जा मालिक का नहीं
मोखतार का नहीं, एक सेवक का है ।

खबरदार, होशियार

खलक खुदा का, मुलुक आम आदमी का

हुकुम·····—·········

ढोल पीटता एक ओर जाता है। शमशेर तथा बूटा सिंह बँगले की ओर देखता है।

* पर्दा गिरता है *

हम सुनहले कल की ओर बढ़ रहे हैं

पात्र

□

प्रेस रिपोर्टर

सिपाही

फगुआ

फेरी लगानेवाला लड़का

बटेसर राय

कार ड्राइवर

एक वृद्ध व्यक्ति

प्रथम दृश्य

शहर का बाहरी भाग। दो सड़कें एक-दूसरे को काटती हुईआगे बढ़ गयी हैं। सड़क जहाँ एक-दूसरे को काटती हैं, वहाँ एक गोलाकार घेरा बना हुआ है। घेरे के मध्य में नगरपालिका का लाइट पोल गड़ा हुआ है। पोल की दूसरी ओर सड़क के किनारे दो बड़े बोर्ड लगे हैं। एक पर मोटे अक्षर में लिखा है—"हम सुनहले कल की ओर बढ़ रहे हैं।" दूसरे पर लिखा है—"काम तेजी से निपटाइये, देश को आगे बढ़ाइये"।—"हम सुनहले कल की ओर बढ़ रहे हैं" बोर्ड के ठीक नीचे फेमिली प्लानिंग की स्टेशन वेगन करवट के बल उल्टी दर्शकों को दिखलायी पड़ती है। पोल से सटकर बैठा सिपाही हाथ में खैनी मल रहा है और किसी ओर से किसी के आने की इन्तजारी में है। अधेड़ उम्र का एक प्रेस रिपोर्टर एक ओर से आता है और करवट खड़ी कार के पास खड़ा होकर कुछ नोट करता है।

सिपाही —(उसी प्रकार बैठा है) ऐ ; क्या नोट करता है ?

रिपोर्टर —कुछ नहीं; न्यूज बना रहा हूँ। इसका ड्राइवर कहाँ है ?

सिपाही —मुझे ही झाँसा देता है ? न्यूज बनाता है या छापता है, मैं नहीं जानता।

रिपोर्टर —फिर टोकता काहे को है।

सिपाही —सरकारी हुकुम है·······

रिपोर्टर —कि राह चलते, सड़क पार करते, हर आदमी को टोको।

सिपाही —हाँ! चूना है?

रिपोर्टर —मैं खैनी नहीं खाता।

सिपाही —तो न्यूज खाता है?

रिपोर्टर —खाता नहीं; खिलाता हूँ। तुम भी खाते हो।

सिपाही —न जाने आज किस मनहूस का मुँह सबेरे-सबेरे देखा है कि बिछावन से उठते ही यहाँ डिउटी पर लगा दिया है। साली गाड़ी उलटने को उलट गयी और मुझे फजीहत में डाल गयी। इस सुनसान जगह में एक कप चाय भी मुहाल है। सबेरे से बासी मुँह डटा हूँ।

रिपोर्टर —सबेरे-सबेरे आईना देखते हो न?

सिपाही —अवश्य देखता हूँ।

रिपोर्टर —वही तो मैं समझ रहा था।

सिपाही —यह तुम कैसे जान गये कि सबेरे-सबेरे उठकर मैं आईना देखता हूँ।

रिपोर्टर —तुम्हीं तो कह रहे थे।

सिपाही —मैंने ऐसा कब कहा है?

रिपोर्टर —अभी-अभी कह रहे थे न कि किसी मनहूस का मुँह सबेरे-सबेरे देखा है, इसलिये यहाँ डिउटी लग गयी है।

सिपाही —सो तो है···· (संभलता है) ऐं····मुझे मनहूस कहता है। (खड़ा होता है)

रिपोर्टर —मैं नहीं; तुम स्वयं कहते हो सिपाही जी।

सिपाही —सिपाही जी से कहीं मुलाकात हो गयी तो सारी हेंकड़ी निकल जाएगी। देखें, क्या नोट किया है ?

रिपोर्टर —(सिपाही के पास आता है) देख लो। (रिपोर्ट सिपाही को देता है)

सिपाही —(टटोलकर पढ़ता है) "राजधानी से चार किलोमीटर दूर फेमिली प्लानिंग की स्टेशन वेगन जो ऑपरेशन के लिये देहात जा रही थी—भिखना मोड़ पर उलट गयी है। उसमें सवार डॉक्टर, ड्राइवर तथा अन्य लोगों को गहरी चोटें आयी हैं। सभी अस्पताल में दाखिल कर दिये गये हैं।" हूँ; तो यह न्यूज बनी है ? यदि यह खबर इसी प्रकार छप गयी तो तुम्हारा अखबार मेरे हाथ में होगा, यह गाड़ी यहाँ होगी और तुम इन दोनों से अलग-थलग जेल के अन्दर होगे। समझे ?

रिपोर्टर —क्यों ?

सिपाही —इमरजेंसी है। यह हेडिंग कल के लिये मौजूँ हो सकती है, आज के लिये नहीं।

रिपोर्टर —फिर आज के लिए क्या मौजूँ होगा ?

सिपाही —वह मैं बतलाऊँ ?

रिपोर्टर —क्यों नहीं; आजकल तो तुम्हारी ही बनायी हेडिंग छपती है।

सिपाही —तो सुनो; आज के लिये हेडिंग मौजूँ रहेगी कि भिखना मोड़ के लोगों ने फेमिली प्लानिंग की स्टेशन वेगन को, जो गाँव में ऑपरेशन के लिए जा रही थी—भिखना मोड़ पर घेर लिया। डाक्टरों को मारा-पीटा तथा गाड़ी को सड़क के किनारे उलट

दी है। गाड़ी पर सवार सभी लोग सख्त जख्मी होकर अस्पताल में पड़े हैं।

रिपोर्टर —और सरकार······

सिपाही —आवश्यक कार्रवाई कर रही है।

(दूसरी ओर से फगुआ कन्धे पर नारियल की छाल की बनी मोटी रस्सी कँधे रखे भयभीत दौड़ता-हाँफता प्रवेश करता है। सिपाही जी को देखकर वह स्टेशन-वेगन के पीछे छिपता है। सिपाही फगुआ को छिपते देख लेता है। लपककर फगुआ को पकड़ता है और पोल की ओर लौटता है।

फगुआ —(गिड़गिड़ता है) न सरकार, हम कौनो कसूर न किआ है। हमही छोड़ दीं।

सिपाही —गाड़ी के पीछे क्या करने गया था ?

फगुआ —कुछो न सरकार।

सिपाही —कहाँ से भागा आ रहा है ?

फगुआ —उस गाम से सरकार। (बतलाता है)

सिपाही —वहाँ क्या करने गया था ?

फगुआ —महतो जी बुलाइन थे; अँगना के कुआँ उड़ाहे लागी।

रिपोर्टर —मैं तो समझ रहा था कोई चोर-उचक्का है।

सिपाही —तो महतो जी का कुआँ उड़ाह कर आ रहा है। कितनी मजदूरी दीहिन हैं महतो जी ?

फगुआ —कुछो न मिललई सरकार।

रिपोर्टर —गाँवों में भी इतना शोषण होता है; मैं नहीं समझता था। कुआँ उड़हवाकर महतो जी ने एक पैसा भी मजदूरी नहीं दी। गजब हो गया।

फगुआ —कुआँ उड़ाहबे कहाँ किया।

सिपाही —इतना झूठ क्यों बोलता है। अभी-अभी तो कह रहा था कि महतो जी का कुआँ उड़ाहकर आ रहा हूँ।

फगुआ —गाम में आज भगदड़ मचल हुई।

रिपोर्टर —किसलिये ?

फगुआ —पुलिस और मिलीटरी आके सबेरे-सबेरे आज गाम के घेर लीहिस है। घर-घर रोना-धोना हो रिआ है। लड़कन सब भाग के केतारी के खेत में लुक गिआ है।

रिपोर्टर —लेकिन ऐसा करने का कोई कारण तो होगा ?

सिपाही —कारण तो तुम्हारे सामने ही उल्टा पड़ा है; समझते क्यों नहीं।

फगुआ —गाम के जनानी सब कह रहीस थी कि सरकारी गाड़ी उलट देवे के झूठा बहाना बना के सरकार गाम के सब जुआन को पकड़ के ले गिआ।

रिपोर्टर —अच्छा; तो गाड़ी गाँववालों ने उलट दी है। तभी तो गाँववाले कोई दिखलायी नहीं देते हैं।

सिपाही —तुम निठाह बुद्धू हो। पास में जरी भी अकिल नहीं है और चले हो रिपोट बटोरने।

रिपोर्टर —ऐसा मत कहो। कल सबेरे के लिये सनसनीपूर्ण खबर के लिए जोरदार मसाला है।

फगुआ —सुने में आया है कि सरकार सबको पकड़ के जबरदस्ती नसबन्दी करे खातिर ले गिआ है।

सिपाही —ऐसा कहोगे तो तुम्हारी भी नसबन्दी हो जायेगी।

फगुआ —अइसा मत कीजे सरकार हमार बंस बूड़ जायेगा।

रिपोर्टर —तो क्या हुआ ? इसी बहाने धरती पर कुछ गरीब तो कम हो जायेंगे ।

सिपाही —चूना है ?

फगुआ —होतई सरकार । (धोती की लपेट से चुनौटी निकालता है । ढक्कन खोलकर सिपाही जी की ओर बढ़ाता है)

सिपाही —(चुनौटी से चूना निकालता है और खैनी में मिलाता है) का नाम हुआ तुम्हारा ?

फगुआ —(चुनौटी लपेट में खोंसता है) फगुआ सरकार ।

रिपोर्टर —इसका माने क्या हुआ ?

सिपाही —हर नाम का माने नहीं होता है ।

रिपोर्टर —कोई-न-कोई कारण तो अवश्य होगा ।

फगुआ —कारण कुछो न है बाबू; फगुआ के दिन जनम लिया था; एही से बनल-बनावल नाम धरा गिआ—फगुआ । हमरा नीअन के नाम पतरा-पोथी औ मुहुरत देख के थोड़े धराता है । सीधा-साधा एगो नाम होवे के चाही ।

रिपोर्टर —फिर तो कोई बढ़िया-सा नाम होना चाहिए था ।

फगुआ —बढ़िया नाम लागी बढ़िया काम भी तो होवे के चाही ।

सिपाही —(खैनी फगुआ को देता है । रिपोर्टर की ओर मुड़कर) तुम भी लोगे ?

रिपोर्टर —अब तक तो नहीं खायी है ।

सिपाही —तो अब से शुरू कर दो ।

रिपोर्टर —फिर भी मन डरता है ।

फगुआ —शुरू-शुरू में ऐसा होता ही है । खाय लागब तब सब ठीक हो जावेगा । मन लुसफुसा रहा है तो जरा-सा ले लिहीं ।

सिपाही —फगुआ ठीक कहता है, ठोर पर धर कर देखो न ?

रिपोर्टर —तुम दोनों आदमी जिद कर रहे हो तो जरा-सा दो। देखता हूँ, कैसा लगता है।

सिपाही —तो लो (**खैनी देता है। रिपोर्टर मुँह में रखता है। कै की प्रतिक्रिया और सिर में चक्कर। रिपोर्टर बेहोश होता है और वहीं गिरता है**)

फगुआ —खैनी का खिलाये कि लेनी-के-देनी पड़ गिआ।

सिपाही —दौड़कर कहीं से पानी लाओ।

फगुआ —पानी मिलतो चाय के दोकान पर, जाइ-आवे में काफी टैम लगेगा। इकरे टाँग के दोकान पर ले जाता हूँ। (**रिपोर्टर को पीठ पर लादकर एक ओर दौड़ कर जाता है**)

सिपाही —जिस आदमी के पेट में बात नहीं पचती है, उसके पेट में खैनी कैसे पचेगा। ठोर पर धरते ही कै हो गया।

फेरीवाला लड़का—(**लैला की उँगलियाँ, मजनूँ की पसलियाँ चार आने जोड़ा, चार आने जोड़ा की टेर लगाता सिर पर टोकरी लिये एक ओर से प्रवेश करता है**)

सिपाही —इधर लाओ; देखें कैसी है।

लड़का —(**सिपाही जी के पास आकर बैठता है। टोकरी रखता है**) यह लीजिये बिल्कुल टटकी है।

बटेसर राय —(**प्रवेशकर पास आता है**) क्या ले रहे हैं, सिपाही जी ?

सिपाही —लैला की उँगलियाँ और मजनूँ की पसलियाँ।

बटेसर राय —गजब हो गया। आग लगे इस जमाने को। भला बाजार में मरे इन्सानों की उँगलियाँ और पसलियाँ बिकने लगीं।

लड़का —सब-की-सब बिक गयीं; केवल दो बच रही हैं।

बटेसर राय —(पास आकर देखता है।) धत् तेरी की ? यह तो ककड़ियाँ हैं।

लड़का —ककड़ियाँ कहकर आप इनकी बेइज्जती कर रहे हैं।

सिपाही —लड़का ठीक कहता है। कैसे देता है ?

लड़का —चार आने जोड़ा।

सिपाही —यह तो आम लोगों के लिये है।

लड़का —भाव तो एक ही है सरकार।

बटेसर राय —अरे सिपाही जी हैं, कुछ कम कर दो।

लड़का —परता नहीं पड़ता है।

सिपाही —सीधी उँगली से घी नहीं निकलता राय जी। घी निकालने के लिये उँगली टेढ़ी करनी पड़ती है। (एक ककड़ी निकालता है। तोड़ता है। आधा बटेसरराय को देता है और आधा स्वयं खाता है। लड़का एक क्षण उसी प्रकार बैठा रहता है।)

लड़का —पैसा दीजिये; आगे जाना है।

सिपाही —तुम्हें यहाँ बैठाये हुए कौन है ? जाओ।

लड़का —पैसे लिये बिना कैसे चला जाऊँ।

बटेसर राय—सरकारी सड़क पर फेरी लगाकर माल बेचते हो और सिपाही जी से पैसा माँगते हो। भाग यहाँ से।

लड़का —देखिये; गरीब आदमी हूँ; इसी से गुजर-बसर होती है। नहीं दीजियेगा तो घर से दंड लगेगा।

बटेसर राय—एक घर तो डायन भी बकसती है।

लड़का —बकसती होगी; लेकिन मेरे साथ लाचारी है।

बटेसर राय —क्यों ?

लड़का —मैं डायन नहीं हूँ ।

सिपाही —होते तो बकसते न ?

लड़का —तब की बात अभी कैसे कही जाये ।

बटेसर राय—बड़ा बातूनी नजर आता है ।

लड़का —सही बात कहनेवाला बातूनी कहलाता ही है ।

सिपाही —ज्यादे फुटानी मत छाँटो । भूँजावाला, मूँगफलीवाला, बरफ वाला और तुम जैसे फेरीवालों को हम सिपाही जी पैसा देने लगें; तो हुआ ।

लड़का —काहे नहीं दीजियेगा ?

सिपाही —यह सड़क तुम्हारे बाप की है ?

लड़का —सड़क से मुझे लेना-देना है ? पैसे दीजिए मैं चलूँगा ।

बटेसर राय —पैसे तुम्हें मैं दूँगा । पहले यह बतलाओ कि तुम्हारे घर में कितने लोग हैं ?

लड़का —पिताजी हैं ; जो बराबर बीमार रहते हैं । माँ हैं, जो पिताजी की सेवा करती हैं और दो-एक घरों में चौका-बर्त्तन का काम करती हैं । एक मैं हूँ जो हाई-स्कूल में पढ़ता हूँ । फुर्सत के समय फेरी लगा कर अपने स्कूल खर्च और घर खर्च के लिये पैसे कमा लेता हूँ ।

बटेसरराय—कुल मिलाकर तुम लोग तीन जने हो ?

सिपाही —यह सब काहे के लिये पूछ रहे हो राय साहिब ! लड़के को जाने दो नहीं तो और टंटा खड़ा करेगा ।

बटेसर राय —अब नहीं करेगा ।

लड़का —क्यों नहीं करूँगा। जब तक पैसे नहीं मिलेंगे; मैं चुप नहीं रहूँगा।

बटेसर राय —तुम्हें केवल पच्चीस पैसे चाहिये और मैं पच्चीस रुपये देने जा रहा हूँ। यह लो पाँच रुपये एडवान्स के। शेष बीस रुपये तुम्हें कल शाम को मिल जायेंगे।

लड़का —पच्चीस रुपये ? फिर वापस तो नहीं माँगोगे। (लेता है)

बटेसर राय—नहीं माँगूँगा; किन्तु एक काम करना होगा। (ठहर कर) कल ·· पार्टी का बहुत बड़ा जुलूस निकलनेवाला है। अपने माता-पिता के साथ जुलूस में शरीक होना होगा।

लड़का —अब समझा।

सिपाही —होशियार नजर आते हो।

लड़का —लेकिन मैं उस पार्टी के जुलूस में शरीक होना नहीं चाहता।

बटेसर राय—क्यों; इसमें भला क्या हानि है ?

लड़का —मेरा मन तैयार नहीं होता है। यह लो पाँच रुपये। मैं चलता हूँ। (जाता है)

(फगुआ लौटकर आता है; किन्तु उसे कोई नहीं देखता है,। कन्धे पर रस्सी रखकर वह जाना चाहता है)

फगुआ —चलिओ सिपाही जी।

सिपाही —अरे; तुम आ गये ? उस रिपोर्टर का क्या हाल-चाल है ?

फगुआ —चुटकी भर खइनी का खिलाये कि बेचारा हग-हग भर लेक चाय के दुकान पर। मुर्दा अइसन पड़ल है। हमरा जल्दी रहो से इसे चल अइलियो। काम नहीं मिलेगा तो बाल-बुतरू भूखले रह जइतो।

सिपाही —राय जी; फगुआ के लिए कुछ जुगाड़ कर दो। बेचारा गरीब आदमी है और आज काम भी नहीं मिलने की उम्मीद है।

बटेसर राय—मैं न कहाँ कहता हूँ। एक को किया सो आपके सामने ही फेंक कर चला गया।

फगुआ —का बात है सिपाही जी।

बटेसर राय—कितने लोग तुम्हारे घर में हैं ?

फगुआ —आठ जने राय जी। चार बेटे; दो बेटियाँ और दो हम दोनों मियां-बीबी।

बटेसर राय—तो हम तुम्हें चालीस रुपये देंगे।

फगुआ —चालीस रुपये !

बटेसर राय—हाँ; चालीस रुपये। कल शहर में पार्टी का जुलूस निकलने वाला है और तुम्हें उस जुलूस में परिवार के साथ शरीक होना है।

फगुआ —बस।

बटेसर राय—हाँ; यह लो बीस रुपये बतौर पेशगी के। तालाब वाले मैदान में परिवार के साथ आ जाना। वहीं से जुलूस निकलेगा। बाकी बीस रुपये जुलूस के बाद तुम्हें मिल जायेंगे।

सिपाही —काम जल्दी निपटाइये और देश को आगे बढ़ाइये। क्या सोचता है; ले-लो बीस रुपये। घर आयी लक्ष्मी को ठुकराना नहीं चाहिए।

फगुआ – लाब ऽ; जब सिपाही जी के अइसने राय है तब ना करते भी तो न बनेगा। (रुपये लेकर धोती की लपेट में खोंसता है) निश्चित रहियेगा राय जी, आ जइबो।

बटेसर राय—चलें सिपाही जी, और बहुतों के पास जाना है। कल के जुलूस के लिए कम से कम सौ आदमी का इन्तजाम करना है। (जाता है)

सिपाही —(**बटेसर राय को सुनाने की गरज से**) सब पर दया, चीलर पर नाहीं। ठीके कहा है।

बटेसर राय—सो क्या सिपाही जी?

सिपाही —हमरो घर में चार जने रहे राय जी।

बटेसर राय—समझ गया; यह लीजिये दस रुपये। जुलस में शरीक होने के लिये। तालाब के पास वाले मैदान में भेज दीजियेगा।

सिपाही —(**रुपये लेता है**) हमारे साथ भी फगुआ जैसा ही व्यवहार होगा, क्या राय जी?

बटेसर राय—तो क्या कहते हैं?

सिपाही —देखो; हम हैं सरकारी आदमी; सब कुछ मेरे सामने हुआ है। ऐसी ··हालत में

बटेसरराय—यह दस और रख लीजिये। अब तो खुश हैं।

(**जाता है। सिपाही नोट उलट-पलटकर ललचाई नजरों से देखता है**)

: दृश्यान्त :

दूसरा दृश्य

(पर्दा उठता है और 'गरम बादाम है' की हाँक लगाता लड़का एक ओर से प्रवेश करता है। किसी को वहाँ नहीं देखकर आगे बढ़ता है। दूसरी ओर से रिपोर्टर प्रवेश करता है।)

रिपोर्टर —कैसे देता है।

लड़का —तीस पैसों के पचास ग्राम।

रिपोर्टर —ताजा है? (एक बदाम तोड़कर मुँह में डालता है)

लड़का —गरम तो नहीं हैं; लेकिन है टटका। आज सबेरे का भूना हुआ है।

रिपोर्टर —जब तक ड्राइवर नहीं आ जाता है तब तक तो समय काटना ही पड़ेगा और समय काटने के लिये······

लड़का —दे दूँ पचास ग्राम?

रिपोर्टर —लेना ही पड़ेगा। (घेरे पर बैठता है और रूमाल निकालकर फैलाता है। लड़का बादाम तौलकर रूमाल पर देता है। नमक और मिर्च भी देता हैं। रिपोर्टर खाता है)

लड़का —लेकिन ड्राइवर तो गाँव की ओर गया हुआ है।

रिपोर्टर —वह गाँव में टहल रहा है और मैं यहाँ उसके रिपोर्ट के लिये बैठा हूँ। तुम्हें मिला था?

लड़का —तभी तो कह रहा हूँ। वह गाँव में आदमी जुगाड़ करने गया है।

रिपोर्टर —किसलिये ?

लड़का —गाड़ी को सही करने के लिये।

रिपोर्टर —फिर तो रुकना ही पड़ेगा।

लड़का —आज सिपाही जी कहीं दिखलायी नहीं दे रहे हैं ?

रिपोर्टर —आजकल लोग-बाग सिपाही देखकर छिपे फिरते हैं और तुम उसका पता पूछ रहे हो। ताज्जुब है ?

लड़का —दरअसल उसकी नजर से मैं बचना चाहता हूँ; इसलिये पूछ बैठा।

रिपोर्टर —शीप (Sheep)+अही से दूर ही रहने में खैरियत है।

लड़का —मेरी समझ में कुछ नहीं आया। खुलासा कीजिये न।

रिपोर्टर —शीप (Sheep) के मायने जानता है ?

लड़का —यह अँग्रेजी का शब्द है और इसका हिन्दी-अनुवाद भेड़ होता है।

रिपोर्टर —बिल्कुल ठीक। और अही मायने ?

लड़का —संस्कृत का शब्द है और इसका अर्थ साँप होता है।

रिपोर्टर —तेज नजर आते हो; कहीं पढ़ते हो क्या ?

लड़का —हाई स्कूल की दसवीं श्रेणी में हूँ; लेकिन शीप और अही से तुम्हारा क्या प्रयोजन है; मैं समझ नहीं पा रहा हूँ।

रिपोर्टर —मैं कह रहा था; तुम्हारे सिपाही जी आफिसरों के सामने शीप (भेड़) हैं और गैर लोगों को डँसते हैं, इसलिये अही हैं। अही का स्वभाव तो डंसना ही है न ?

लड़का —कमाल ! तुम्हारा शीप और अही का हुक सिपाही जी के हुक से सोलह आने फिट बैठता है। मान गया तुम्हें।

रिपोर्टर —तुम्हें भी डँस चुके हैं क्या ?

लड़का —एक बार की बात हो तो कोई याद रखे; यहाँ तो हर रोज सुबह-शाम हम इस शीप+अही की डंस लाचारी की मुस्कुराहट पर झेलते हैं। शुरू-शुरू में बड़ा कैसा तो लगता था। अब तो सब तरह से हम भी अभ्यस्त हो गये हैं, इस मालेमुफ्त दिले बेरहम की डंस के।

रिपोर्टर —किधर से आ रहे हो ? माल बहुत कम बचा है।

लड़का —तालाब वाले मैदान में जुलूस का केलवा था न; वहीं से आ रहा हूँ।

फगुआ —(नशे में कन्धे पर नारियल की रस्सी लिये एक ओर से प्रवेश करता है। नयी बनियाइन पहन हुए है; जिस पर लाल और मोटे अक्षरों में लिखा है; 'हम सुनहरे कल की ओर बढ़ रहे हैं। लड़के की अंतिम बात सुनता है) मिटिंग से आ रहे हो ? मैं भी वहीं से आ रहा हूँ। हम सुनहरे कल की ओर बढ़ रहे हैं और हमारे साथ-साथ यह गाड़ी भी बढ़ रही है। देख रहे हो न ? यहाँ बैठकर तुम लोग किसका इन्तजार कर रहे हो ?

लड़का —तुम्हारा ही कर रहा था।

रिपोर्टर —नहीं; हम ड्राइवर के आने का इन्तजार कर रहे हैं।

फगुआ —तुम दोनों झूठ बोलता है। नहीं तुम ड्राइवर के आने का इन्तजार कर रहे हो और नहीं यह लड़का मेरे आने का इन्तजार कर रहा है।

रिपोर्टर —तो ?

फगुआ —तुम दोनों उस मास्टर का इन्तजार कर रहे हो।

लड़का —इधर तो कोई मास्टर नहीं आया है।

फगुआ —तो किधर गिआ ? जुलूस में भी कहीं दिखलाई नहीं दिआ और इधर भी नहीं आया है। तो किधर गिआ ? कहीं मिल गिआ तो साले मास्टर की सारी मास्टरी निकाल कर रख दूँगा।

रिपोर्टर —भला मास्टर ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है जो इस प्रकार बरस रहे हो ?

फगुआ —उस मास्टर के बच्चे को तुम नहीं जानते; नमरी हरामी है।

लड़का —तुम्हारे लड़के को स्कूल से निकाल-बाहर किया है क्या ?

फगुआ —मेरा कोई लड़का-फड़का स्कूल में नहीं पढ़ता है।

रिपोर्टर —फिर काहे के लिये उस मास्टर पर लाल-पीले हो रहे हो ?

फगुआ —उसने मेरे पैसे मार लिए हैं।

लड़का —तुम्हारा पैसा ! और मास्टर ने मार लिया ? खूब कहते हो।

फगुआ —खूब अनजान बनते हो। मिटिंग में गये थे न ?....बिना पैसा लिये ही चले गये थे ? फिर तो उस मास्टर ने तुम्हारा पूरा-का-पूरा हिस्सा मार लिया। समझे।

लड़का —तुम्हारी बात पकड़ में नहीं आती है।

फगुआ —कैसे आवेगी ? पकड़ना जानो तब न। कहकर मास्टर ने पूरे पैसे नहीं दिआ। आठ जनों को चालीस बनते थे; मास्टर ने केवल बीस दिआ है और बाकी के बीस स्वयं डकार गिआ।

रिपोर्टर —मास्टर ने ठीक किया, नहीं तो तुम उसकी भी शराब पी जाते।

फगुआ —तुम दोनों उस बेइमान मास्टर की तरफ़दारी करता है। तुम उसके माफिक दलाल है।

लड़का —ऐसी बात नहीं है, हम उस मास्टर को एकदम नहीं जानते हैं।

रिपोर्टर —बड़ा लफंगा नजर आता है। हमलोगों को दलाल कहता है। देखो जी मुँह संभालकर बातें करो, नहीं तो······

फगुआ —जीने नहीं दोगे। किसकी माँ बियानी है जो फगुआ को ललकारे। बड़ों-बड़ों का कीचड़ निकाल कर बाहर फेंक दिया है; फिर तुम दोनों किस खेत की मूली हो। तुम्हें भी उठाकर उस पार फेंक दूँगा।

रिपोर्टर —अरे जा-जा; कभी मक्खी मारी है जो हमें मारकर फेंक देगा?

फगुआ —देखो; ताव मत दिलाओ नहीं तो फिर फगुआ के गुस्से को सँभाल नहीं सकोगे। सच-सच बताओ, ससुरा मास्टर इधर आया है कि नहीं? तुम दोनों जानबूझ कर झूठ बोल रहा है।

लड़का —कह तो दिया, इधर कोई मास्टर नहीं आया है।

रिपोर्टर —झूठ बोलता होगा तुम्हारा बाप।

फगुआ —मेरे बाप को गाली देता है; फिर तो आओ। (रस्सी फेंककर ताल देता है। पैंतरेबाजी करता है।) है कोई असल बाप का बेटा, जो फगुआ से हाथ मिलावे। बड़ी ऊँची हाँक लगा रहा था, आ तो।

(पृष्ठभूमि में हो-हल्ला। पकड़ो-पकड़ो दलाल है। दलाल है। वह भागा, वह भागा, पकड़ो, पकड़ो। हमारा पैसा हड़प गया है। मारो। मारो। बटेसर राय भागता हुआ प्रवेश करता है। भय से काँप रहा है। उसकी घिग्घी बँध जाती है। फगुआ से टकराता है। दोनों गिरते हैं। बटेसरराय तेजी से उठता है।

भागता है। फगुआ लपककर बटेसर राय को पकड़ता है। दोनों में हाथापाई होती है।)

बटेसर राय— छोड़ दो मुझे :

फगुआ —वाह बेटे; भागे जा रहे हो। कित्ती देर से ढूँढ़ रहा हूँ : लाओ; निकालो मेरे पैसे। मेरा मुँह का क्या देखता है; पैसे निकालो; नहीं तो भुर्ता बना कर रख दूँगा।

रिपोर्टर —अरे; यह तो तकियापुर प्राइमरी स्कूल का हेड मास्टर बटेसर राय हैं।

बटेसर राय —जी हाँ; मैं ही उस स्कूल का हेडमास्टर हूँ। मेरा नाम बटेसरराय है।

फगुआ — हो तो क्या हुआ; निकालो मेरे बाकी के बीस रुपये; नहीं तो सारी हेडमास्टरी बाहर निकाल दूँगा।

लड़का —बेचारे मास्टरजी, दो पाटों के बीच फँसे कैसे छटपटा रहे हैं।

बटेसर राय—कैसे रुपये ? मेरे यहाँ तुम्हारा कोई पैसा बाकी नहीं है। हटाओ अपना हाथ। (झटकता है)

फगुआ —अरे वाह; इतनी जलदी रंग बदलते हो। कल की, इसी ठौर की, सारी बातें इतनी जल्दी भूल गया। मुझे नहीं पहिचानते हो तो जान लो मेरा नाम फगुआ है और काम बड़ों-बड़ों का कीचड़ उड़ाहना। समझे।

बटेसर राय —मेरे साथ लाचारी है, मैं अब और पैसे नहीं दे सकता। छोड़ दो मुझे।

फगुआ —बड़ी मुसकिल से तो पकड़ाये हो और योंही तुम्हें जाने दूँ। पहले पैसे निकालो फिर कहीं जाना।

रिपोर्टर —कैसा पैसा माँग रहा है मास्टर जी से।

लड़का —तुम नहीं जानते। मास्टरजी कल मेरे पास भी आये थे और मुझे भी पाँच रुपये दिये थे।

रिपोर्टर — किसलिये ?

लड़का —आज के उस····पार्टी की जुलूस में शरीक होने के लिये।

रिपोर्टर — तो यह बात है; अब समझा।

बटेसर राय —फिर तो आपही कहिये, इसमें मेरा क्या कसूर है। पार्टीवालों ने जब पैसे नहीं दिये तो मैं कहाँ से दूँगा ?

लड़का — फिर आपने वादा ही क्यों किया था ?

बटेसर राय —वादा नहीं करता तो अपनी नौकरी से जाता। कोटा पूरा करना था कोटा। मरता क्या नहीं करता।

फगुआ —कोटा-फोटा मैं कुछ नहीं जानता। मेरे पैसे दो। पूरे परिवार के आठ सदस्यों ने पूरे दिन कन्धों पर झंडा ढोया है और सड़कों पर हाँक लगायी है। समझे मास्टर।

(फगुआ छीना-झपटी करता है। मास्टर बचाव करता है। दोनों एक प्रकार से आप-धापी करते हैं। एक ओर से सिपाही प्रवेश करता है। फगुआ सिपाही को आता देखकर सहमता है और उसकी पकड़ ढीली पड़ती है। मास्टर को छोड़ देता है। चुप-चाप खड़ा रहता है।

सिपाही — यह सब क्या हो रहा था ?

फगुआ — मास्टर से कल के बाकी पैसे माँग रहा था। कल की बातों के तुम अकेला चस्मदीद गवाह हो।

सिपाही —सो तो है।

फगुआ —फिर तो मेरे बाकी पैसे मास्टर से दिलवा दो।

बटेसर राय—कहाँ से दिलवा देंगे; रहेंगे तब न।

फगुआ —सो सब मैं कुछ नहीं जानता। पूरे परिवार के साथ मैंने तुम्हारी हाजरी लगायी है; पैसे तो तुम्हें देने ही होंगे—चाहे जहाँ से दो।

सिपाही —फगुआ ठीक कहता है। हम तो तुमको जानते हैं; किसी पार्टी-वार्टी को हम नहीं जानते।

बटेसर राय —सरकारी आदमी होकर तुम भी इसकी तरफ से बोलने लगे ?

रिपोर्टर —मामला बहुत गड़बड़ मालूम पड़ता है।

लड़का —देखते चलो; क्या-क्या रंग उभरता है।

सिपाही —तुमलोग चुप रहो जी; दाल-भात में मसलचन्द बनकर अपनी हैसियत खराब मत करो। फगुआ; तलाशी लो इस मास्टर की।

(फगुआ तलाशी लेता है। मास्टर बचाव करता है। फगुआ मास्टर को पूरी ताकत से पकड़ता है और जमीन पर पटकता है। मास्टर दर्द से बाप-बाप चिल्लाता है। एक वृद्ध व्यक्ति धोती-कुर्त्ते में बेंत की छड़ी पर अपना भार टेकता आता है। मास्टर झटके-से उठता है और उस वृद्ध व्यक्ति से लिपट जाता है।)

बटेसरराय —बचाइये; मुझे बचाइये, दोनों मिलकर मुझे मार डालना चाहते हैं। **(फगुआ तथा सिपाही की ओर संकेत करता है)**

फगुआ —आप हट जाइये बाबूजी; नहीं तो····

वृद्ध व्यक्ति —मुझ पर भी चोट करोगे, यही न तो लो; मैं खड़ा हूँ, जो तुम्हारे मन में आवे सो करो।

सिपाही —तो आप ही फैसला कर दीजिये; तकरार खतम हो जायेगी।

वृद्ध व्यक्ति —आखिर बात क्या है? कुछ समझ में आये तभी न कोई फैसला कर सकेगा। क्या बात है जी तुम इतना डरे हुए क्यों हो?

लड़का —मास्टरजी की दलाली नहीं चली। सिर मुड़ाते ही सिर पर बेल आ गिरा है।

रिपोर्टर —बेचारे चले थे पार्टी का उद्धार करने और अब स्वयं के उद्धार के लिये तुम्हारा पैर पकड़े हुए हैं।

वृद्ध व्यक्ति —कुछ बोलते क्यों नहीं? ये लोग क्या कह रहे हैं?

बटेसर राय —जो कुछ वह कह रहे हैं, सब सही है मैं अपने किये पर स्वयं लज्जित हूँ। फगुआ को बाकी पैसे मैं नहीं दे सकता, क्योंकि पार्टीवालों ने मुझे और पैसे नहीं दिये। मैं क्षमा चाहता हूँ।

ड्राइवर —(आता है।) मैं नाहक आदमियों के लिये इधर-उधर तलाश कर रहा था। यहाँ तो इत्ते सारे लोग जमा है।

रिपोर्टर —तो, तुम ड्राइवर साहेब हो? बहुत देर से तुम्हारी इन्तजारी कर रहा था। तुम्हारी रिपोर्ट····

ड्राइवर —रिपोर्ट की ऐसी-तैसी। हटो सामने से। लगता है गाड़ी धँसती जा रही है। (गाड़ी के पास जाकर देखता है) अरे; लोगों इधर आओ, इधर; गाड़ी अन्दर धँसती जा रही है। जोर लगाओ भाइयो, नहीं तो काम बिगड़ जायेगा।

लड़का —लेकिन यह तो सुनहरे कल की ओर बढ़ रही है।

फगुआ —मास्टर मेरे पैसे दो; मैं चलता हूँ।

सिपाही —अभी कोई नहीं जायेगा। चलकर जोर लगाओ और गाड़ी को आर्डर में करो। (गाड़ी की ओर जाता है और पास जाकर) फगुआ, मास्टर, रिपोर्टर सब कोई यहाँ आओ; नहीं तो चलान कर दूँगा। चलो। (सभी गाड़ी के पास जाता है)

ड्राइवर —तुम भी आओ बाबू जी; वहाँ क्यों खड़े रह गये ?

वृद्ध व्यक्ति —मुझसे कुछ नहीं हो सकेगा। मेरी भुजाओं में अब जोर आजमाइश करने का बल नहीं रहा। मैं तो खुद अपना बोझ दूसरे पर डालकर इधर-उधर थोड़ा चल-फिर लेता हूँ।

लड़का —मैं भी चलता हूँ दादा, चलो।

ड्राइवर —सुना है, एक तिनका डूबते इन्सान को बचा लेता है, और तुम तो एक इन्सान हो। तुम्हारे पास बल कम है तो तजुर्बा अधिक है और हमारे पास बल अधिक है तो तजुर्बा कम है।

सिपाही —तो देखता क्या है; बाबू को लिवा लाओ उनका तजुर्बा और हमारा बल। हम सफल होंगे।

(फगुआ रस्सी उठा लाता है। रस्सी का एक छोर गाड़ी में बाँधता है और दूसरा छोर पोल से लपेटता है। ड्राइवर लौटकर वृद्ध के पास आता है। एक बाँह वह पकड़ता है और दूसरा लड़का। इस प्रकार उसे पोल के पास ले जाते हैं। फगुआ रस्सी का दूसरा छोर वृद्ध के हाथ में देता है। वृद्ध तथा लड़का छोर को पूरी ताकत से खींचते हैं। शेष लोग गाड़ी के पीछे जाकर जोर लगाते हैं।)

[पर्दा गिरता है।]

वह साँझ : वह शव

पात्र

□

सेन्ट्रल एक्साइज का एक इन्सपेक्टर

जमुनमा—एक संताल युवक

सुगिया—जमुनमा की स्त्री

टिनगू—अधेड़ उम्र का एक संताल ग्रामीण

कुत्ता

मछली

प्रथम दृश्य

समय —साँझ का सूरज पश्चिम दिशा में डूब रहा है।

स्थान —गाँव के बाहर एक विशाल पोखरे का किनारा।

[पर्दा उठता है। पोखरे के कछार पर एक सड़ा-गला शव दिखलायी पड़ता है। शव के पैर का कुछ भाग अब भी पानी में है। शव को एक कुत्ता नोचता दिखलायी पड़ता है। सेन्ट्रल एक्साइज का इन्सपेक्टर तम्बाकू के खेतों का मुआयना करता हुआ पोखरे पर से गुजरता दिखलायी पड़ता है। दुर्गंध के कारण नाक बन्द करता है। दुर्गंध किस ओर से आ रही है, यह अन्दाज करने के लिये इधर-उधर देखता है। शव को नोच रहे कुत्ते पर उसकी दृष्टि पड़ती है। ढेला उठा कर कुत्ते को मारता है। कुत्ता एक ओर भागता है। इन्सपेक्टर शव को देखकर सिहर उठता है और किसी विचार में खो जाता है]

एक आवाज —(**प्रतीत होता है जैसे शव ही बोलता हो**) क्या सोचने लगे हाकिम (**इन्सपेक्टर अब भी मौन है।**) तुम्हीं से पूछ रहा हूँ। नहीं सुनते ? ओ हाकिम ! किस विचार में खो गये ?

इन्सपेक्टर —(**विचारों की शृंखला टूटती है**) ऐं !

आवाज —सच मानो हाकिम ! कुत्ते को भगाकर तुमने बड़ा उपकार किया है।

इन्सपेक्टर—कौन हो तुम ?

आवाज —इस शव की आत्मा ।

इन्सपेक्टर—अब, इस सड़े-गले शव से इतनी ममता क्यों है ? इसमें अब क्या धरा है ?

आवाज —सही है, जिस घर में वर्षों से रहता आ रहा था, अब वह ढह चुका है। और यदि वह इस प्रकार यहाँ पड़ा रहा तो कौए-कुत्ते उसके रहे-सहे अस्तित्व को भी शीघ्र ही मिटा देंगे।

इन्सपेक्टर —मैंने कौन-सा उपकार किया है ?

आवाज —वह कुत्ता जहाँ अपने दाँत गड़ाये हुए था, वहाँ मेरा दिल है।

इन्सपेक्टर —तो क्या हुआ ? सड़ा हुआ दिल रहा तो, नहीं रहा तो, कोई फर्क नहीं पड़ता है।

आवाज —उस दिल में मेरी प्रेयसी का प्यार कैद है।

इन्सपेक्टर —ओ; तब तो सोचने की बात है।

आवाज —तुम हाकिम हो। शायद बबुआन भी हो ! गरीबों के दिलों के दर्द को तुम लोग क्या जानो ?

इन्सपेक्टर —छोड़ो इन बातों को, मुझे भय लग रहा है।

आवाज —डरो मत। तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ूँगा। साँझ के फैलते अन्धेरे में यहाँ बड़ा सन्नाटा-सा लग रहा था। वह कुत्ता मुझे बहुत ही कष्ट दे रहा था।

इन्सपेक्टर —लेकिन अब तो वह चला गया है।

आवाज —इसलिए तो सोचा, तुमसे कुछ बातें कर अपने दिल के दर्द और साँझ के सन्नाटे को कुछ कम करूँ।

इन्सपेक्टर —लेकिन तुम हो कौन ? क्या नाम है ?

आवाज —वह तो तुम अपने सामने देख ही रहे हो।

इन्सपेक्टर —जो कुछ देख रहा हूँ, वह तुम नहीं हो। और जो तुम हो; वह मैं देख नहीं रहा हूँ।

आवाज —मेरा नाम जमुनमा था। इस पोखर के उस पार, वहाँ जो गाँव देख रहे हो, वह चन्दवा-रूपसपुर है।

इन्सपेक्टर —अच्छा, यही चन्दवा-रूपसपुर है—जहाँ संतालों की हत्या हुई थी !

आवाज —हाँ; यही वह गाँव है। गाँव के उस छोर पर जो जला हुआ पेड़ देख रहे हो, वह जामुन का पेड़ है। मेरी झोपड़ी के द्वार पर है। मेरे पैदा होने की खुशी में मेरे माँ-बाप ने उसी दिन वह पेड़ लगाया था। उस जामुन के पेड़ के नाम पर ही जमुनमा मेरा नाम रखा था। वह पेड़ और मैं एक ही दिन पैदा हुए थे। एक ही दिन मरे भी।

इन्सपेक्टर —तुम्हारी बातों ने मेरे मन में एक अजीब जिज्ञासा पैदा कर दी है। मैं और अधिक जानना चाहता हूँ।

आवाज —तो आओ मेरे साथ।

इन्सपेक्टर —चलो। (**इन्सपेक्टर एक ओर जाता है। पगध्वनि समीप से दूर जाती हुई सुनाई पड़ती है। फिर ठहर जाता है**)

(**दूर से** आती आवाज) उस दिन मैं बहुत-सारे केंकड़े पकड़ लाया था। झोपड़ी के द्वार के उस छोर पर बैठी मेरी घरवाली केकड़ों को धो-धाकर साफ कर रही थी। मेरी दुल्हिन को इस घर में आये अभी कुछ ही दिन हुए थे। पास ही इस पेड़ की जड़ पर यहाँ मैं बैठा था। मछली पकड़ने के लिये नया जाल तैयार कर रहा था।

[मंच पर अँधेरा छाया है। एक क्षण बाद जब प्रकाश उभरता है, तब एक संताल तरुण एक वृक्ष की जड़ पर बैठा मछली पकड़ने के लिये जाल तैयार करता हुआ दिखलायी पड़ता है। सामने एक संताल तरुणी बैठी केकड़े बना रही है। अपनी बड़ी-बड़ी आँखों से जब-तब उस तरुण को निहार-निहारकर निहाल हो रही है। तरुण भी बीच-बीच में अपनी आँखें फैलाकर तरुणी को देखता है। मन-ही-मन मुस्कुराता है]

जमुनमा —भगवान के लिये इस प्रकार न देखो।

सुगिया —छोड़ो इन बातों को। खाने की भी कुछ चिंता है।

जमुनमा —मेरे सामने जब तुम इस प्रकार बैठी रहती हो, तो मैं सब कुछ भूल जाता हूँ। भूख-प्यास न जाने कहाँ चली जाती है।

सुगिया —और तुम्हें जब अपने पास देखती हूँ तब मेरा मन भी तुम्हारी इस काठ-सरीखी बाँहों में खो जाने को होता है। सब कुछ मैं कह भी तो नहीं सकती।

जमुनमा —लेकिन तुम्हारी आँखें तो सब कुछ कह जाती हैं।

सुगिया —आँखों को अगर मुँह होते तो?

जमुनमा —न वे इतनी मादक होतीं और नहीं वे इतना कह पातीं, जितना मौन रहकर कहती हैं।

सुगिया —और होठ कुछ नहीं कहते हैं?

जमुनमा —वे बेचारे डरते हैं।

सुगिया —क्यों?

जमुनमा —जैसे ही होठ बोलने के लिये मुँह खोलेंगे, उनमें भरा हुआ अमृत चू जायेगा; इसलिये।

सुगिया —धत्! (एक क्षण मौन रहकर) ढोल ले आऊँ।

जमुनमा —नाचने का मन कर रहा है क्या ?

सुगिया —तुम्हारे ढोल के बोल होते ही वैसे हैं। ढोल पर जैसे ही तुम्हा थाप पड़ते हैं—हम सरीखी छोकरियों के पैर अपने-आप थिरकने लगते हैं।

जमुनमा —उस दिन मंगरा की शादी में झूमर गाते और नाचते हुए जिसनेरे तुम्हें देखा, तो बस तुम्हारा ही हो गया। मेरे मन को तुम्हारे स्वर ने और ढोल के बोल को तुम्हारे पैरों ने बाँध रखा है।

सुगिया —मैं भी तो उसी दिन से तुम्हारी हो गयी थी। ढोल बजाने की तुम्हारी इस अदा पर मैं मुग्ध हूँ।

जमुनमा —तुम्हें पाकर मैं भी निहाल हो गया हूँ। भगवान की बड़ी मेहरबानी हुई, जो तुम मिल गयी।

सुगिया —रस-रोमांस की बातें जाने दो। अभी भी सोचो।

जमुनमा —अब क्या करना है ?

सुगिया —कहा न, घर में कुछ नहीं है।

जमुनमा —तो क्या हुआ ?

सुगिया —अधिक भोले न बनो। बबुआन लोगों के पास जाकर कुछ उधार-पैंचा अनाज ले आओ।

जमुनमा —वे लोग देते बहुत कम हैं, किन्तु जली-कटी बहुत सुनाते हैं। कभी-कभी तो ऐसी बातें कह जाते हैं कि सुनकर शरीर का आधा खून वहीं सूख जाता है।

सुगिया —तो कुछ ड्योढ़िया (एक का डेढ़ गुणा) पर ही ले आओ।

जमुनमा —वह तो और भी महँगा पड़ता है। सोचो तो—लाओ एक सेर और लौटाओ डेढ़ सेर। यदि समय पर नहीं लौटाये, तो वह भी

ड्योढ़िया पर ड्योढ़िया होते-होते इतना अधिक हो जाता है कि खलिहान का सारा अनाज बबुआन के घर पहुँच जाता है।

सुगिया —सब-कुछ समझती हूँ; फिर भी कुछ तो करना ही होगा।

जमुनमा —मैंने सोच लिया है।

सुगिया —क्या ?

जमुनमा —आज की रात तो इन केकड़ों पर कट जायेगी। इन्हें आग में भूनकर भुरता बना लो। घर में नमक-मिर्च है न ?

सुगिया —है।

जमुनमा —हँड़िया[1] भी होगी।

सुगिया —थोड़ी-सी बच रही है।

जमुनमा —और हमें क्या चाहिए; केंकड़ों का भुरता, बचा-खुचा हँड़िया। खा-पीकर दोनों सो रहेंगे। रात कट जायेगी। किसी बबुआन के पास जाकर कुछ माँगने से बहुत अच्छा रहेगा।

सुगिया —और कल ?

जमुनमा —वह मुझ पर छोड़ो। थोड़ी ही देर में यह जाल तैयार हो जायेगा। कल सबेरे ही निकलूँगा और मछलियाँ मार लाऊँगा। अपने खाने भर रख लेंगे और शेष मछलियों से बबुआन टोला जाकर अनाज बदल लाऊँगा। धान कटने में अभी देरी है। अभी हमें इसी प्रकार चलाना होगा।

(सामने से टिनगू आता दिखलायी पड़ता है।)

सुगिया —टिनगू काका आ रहे हैं। **(उठकर झोपड़ी के भीतर जाती है)**

जमुनमा —जुहार है काका ! आओ; बैठो। कहाँ से आ रहे हो ?

टिनगू —**(बैठता है)** बबुआन लोगों के पास से।

---

(१) प्रकार की शराब।

जमुनमा —तो वे मान गये काका ?

टिनगू —तब तो कोई बात नहीं थी। वे मानने के लिये कतई तैयार नहीं हैं। कहते हैं, संताल लोग यदि खेत पर पहुँचे तो गोलियाँ चलेंगी।

जमुनमा —कई पुस्तों से हम सताल लोग बबुआन लोगों के खेत,बटाईदारी पर जोतते आ रहे हैं। फसल लगायें हमलोग और काटें बबुआन लोग। कहो, कहाँ का इन्साफ है ?

टिनगू —सो तो है। लेकिन हम करें क्या ? कहीं से कोई सुनवाई तो हमारी होती नही है।

जमुनमा —लेकिन ऐसा कब तक चलेगा चाचा। हम कब-तक इस प्रकार गूँगा बनकर उनका अत्याचार सहते रहेंगे। समय के साथ यदि बबुआन लोगों ने समझौता नहीं किया तो अनर्थ हो जायेगा।

टिनगू —इसके लिये वे तैयार हैं जामुन। किसी भी समय कुछ भी हो जाने की आशंका मुझे महसूस हो रही है।

जमुनमा —ऐसी बात है तब तो हमें भी संभल जाना चाहिये।

टिनगू —बबुआन के लोगों को भय है कि यदि हम खुशहाल हो गये तो फिर उनका बोरिया-बँधना कौन ढोयेगा।

जमुनमा —जब ऐसी बात है तब हम गरीबों की सेवा करने का दम क्यों भरते हैं ?

टिनगू —तुम्हारी सेवा अवश्य करेंगे—बशर्ते कि तुम्हारी पीठ से उन्हें उतरना न पड़े।

जमुनमा —बूढ़े मालिक के पास गये थे काका ? वे तो पुराने समाजसेवी रहे हैं।

टिन्गू —वहीं से आ रहा हूँ ।

जमुनमा —वे क्या कहते हैं ?

टिन्गू —बाँसुरी के सभी छिद्रों से आजकल एक ही स्वर निकल रहा है।

जमुनमा —फिर तो हमारा कल्याण नहीं है चाचा। इस वर्ष धान काटने देंगे कि नही चाचा ?

टिनगू —उम्मीद बहुत कम है। सारी तैयारियाँ वे कर चुके हैं। किसी भी समय धान काटने के लिये पहुँच सकते हैं। हरबे-हथियार के साथ आयेंगे। टोले के लोग, खेत की तरफ भी गये हैं जामुन ?

जमुनमा —हाँ काका; गये तो हैं।

टिनगू —फिर तो उनकी खैर नहीं है।

(पृष्ठभूमि से गोली चलने की आवाज। फिर भगदड़ तथा कराहने की आवाजें। चीख-पुकार की आवाजों को चीरता मारो! मारो!! कोई भागने न पाये। सालों को भून कर रख दो)

जमुनमा —**जाल बुनना बन्द करता है)** लगता है गोली चल गयी काका ? अब क्या होगा ?

टिनगू —**(पृष्ठभूमि की ओर जाता है। एक क्षण बाद भयभीत अवस्था में पुनः प्रवेश करता है।)** भागो जामुन, कहीं छिप जाओ। बबुआन लोग बन्दूक लिये इधर ही आ रहे हैं। **(एक ओर (भागता है)**

जमुनमा —हे भगवान्! **(अपनी झोपड़ी में घुसकर दरवाजा भीतर से बन्द करता है)**

पहला स्वर —**(पृष्ठभूमि से)** एक-एक को गोली से उड़ा दूँगा। मलिकान बनेंगे। जोतवाले कहलायेंगे।

दूसरा स्वर—भागकर सब इसी ओर तो आये हैं।

पहला स्वर—फिर कहाँ गये ? (ठहरकर) लगता है घरों में बन्द हो गये हैं।

दूसरा स्वर—तब देखते क्या हो ? बाहर से कुण्डियाँ लगा दो और सालों के घरों में आग लगा दो।

पहला स्वर—ठीक कहते हो। बन्दूक की गोलियाँ इन हरामजादों के लिये बहुत महँगी पड़ रही है।

(कुण्डियाँ लगाने की आवाजें। फिर दियासलाई जलाने की आवाज। एक क्षण बाद मंच पर धुआँ फैलने लगता है। पहले हल्का सफेद और बाद में घना काला। बाँस चरकने की आवाज। धुएँ को चीरती आग की लपटें दिखलायी पड़ती हैं)

पृष्ठभूमि से—(शव की आवाज में) और इस प्रकार हम सब अपने ही घरों में जीवित ही जला डाले गये। हम भाग नहीं सके। अपने-अपने घरों में बन्द आग की लपटों से हम सब लड़ते रहे। किन्तु हमारा कुछ वश न चला। पहले मैं गिरा। फिर मेरी पत्नी मेरे सीने पर अपना सिर रख कर जल मरी। जब हमारी झोपड़ियाँ जल गयीं और आग की लपटें थम गयीं तब बबुआन के लोग राख हटा-हटा कर हमें ढूँढ़ने लगे। हम दोनों को एक फटे-पुराने कम्बल में लपेट कर इस पोखरे में फेंक कर चलते बने।

(मंच पर फैला धुआँ हटता है। प्रकाश उभरता है और इन्सपेक्टर पूर्ववत खड़ा दिखलायी पड़ता है। क्षितिज में सूर्य का आधा भाग छिप चुका है। लालिमा फैली है। अचानक छप्प की आवाज होती है। इन्सपेक्टर का ध्यान

भंग होता है। वह देखता है, एक बड़ी मछली शव को जल में खींच ले गयी है)

इन्सपेक्टर —तुम चले गये ? मैं भी चलता हूँ। तुम्हारा रक्त बेकार नहीं जायेगा। एक-न-एक दिन वह अपना रंग अवश्य लायेगा। (इन्सपेक्टर एक ओर जाता है। सूरज का पूरा चक्का डूब चुका है। लौट रहे पक्षियों का कलरव)

[पर्दा गिरता है।]

कृतं स्मर

(रेडियोरूपक)

पात्र

□

एक स्कूल विद्यार्थी

वल्लभ भाई पटेल जब स्कूल विद्यार्थी थे

मास्टर छोटे लाल—स्कल टीचर

स्कूल का हृड मास्टर

एक और स्कूल टीचर

श्री झवेर भाई पटेल—वल्लभ भाई पटेल के पिता

एक पत्रकार

स्कूल के कुछ अन्य विद्यार्थी

कुछ महिलायें

अन्य नागरिक।

प्रथम दृश्य

पर्दा उठता है। बारह-तेरह वर्ष का एक लड़का मार्ग में बैठकर जमीन में गड़े पत्थर के एक टुकड़े को उखाड़ने में लगा दिखलायी पड़ता है। उसके दाहिने पैर के अँगूठे के अग्र भाग से रक्त निकल रहा है। अँगूठा बुरी तरह जख्मी है। पुस्तकें एक ओर रखी हैं। एक ओर से उसी वय का एक दूसरा लड़का प्रवेश करता है। क्षत-विक्षत लड़के के पास आकर रुकता है।

विद्यार्थी —क्या हो रहा है वल्लभ ?

वल्लभ —पत्थर उखाड़ रहा हूँ।

विद्यार्थी —सो तो देख रहा हूँ, किन्तु इस पत्थर ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है जो इसको उखाड़ फेंकने पर तुले हुए हो।

वल्लभ —इसने मुझे बुरी तरह चोट पहुँचाई है। देखो ! (अँगूठा दिखाता है) न जाने कितने बेगुनाह लोगों को इसने सताया होगा आज तो इसे उखाड़ कर ही दम लूँगा।

विद्यार्थी —तुम्हें इस प्रकार देख कर चाणक्य की कहानी याद आ गई।

वल्लभ —यह चाणक्य कौन था ?

विद्यार्थी —मास्टर छोटेलाल कहते थे कि चाणक्य सम्राट् चन्द्रगुप्त का प्रधान मन्त्री था। मन्त्री होने से एक दिन पहले वह कहीं जा रहा था। मार्ग में कुश फैले हुए थे। कुश चाणक्य के पैरों में गड़ने लगे। चाणक्य बुरी तरह आक्रान्त हो उठा। मार्ग में खड़े कुशों को

निर्मूल करने के लिए उनकी जड़ों में मट्ठा डालकर नष्ट कर डाला। वही आज तुम कर रहे हो।

वल्लभ —बुरा क्या कर रहा हूँ। जो कड़वे मुखवाले हैं, उन्हें तो ऐसी सजा मिलनी ही चाहिए। समझे, चाणक्य आज फिर पैदा हो गया है।

विद्यार्थी —(**वल्लभ की मदद** करता है।) सुना है, तुम संस्कृत का पढ़ना छोड़कर गुजराती के क्लास में दाखिल हो गये हो ?

वल्लभ —अपने पूज्य पिताजी से सुर भारती सस्कृत की सरसता की प्रशंसा सुनकर संस्कृत सीखने की गरज से बड़े उत्साह-उमंग के साथ मैं संस्कृत की श्रेणी में दाखिल हुआ था, किन्तु सब कुछ उल्टा लगा।

विद्यार्थी —वह कैसे ?

वल्लभ —कहाँ देववाणी का बहु प्रशंसित लालित्य-माधुर्य और कहाँ कोरे शब्दरूपों की उबा देनेवाली नीरस तोता रटन्त विद्या। कहो, यह भी कोई पढ़ाई है। संस्कृत के मास्टर संस्कृत पढ़ाने की विधि नहीं जानते हैं।

विद्यार्थी—ऐसा न कहो, अन्यथा मास्टर जी नाराज हो जायेंगे।

वल्लभ—उनकी नाराजगी की परवाह कौन करता है।

विद्यार्थी—पत्थर अब हिलने लगा है, एक बार कसकर जोर लगाओ।

वल्लभ —बोलो बजरंग बली की जय। (**दोनों जय बोलते हैं। पत्थर उखड़ जाता है। वल्लभ उसे एक ओर फेंकता है**)

विद्यार्थी—तुम्हारा अँगूठा तो बुरी तरह जख्मी हो गया है, स्कूल कैसे जाओगे ? यहीं से घर लौट जाओ।

वल्लभ — तुम भी खूब कहते हो, साधारण सी चोट लगी है और मैं घर लौट जाऊँ ? देखो, यह अभी ठीक हो जाता है। (पास पड़ी धूल उठाकर अँगूठे पर डालता है। अपनी पुस्तकें उठा कर पाठशाला की ओर चल देता है दोनों जाते हैं।)

(पर्दा गिरता है)

दूसरा दृश्य

पर्दा उठता है और गुजराती भाषा के शिक्षक छोटेलाल मास्टर अपने क्लास में दिखलाई पड़ते हैं। विद्यार्थी के साथ वल्लभ प्रवेश करता है। वल्लभ मास्टर जी को नमस्ते करता है और एक ओर बैठता है।

मास्टर छोटेलाल—तो तुम्हारा ही नाम वल्लभ है! इधर जाओ। (वल्लभ मास्टर जी के पास जाकर खड़ा होता है।) तुमने संस्कृत का क्लास छोड़ दिया है?

वल्लभ —हाँ मास्टर जी!

मा० छोटेलाल —क्यों?

वल्लभ —संस्कृत पढ़ाने की रटन्त प्रणाली देखकर संस्कृत पढ़ने का सारा उत्साह ठंडा पड़ गया।

मा० छोटेलाल —फिर गुजराती कैसे सीखोगे?

वल्लभ —जैसे और लोग सीखते हैं।

मा० छोटेलाल —महापुरुष; संस्कृत पढ़े बगैर क्या गुजराती कभी आती है। (एक क्षण रुककर) संस्कृत देव भाषा है। सरसता, सरलता और माधुर्य के लिए प्रशंसनीय है और उसके भाषा-सौन्दर्य का क्या कहना! मेरा आदेश है, तुम संस्कृत अवश्य पढ़ो।

वल्लभ —परन्तु साहब, हम सब यदि संस्कृत क्लास में ही रहते तो फिर आप पढ़ाते किसको?

मा० छोटेलाल —बड़े ढीठ नजर आते हो। जाओ; एक से लगा कर दस पाड़े (पहाड़े) लिख लाओ।

दृश्य परिवर्तन

दूसरा दिन । मा० छोटेलाल का क्लास उसी प्रकार लगा है ।

मा० छोटेलाल —कहो, महापुरुष; पाड़े ले आये ?

वल्लभ —पाड़े लाया तो था, परन्तु उनमें से एक इतना मरकहा निकला कि उससे बिदककर सभी दरवाजे के सामने से भाग गये । इसलिए एक भी (पाड़ा) नहीं रहा ।

मा० छोटेलाल —मुझसे मजाक करता है । तू ऐसे नहीं मानेगा । बड़ा ढीठ और उद्धत नजर आता है । चल हेड मास्टर साहब के पास ।

दृश्य परिवर्तन

हेड मास्टर अपनी आफिस में कुर्सी पर बैठे हैं। सामने वल्लभ खड़ा है।

हेडमास्टर — तुम्हारे मास्टर छोटेलाल ने शिकायत की है।

वल्लभ —मुझे मालम है।

हेडमास्टर —तुम्हें कुछ कहना है ?

वल्लभ —ऐसी भी कोई सजा होती है ? आप ही कहें। मेरी पढ़ाई में से कुछ लिखवायें तो मुझे फायदा भी हो। मैट्रिक के छात्र से इकाई के पहाड़े लिखवाने से तो किसी को लाभ होगा ?

हेडमास्टर — तुम्हारे स्पष्ट उत्तर से मैं बहुत प्रसन्न हुआ। जाओ; छोटेलाल को मैं समझा दूँगा।

दृश्य परिवर्तन

पर्दा उठता है। वल्लभ को घेर कर कुछ लड़के आपस में सलाह-मशविरा कर रहे है।

एक विद्यार्थी —(कमीज खोलकर अपनी पीठ वल्लभ को दिखाता है।) मेरी बातों पर तुम्हें विश्वास नहीं है, तो देखो। बेंत की मार से मेरी पीठ की क्या दशा हो गई है ?

दूसरा विद्यार्थी —वह पारसी मास्टर बड़ा ही निष्ठुर है। आगे-पीछे का ख्याल किये बिना वह विद्यार्थियों को बेंत से बुरी तरह पीटता है।

पहला विद्यार्थी —उसकी ऐसी हरकतें बन्द होनी चाहिये।

तीसरा विद्यार्थी —आज उसने मुझे क्लास से निकाल बाहर किया है।

वल्लभ —क्यों ?

तीसरा विद्यार्थी —कल उसने जुर्माना किया था। आज देने की बात थी जुर्माना मैं कहाँ से लाता। माँ-बाप ने तो कसूर किया नहीं था जो जुर्माना देते और मैं उनसे जुर्माना माँगता। जुर्माना लाकर नहीं दिया तो आज क्लास से निकाल दिया।

वल्लभ —कल से शिक्षक के क्लास का बहिष्कार करो। जैसे ही

वह क्लास में आये तुम सभी क्लास छोड़ कर बाहर आ जाओ।

सभी लड़के —कल से ऐसा ही होगा। हम सब मिलकर उसके क्लास का बहिष्कार करेंगे।

चौथा लड़का —उस मास्टर के विषय में क्या कहते हो : आज उसका निर्णय भी हो ही जाये।

पाँचवाँ —वह मास्टर हम सबों को अपनी ही दूकान से किताब, कागज, पेंसिल वगैरह खरीदने के लिये जोर देता है। नहीं खरीदने पर सजा देता है।

वल्लभ —उसकी दूकान का भी बहिष्कार करो। पूछने पर कह देना, वल्लभ ने मना किया है। मेरे पास आयेगा तो मैं उससे निपट लूँगा।

सभी लड़के —हम ऐसा ही करेंगे।

दृश्य परिवर्तन

वल्लभ से बातें करते हुए एक मास्टर साहब दिखलाई पड़ते हैं।

मास्टर साहब —वल्लभ, आज मैं तुम्हारे पास एक आवश्यक काम से आया हूँ (सटकर) तुम्हें तो मालूम ही होगा कि इस बार नड़ियाद के म्युनिस्पल चुनाव में मैं भी एक उम्मीदवार हूँ। मेरी लाज तुम्हारे इन हाथों में है। तुम चाहो तो मैं यह एलेक्शन जीत सकता हूँ।

वल्लभ —मैं तो एक नन्हा विद्यार्थी हूं, मुझसे आपकी क्या सहायता हो सकती है, कहें।

मास्टर साहब —केवल विद्यार्थी मात्र होते तो मैं तुम्हारे पास नहीं आता। तुम विद्यार्थियों के संगठन के सेनापति हो। उनकी सभायें करते हो। विद्यार्थियों की सहायता के लिये बराबर तैयार रहते हो। लड़के तुम्हें अपना नेता मानते हैं। तुम्हारी एक आवाज पर वे जान की बाजी लगा देते हैं। उन्हें तुम पर पूरा भरोसा है। मुझे अच्छी तरह मालूम है, तुम्हारी सलाह पर उन लोगों ने उस मास्टर के क्लास और उसकी दूकान का बहिष्कार किया था। दोनों मास्टरों को तुमसे माफी माँगनी पड़ी थी, तब कहीं जाकर बात बनी थी।

वल्लभ —आप चाहते क्या हैं ?

मास्टरजी —तुम्हारा और तुम्हारी इस फौज की सहायता। मेरा प्रतिद्वन्दी कहता है कि यदि मैं इस बार इस मास्टर से हार गया तो अपनी मूँछें मुड़वा लूँगा।

वल्लभ —ऐसी बात है ! तब तो हम आपके साथ हैं। कल से ही हमारा अभियान शुरू हो जायेगा। आपकी विजय के लिये हम पूरी कोशिश करेंगे।

मास्टरजी —तुम्हारी सेना यदि मेरे साथ है तो मैं अवश्य जीत जाऊँगा। (**मास्टरजी जाते हैं**)

दृश्य परिवर्तन

एक विद्यार्थी —(प्रवेश करता है) वल्लभ ! वल्लभ ! हमारे मास्टर साहब एलेक्शन जीत गये ।

वल्लभ —अच्छा ! जीत गये । वह व्यवसायी का बच्चा हार गया ।

विद्यार्थी —मास्टरजी फूल-मालायें लिये तुम्हारे पास आ रहे हैं ।

वल्लभ —चलो हम उस व्यवसायी के पास चलें ।

विद्यार्थी —क्यों ?

वल्लभ —उसने कहा था, यदि मास्टर जीत गया तो मैं अपनी मूँछें मुड़वा लूँगा । आज उसकी मूँछें मुँड़वाकर ही दम लूँगा ।

विद्यार्थी —फिर तो नाई को भी साथ लेते चलूँ ।

वल्लभ —चलो रास्ते में ले लेंगे । (दोनों जाते हैं)

[पर्दा गिरता है]

पृष्ठभूमि से —इस प्रकार वह होनहार बिरवान अपनी ही लगन और स्वाध्याय के बल पर आगे बढ़ने लगा । सफलताएँ उसके पैर चूमने लगीं । १८९७ ई० में २२ साल की उम्र में इसने मैट्रिक की परीक्षा पास की । बैरिस्टर बनकर ख्याति प्राप्त करने की धुन मन में जोर पकड़ने लगी । १९०० ई० में घर पर ही पढ़कर डिस्ट्रिक्ट प्लीडर की

परीक्षा पास कर ली और वकालत करनी शुरू की। इस प्रकार पर्याप्त धन अर्जन कर बैरिस्टरी की पढ़ाई करने के लिये इंगलैंड गया और १९१३ ई० में बैरिस्टर बनकर स्वदेश वापस आया। अहमदाबाद में इसने अपनी बैरिस्टरी आरम्भ की। तेरह वर्ष का बालक अब वल्लभ भाई पटेल बनकर कोर्ट में साहबों के छक्के छुड़ाने लगा था। एक दिन जब वह बैरिस्टर की पोशाक पहने अपने निजी चैम्बर में बैठा तो उसने अपने पिता झवेर भाई को अपनी ओर आते देखा। (पर्दा उठता है। **चैम्बर के द्वार पर बैरिस्टर वल्लभ भाई खड़े दिखलाई पड़ते हैं और दूसरी ओर से झवेर भाई प्रवेश करते हैं। वल्लभ भाई आगे बढ़कर पिता का पैर छूते हैं।**)

वल्लभ भाई —पिताजी! अचानक यहाँ आने का कष्ट क्यों किया है? कोई विशेष प्रयोजन है क्या?

झवेर भाई —है तभी तो आना पड़ा (**ठहरकर**) सारे जिले में तुम्हारी वकालत की तूती बोलती है। तुम्हारे रहते हमारे महाराज पर वारन्ट निकले? तुम बैठे रहो और महाराज को पुलिस पकड़ कर ले जाये, यह कितने आश्चर्य की बात है?

वल्लभ भाई —भला यह कैसे हो सकता है? महाराज पर और वारन्ट? वह तो पुरुषोत्तम भगवान् के अवतार हैं, सबको संसार-सागर से पार उतारने की क्षमता रखते हैं, उन्हें कौन पकड़ सकता है?

झवेर भाई —इस समय अपनी दिल्लगी तुम रहने दो। मैंने पक्के तौर पर सुना है कि बड़ताल और बोचासण के मन्दिरों के बारे में झगड़ा हुआ है और उसमें हमारे महाराज पर भी वारन्ट निकला है। तुम्हें यह वारन्ट रद्द करवाना होगा। महाराज यदि पकड़ लिये गये तो उनके साथ हमारी और तुम्हारी भी इज्जत चली जायेगी।

वल्लभ भाई —हमारी इज्जत क्यों जायेगी? जो जैसा करता है वैसा भरता है। परन्तु मैं जाँच करूँगा और जायज ठहरने पर वारन्ट रद्द करवाने की पूरी कोशिश करूँगा। **(ठहरकर नम्रतापूर्वक गम्भीर स्वरों में)** आप इन साधुओं का साथ छोड़ दीजिये। जो स्वयं इस प्रकार के प्रपंच करते हैं; झगड़े कर अदालतों के दरवाजे खटखटाते हैं और जो स्वयं इस लोक में अपनी रक्षा करने में असमर्थ हैं, भला वे हमारी रक्षा कैसे करेंगे? परलोक में हमें क्या तारेंगे, हमारा उद्धार वे क्या करेंगे?

झवेर भाई —बात तो मजे की कहते हो, फिर भी इस बार मेरी लाज रख लो।

झवेर भाई —देखूँगा, पिताजी। (**झवेर भाई जाते हैं। वल्लभ भाई झुक कर प्रणाम करते हैं।** पर्दा गिरता है)

पृष्ठभूमि —बैरिस्टरी करते समय ही सार्वजनिक सेवा के क्षेत्र में वल्लभ भाई ने सक्रिय भाग लेना आरम्भ कर दिया था और काफी नाम कमा लिया था। जिस समय वल्लभ भाई की बैरिस्टरी अपने यौवन पर थी, उसी समय गाँधी

जी दक्षिण अफ्रिका से अहमदाबाद आये। आरंभ में तो इन्होंने गाँधी जी में कोई दिलचस्पी नहीं दिखलायी, किन्तु बाद में गाँधीजी को सच्चा जनहितैषी परख लेने के बाद उनके कार्यों में दिलचस्पी लेने लगे और एक दिन ऐसा भी आया था कि वल्लभ भाई अपनी चलती बैरिस्टरी का गाउन उतार कर फेंक दिया और गाँधीजी के साथ देश की सेवा के लिये मैदान में उतर गये और अपना सब कुछ देश की सेवा में अर्पित कर दिया। सर्व-प्रथम १९१७ में खेड़ा में किसानों के लिए आन्दोलन छेड़ा और उनका दु:ख दूर किया। १९२८ में बारदोली के विश्व-विख्यात किसान आन्दोलन का नेतृत्व किया। अपनी अद्भुत् संगठन शक्ति के सहारे अंग्रेजों के छक्के छुड़ा दिये। बारदोली की विजय ने वल्लभ भाई को सरदार वल्लभ भाई बना दिया; भारत का वरेण्य नेता बना दिया।

सरदार वल्लभ भाई जन्मजात किसान थे। किसानों का कष्ट देखकर वल्लभ भाई का खून खौलने लगता था, आँखों से चिनगारियाँ निकलने लगती थीं। वाणी से आग बरसने लगती थी। ऐसे अवसरों पर किसानों को सम्बो-धित करते हुए वे कहते—

(सरदार पटेल की आवाज में)

"आज यह सरकार ऐसी मदोन्मत्त हो गई है, जैसे जंगल में कोई पागल हाथी झूम रहा हो और उसकी टक्कर में जो कोई आ जाये उसे कुचल डालता

हो। पागल मन में यह मानता है कि मैंने सब बाघों और शेरों को मारा है तो इस मच्छर की मेरे सामने क्या बिसात है ? परन्तु मैं समझता हूँ कि इस हाथी को जितना खेलना हो खेल लेने दो और मौका देकर उसके कान में घुस जाओ।

'बड़े घड़े से बहुत-सी ठीकरियाँ बनती हैं लेकिन उनमें से एक ठीकरी भी सारे घड़े को फोड़ने के लिए काफी है। घड़े से ठीकरी कब डरे ? फूटने का डर किसी को हो तो वह घड़े को होना चाहिये। ठीकरी को क्या डर हो सकता है ?

'मैं तो तुम्हें कुदरत का कानून पढ़ाना चहता हूँ। किसान होने के कारण तुम सब यह जानते हो कि थोड़े से बिनोले जमीन में गड़कर जब सड़कर नष्ट होते हैं, तब खेत में ढेरों कपास पैदा होता है। आप मरे बिना स्वर्ग मिल सकता हो तो केवल विधान सभा में प्रस्ताव पास करने से हमें मुक्ति मिल सकती है।

'सारी दुनिया का आधार किसान पर है। मैं किसान हूँ। मेरे जी में आता है कि मैं किसान को कंगाल न रहने दूँ। उसे स्वाभिमान से सिर ऊँचा करके चलनेवाला बना दूँ। इतना करके मरूँ तो अपना जीवन सफल समझूँ। याद रखो कि सत्य के लिये जो बर्बाद होने को तैयार हैं, वही अन्त में जीतेंगे।

"कुनबी के सहारे करोड़, कनबी किसी के सहारे नहीं।" ऐ किसान तू सचमुच जगत का तात मान जाता है। दुनियाँ में असली उत्पादक किसान और मजदूर हैं। बाकी सब किसानों और मजदूरों पर जीनेवाले हैं। इस धरती पर अगर किसी को सीना तानकर चलने का अधिकार है तो वह जमीन जोत कर धन-धान्य पैदा करने वाले किसान को ही है। शरीर से आप भले दुबले-पतले हों, लेकिन कलेजा तो बाघ और सिंह का रखिये। अपने सम्मान के

लिये मरने की शक्ति हृदय में रखिये और इतनी बुद्धि रखिये कि कोई आपको आपस में न लड़ा सके।" (पर्दा उठता है और सरदार पटेल भाषण समाप्त करते दिखलाई पड़ते हैं। दूसरी ओर से बहनें आरती की थाल तथा फूल-मालायें लिये प्रवेश करती हैं और सरदार की आरती उतारती और गाती हैं)

"सखी रे। आज हे प्रभुजी पधारिया
माथे उग्याछे सोना ना सूर रे,
वल्लभ भाई घर आविया।
मारा जन्म मरण घटी जाय रे।
वल्लभ भाई घर आविया।

(फिर तो वीरांगनाओं के कल कंठ से उच्च स्वर गूँज उठता है

हमें अपनी प्रतिज्ञा पालनी रे,
चाहे टुकड़े हो जायें सारे तन के—हमें०
डंका बजा लड़वैये वीरो जागना रे,
वीरो जागना रे, कायर भागना रे—डंका०

(वल्लभ भाई के गले में मालायें डालती हैं और तिलक लगाती हैं)

[पर्दा गिरता है]

पृष्ठभूमि से—सन् १९३१ ई० में करांची के कांग्रेस अधिवेशन में सरदार कांग्रेस के राष्ट्रपति बने। सन् १९३१ का वर्ष देश के इतिहास में उथल-पुथल का वर्ष था। अंग्रेजों का दमनचक्र जारी था। कानपुर में सांप्रदायिक दंगे में गणेश शंकर विद्यार्थी जैसे देश-भक्त की हत्या हो चुकी थी। बटुकेश्वर दत्त को कालेपानी की

सजा सुनाई जा चुकी थी। राजगुरु; सुखदेव और भगत सिंह शहीद हो चुके थे। देश की स्थिति डांवाडोल थी। संकट की घड़ियों में देश की बागडोर सरदार ने पकड़ी थी और इन विकट परिस्थितियों में भी लोक मानस को संतुलित रखकर अपने सरदार के नाम को सार्थक बनाया था। उन्होंने स्वतंत्रता-संग्राम का जिस कुशलता से संचालन किया, वह उनके अपरिमित धैर्य और शौर्य का प्रतीक था। स्वराज्य संग्राम के सरदार जन्मजात सेनानी थे।

पन्द्रह अगस्त १९४७ में देश स्वतंत्र हुआ। अपनी सरकार बनी और सरदार उपप्रधान मंत्री बने। गृह विभाग का भार संभाला। महज डेढ़ वर्ष की अवधि में सरदार ने जिस काम को किया उस काम को चाणक्य और चन्द्रगुप्त नहीं कर सके। उसे पूरा करने में अशोक और अजातशत्रु असफल रहे। वीर विक्रमादित्य विफल रहे। जिसे पूरा करने में सम्राट् हर्षवर्द्धन को हताश होना पड़ा। जिसे हासिल करने में अकबर और औरंगजेब जैसे शक्तिशाली बादशाहों को भी कामयाबी नहीं मिली और जिसे अंग्रेज भी नहीं कर पाये, उसे सरदार ने चुटकी बजाते कर दिखाया।

यह सरदार की सूझ थी, उनकी प्रतिभा और कार्य-कुशलता थी कि बिना किसी झंझट-झमेले के देशी राजाओं ने अपनी सारी सत्ता सहर्ष समर्पित कर दी। सरदार ने सम्पूर्ण भारत का मानचित्र एक रंग में रंग दिया। सरदार के टक्कर का नरपुंगव भारतीय इतिहास में दूसरा नहीं हुआ है। बात

उस समय की है, जब सरदार वल्लभ भाई पटेल गृह मंत्री थे।
एक सुबह औरंगजेब रोड स्थित अपनी कोठी की लॉन में बैठे
शरद के सूर्य की धूप का आनन्द ले रहे थे। लगता था,
सरदार थके हुए हों। साथ ही एक ही पत्रकार बैठा था।
(पर्दा उठता है सरदार लॉन में बैठे दिखलायी पड़ते हैं।
सामने इटर्व्यू लेने वाला पत्रकार बैठा है)

पत्रकार —देश के बँटवारे के बाद भी देश में जहाँ-तहाँ दंगे हो रहे हैं, इसपर आपके विचार क्या हैं ?

सरदार —यह देश का दुर्भाग्य है। अराष्ट्रीय मुसलमान अब भी अपनी हरकतों से बाज नहीं आ रहे हैं। कांग्रेस के मेरठ अधिवेशन में मैं यह घोषणा कर चुका हूँ कि तलवार का जवाब तलवार से दिया जायेगा। यदि इतने पर भी वे नहीं चेते तो इसका फल उन्हें भुगतना होगा।

पत्रकार —लखनऊ में जो नेशनलिस्ट मुस्लिम कानफरेंस हुई है, उसमें देश के बड़े-बड़े मुस्लिम नेताओं ने भारत के प्रति निष्ठा जाहिर की है। देशभक्ति की कसमें खाई हैं।

सरदार —यह सब उनका एक ढोंग है, दिखावा मात्र है।

पत्रकार —ऐसा आप किस आधार पर कहते हैं ?

सरदार —आधार साफ है। राष्ट्रीय मुस्लिम सम्मेलन में एक भी मुसलमान ने जिन्ना की भर्त्सना नहीं की—जिसने देश का बंटवारा कराकर लाखों बेगुनाहों को मौत के घाट उतार दिया।

पत्रकार —मुसलमानों का कहना है कि आप उनकी नीयत पर शक करते हैं ?

सरदार —मैं जबानी जमा खर्च-नहीं चाहता। उनकी देश भक्ति का मुझे प्रमाण चाहिए।

पत्रकार —सुना जाता है, जूनागढ़ का नवाब पाकिस्तान के साथ सांठ-गाँठ कर भारत में जूनागढ़ के विलयन के मामले में आनाकानी कर रहा है।

सरदार —हो सकता है।

पत्रकार —यह भी सुना जाता है कि लार्ड माउन्टटबेन ने सुझाव दिया है कि इस मामले को कश्मीर की तरह संयुक्त राष्ट्रसंघ में भेज दिया जाये।

सरदार —तो श्री माउन्टबेटन को मेरा उत्तर है—स्वाधीनता के मसले सात समुद्र पार की मुकदमेबाजी से तय नहीं होते। पहले हम भारतीय जनता को आक्रमणकारी की तबाही से बचायेंगे और उसके बाद पूछेंगे कि राष्ट्रसंघ क्या है।

पत्रकार —शस्त्र-कार्यवाही होने पर पाकिस्तान से युद्ध भी तो छिड़ सकता है?

सरदार —जूनागढ़ की रक्षा के लिये यदि पाकिस्तान से युद्ध हुआ तो हम उसके लिये भी तैयार हैं।

पत्रकार —कश्मीर के मामले में आप चुप क्यों रहे?

सरदार —क्योंकि जवाहरलाल की ससुराल में मेरा वश नहीं चलता है।

पत्रकार —शेख अब्दुल्ला के बारे में आपकी क्या राय है?

सरदार —यह व्यक्ति अधिक देर तक भारत के लिये वफादार सिद्ध नहीं होगा। देर या सबेर इसका भण्डा फूटने ही वाला है।

पत्रकार —आजकल तिब्बत में जो कुछ हो रहा है, उससे क्या आप सन्तुष्ट हैं ?

सरदार —कदापि नहीं। आज तिब्बत में जो कुछ हो रहा है वह भारत के आगामी खतरे का सूचक है। तिब्बत में चीनी बल प्रयोग भारत के लिये खतरे की घड़ी है। समय रहते यदि हम नहीं चेते तो इसका परिणाम देश को भुगतना होगा।

पत्रकार —देश की आजादी का खतरा किन लोगों से है ?

सरदार —अपने ही घर में छिपे दुश्मनों से है। राष्ट्रद्रोही तत्व विदेशी प्रत्यक्ष शत्रु से अधिक खतरनाक होते हैं।

पत्रकार —भारतीय मुसलमानों के लिये आपका क्या संदेश है ?

सरदार —जो मुसलमान यह मानते हैं कि मुसलमान एक अलग राष्ट्र हैं तथा पाकिस्तान का निर्माण उचित है, उन्हें भारत से अन्यत्र चला जाना चाहिए। जो मुसलमान भारत को अपना वतन समझते हैं वे निर्भय होकर यहाँ रहें।

पत्रकार —आपके अर्थों में राष्ट्रीय मुसलमान कौन हैं ?

सरदार —इस देश में तो एक ही राष्ट्रीय मुसलमान है, और वह है जवाहरलाल। **(पत्रकार कृतज्ञता प्रकट करता हुआ एक ओर चला जाता है।)**

[पर्दा गिरता है।]

रङ्गभूमि से —ऐसी थी हमारे सरदार की पैनी दृष्टि। उस समय उसने जो कुछ भी कहा था समय आने पर सर्वथा सत्य सिद्ध हुआ। चाणक्य के बाद यह दूसरा मस्तिष्क था, जिसने चतुर्मुखी प्रतिभा

पाई थी। सरदार का अकेला व्यक्तित्व अपने में जहाँ एक कुशल किसान का था वहाँ एक अति उच्च समाज नेता तथा देशसेवक का था। एक ओर वह राजनीतिज्ञ था तो दूसरी ओर संस्कृत का सच्चा रक्षक भी। जूनागढ़ के पतन के बाद जब वह जूनागढ़ गया तो सोमनाथ के विख्यात मन्दिर की भग्नावस्था देखकर रो पड़ा। १०२४ ई० में गजनी के सुल्तान महमूद ने इस मन्दिर को तहस-नहस कर डाला था। तब से १९४७ तक ९२२ वर्षों के इस लम्बे अर्से में किसी भी भारतीय सपूत के हृदय में इतनी भावना नहीं जागी जो इस मन्दिर के उद्धार के लिए कुछ करे। भारतीयों के भाल पर लगी कायरता और कलंक की इस कालिमा को न कोई देशी राजा-राजवाड़ा मिटा सका और नहीं कोई कुबेर का वंशज ही अपनी थैली लेकर इस कालिमा को धोने के लिये आगे आया। उस दिन विशाल भारत का उपप्रधान मंत्री सोमनाथ के भग्न चबूतरे पर खड़ा होकर पुकार उठा। जब तक सोमनाथ के उद्धार के लिये पर्याप्त धन इक्ठा नहीं हो जाता तबतक अन्न-जल ग्रहण करना किसी के भी लिये उचित नहीं। यह काम जूनागढ़ के निवासियों को करना है। जूनागढ़ निवासी यह उद्घोष सुनकर दंग रह गये। धन जुटाने और सरदार के आदेश का पालन करने के लिये बालक-बूढ़े-स्त्री-पुरुष सभी दौड़ पड़े। धन की वर्षा होने लगी। **(पर्दा उठता है। सरदार पत्थर की भग्नशिला पर बैठे दिखलायी पड़ते हैं। सामने एक सफेद चादर बिछी है। लोग आते हैं और अपना दान चादर पर डालकर एक ओर**

नत-मस्तक खड़े होते हैं। वैदिक मंत्रों के बीच सरदार पटेल के हाथों सोमनाथ के उद्धार-कार्य का सम्पादन होता है)

[पर्दा गिरता है]

पृष्ठभूमि से— स्वाधीनता संग्राम का सफल सेनानी, स्वराज्य का समर्थ संचालक, भारतीय संस्कृति का वह महान् रक्षक १५ दिसम्बर १९५० ई० को अपनी गौरवपूर्ण इहलीला समाप्त कर परलोक सिधार गया। उसका भौतिक शरीर मिट गया, पर उसके गुणों की गौरव-गाथा भारत की भावी सन्तति सुदीर्घ काल तक सगर्व सुनती रहेगी। उसके कीर्ति केतु को फहराते देखकर पुलकित-प्रमुदित होती रहेगी और उसके सामने नतमस्तक हो श्रद्धा का सुमन चढ़ाती रहेगी। सरदार कृत कर्म, राष्ट्र को प्राणवान् और उसकी सन्तानों को गौरवान्वित करते रहेंगे। आओ हम उस सरदार को एक बार पुनः नमन करें।

(शोक संगीत के साथ समाप्ति)

यह मौत नहीं, ज़िन्दगी है

[कनाडा के कोयला केन्द्र में १९४७ की फरवरी में घटी एक सत्य घटना के आधार पर]

पुरुष पात्र

ढोलन

सागर

सुन्दर

इल्ताफ

पाल

□

स्त्री पात्र

रेशमा

[धरती के बहुत नीचे १५ फीट लम्बा और १२ फीट चौड़ा खान का एक कमरा, जिसमें से कोयला काटकर निकाला जा रहा है। कमरे में जहाँ-तहाँ सहतीर लगे हुए हैं। कमरे में तीन ओर तीन दरवाजे हैं—जिसमें होकर मजदूर दूसरे ऐसे ही कमरों में जहाँ खुदाई हो रही है, आते जाते हैं तथा कोयला बाहर निकाला जाता है।

सवेरे छह के लगभग। कोयले की खान का पहला भोंपू बज उठता है। एक मिनट तक बजता रहता है। पुनः धीरे-धीरे बन्द हो जाता है। चलते हुए पैरों की आवाज सुनाई पड़ रही है।]

पृष्ठभूमि से—लीजिये। खान का पहला भोंपू बजकर अभी-अभी शांत हुआ है। इस आवाज के साथ खान के मजदूर अपने घरों से निकल चुके हैं। सभी खुदाई की ओर बढ़ रहे हैं। गलियाँ खत्म हो चुकी हैं। सभी अब बाजार से गुजर रहे हैं। उनके सिर पर हैं फौलादी टोपियाँ, पैरों में भारी भरकम बूट और हाथों में नाश्तेदान तथा नाश्ते की पोटली। इनमें मर्द हैं, औरतें हैं, जवान हैं, और वे भी हैं जिनकी जवानी खत्म हो चुकी है। और जो बुढ़ापे के द्वार पर अपना पैर रख चुके हैं। बेसब्र हो रहे हैं न? तो आइये; कुछ-एक से मैं आपका परिचय करा दूँ।

[सामने से ढोलन, रेशमा, इल्ताफ, सुन्दर, सागर और पाल बारी-बारी से जाते हैं।]

यह जा रहा है ढोलन ! विधवा माँ का एकलौता बेटा। शक्ल-सूरत तथा अपने भोलेपन से यह लगता है मुश्किल से अट्ठारह वर्ष का, लेकिन यह है चौबीस वर्ष का।

और यह है रेशमा। विधवा माँ की विधवा बेटी। रेशमा को बढ़िया कपड़े पहनने और घर सजाने का शौक है।

आप हैं इल्ताफ। बाँसुरी अच्छी बजा लेते हैं, और सदा अपने पास रखते भी हैं।

इनसे मिलिए। मजदूरों की बस्ती के आवारा किस्म के लोगों के हीरो—सुन्दर। आप अनपढ़ हैं, लेकिन फिर भी भगवान ने आपको सुन्दर बनाया है।

और यह जा रहा है छिदरी दादी और भारी भरकम सागर। और अन्त में बूढ़े पाल से मिलिये। मजदूरों की बस्ती का वह पादरी चाचा जिसे धर्म पर अब भी विश्वास है, दुर्व्यसनी लोगों से घृणा है और जो रोज रात को सोने से पहले इंजील मुकद्दस का पाठ करता है। **(रंगमंच पर एक ओर से प्रवेश करते हैं और दूसरी ओर जाते हैं।)**

आइये, मेरे साथ आइये। मैं आपको धरती के बहुत नीचे एक ऐसे ही कमरे में लिये चल रहा हूँ, जहाँ आपके परिचित काम कर रहे हैं। **(रंगमंच पर अँधेरा हो जाता है। अँधेरे को चीरती हुई गीत की आवाज सुनायी पड़ती है।)**

बाबू, मेरा हइयो,
भैया, मेरे हइयो,
साथी जोर लगाइयो।

टूटी नींद हमारी,
बीत गयी है खुमारी,
देश की किस्मत,
हमें पलटनी
आकर जोर लगाइयो;
काँध से काँध मिलाइयो।

बाबू मेरा ....
भैया मेरा ....
साथी ....

रात बीत गयी,
सुबह हो गयी
छाया दिन का उजाला।
नया जोश है
नयी रोशनी
अब कुछ कर दिखलाइयो।

बाबू ....
भैया ....
साथी..........

एक मेहनतकश,
एक है मालिक,
एक ऊँच, एक नीच,

भेद-भाव औ,
जाति-पाँत को
ठोकर मार गिराइयो।

बाबू ....!
भैया ....
साथी ....

(एक व्यक्ति केवल आ....आ....को स्वरबद्ध कर ऐसी आवाज में कह रहा है जो कुछ दूर से आती हुई प्रतीत होती है। पृष्ठभूमि से कुछ लोग हो, हइयो हइयो स्वरबद्ध होकर कह रहे हैं। आवाज धीरे-धीरे समीप आती जाती है। पुनः हइयो हइयो को चीरती एक व्यक्ति के स्वर में साथी जोर लगाइयो का स्वर रंगमंच पर छा जाता है। हर स्थाई के बाद समूह के लोग दो बार हो हइयो, हो हइयो कहते हैं। अंतरा केवल प्रमुख गायक ही कहता है। लय अन्त तक आते-आते तीव्रता प्राप्त करती है। गीत के समाप्ति के बाद प्रमुख गायक फिर आ....आ....का स्वर लेता है। समूह द्रुत स्वर में ही, हो हइयो, हइयो कह रहा है। पहले तो आवाज तीव्र रहती है, क्रमशः आवाज थमने लगती है आ थमते-थमते बन्द हो जाती है।)

(रंगमंच पर व्याप्त अंधेरा धीरे-धीरे हटने लगता है, और फिर हल्का-सा प्रकाश रंगमंच पर छा जाता है। खुदाई हो रहे कमरे में काम करते तथा गीत समाप्त करते हुए ढोलन, सुन्दर, पाल और इल्ताफ के चेहरे पहले धुंधले और फिर साफ दिखलायी पड़ते हैं।)

सागर—(हल्के नशे तथा मस्त चाल में एक ओर से प्रवेश करता है। उसने एक पुराना सिंगल कालर का इंगलिश कोट पहन रखा है, जिसको

निचली जेब से शराब के बोतल का मुँह बाहर निकलता हुआ साफ दिखलायी पड़ता है।)

आज के शुभ दिन के लिए धन्यवाद भाइयो।

सभी —धन्यवाद।

पाल —आज तुमने देर कर दी सागर।

सागर —(खिन्न स्वर में) हाँ चाचा देर हो गयी।

ढोलन —भैया तो ऐसे बोल रहा है, जैसे किसी से लड़ कर आया हो। क्यों भैया, भाभी से कुछ कहा-सुनी हो गयी है।

सागर —यह तुमने कैसे जाना ?

ढोलन —तुम्हारी इस सूरत और बोलने के अन्दाज से।

सागर —अन्दाज से अन्दाज लगाने लगे, तब तो बड़े होशियार होते जा रहे हो।

सुन्दर —होगा क्यों नहीं भैया ? आखिर अब इसे भी तो किसी के आंचल की हवा लगने लगी है।

इल्ताफ —तब तो कुछ न कुछ गुल अवश्य खिलेगा।

ढोलन —तुम लोगों ने तो मुझे नाहक ही बदनाम कर रखा है, मैं धोखे में डालकर उस पर डाका डालना नहीं चाहता।

इल्ताफ —डाका डालने में यदि पकड़ा जाने का भय हो, तो चोरी ही कर लेना। रात को चुप-चाप।

ढोलन —मैं यह भी नहीं कर सकता इल्ताफ।

सुन्दर —क्यों नहीं कर सकते। वह तुम पर मरती है और तुम उस पर मरते हो। यदि कुछ कर ही डालोगे तो थोड़े ही वह किसी से कहती फिरेगी।

पाल —फिर शादी ही क्यों नहीं कर लेता ?

इल्ताफ —यह भी खूब रही। सुना है वह बामन की लड़की है।

सागर —भाई जो हो, जोड़ी बड़ी अच्छी रहेगी।

सुन्दर —तुमने भी खूब कही भैया। कहाँ बामन की लड़की और कहाँ अछूत का बेटा। जोड़ी तो राम ने वह मिलायी है, कि कुछ न पूछो।

ढोलन —(तेज पड़ता हुआ) कम से कम भगवान के लिए चुप रह।

इल्ताफ —चुप कैसे रहेगा। बेचारे का दिल जो जल रहा है।

सुन्दर —तुम चाहे जो भी कहो इल्ताफ भैया, लेकिन रेशमा है बड़ी सुघर। उसे जब मुस्कुराते देखता हूँ, तो कलेजा मुँह को आ जाता है। नजर पड़ती है, तो जी मचल-मचल कर रह जाता है। मन करता है, बस कलेजे से सटा लूँ।

सागर —फिर उससे शादी क्यों नहीं कर लेता ?

सुन्दर —तुमने भी खूब कही। सुन्दर ने आज तक जितनी लड़कियों के साथ रंगरेलियाँ की हैं, यदि वह उन सबों से शादी किये होता तो मजदूरों की बस्ती के आधे बच्चे उसके होते। मुझे तो बस भौंरा समझो। फूलों पर बैठा, रस लिया और उड़ गया।

पाल —कितने गन्दे ख्यालात अपने इस सुन्दर जिस्म में पाल रखा है। तुझे शरम नहीं आती।

इल्ताफ —तभी जनाब, इधर कुछ दिनों से इस फूल के पीछे मंडरा रहे हैं।

ढोलन —हूँ। (क्रोध भरी नजरों से सुन्दर को देखने लगता है।)

सुन्दर —(ढोलन के मुँह पर फैले भाव को देखता है। उसकी उपेक्षा करता हुआ) लेकिन इल्ताफ, वह तो एक नजर मेरी ओर देखती ही नहीं। कुछ कहता हूँ तो गुर्राने लगती है। कमबख्त बड़ी कठोर है। सच कहता हूँ यदि किसी दिन हाथ लग गयी तो.........

ढोलन —(बीच में ही क्रोध में) उस दिन मैं तुम्हारा कचूमर निकाल कर रख दूँगा। तुम्हारी रोज-रोज की गन्दी हरकतें रेशमा मुझसे कहती है, लेकिन मैं हूँ कि जी मसोस कर रह जाता हूँ। सोचता हूँ किसी दिन तो तुम सुधरोगे। मेरी एक बात गाँठ बाँध ले, यदि उससे शादी करने का इरादा है, तो छेड़-छाड़ जारी रख, वरना, अपनी ये गन्दी हरकतें बन्द कर दे। नहीं तो बहुत बुरा होगा।

सुन्दर —सुन्दर तो केवल सुन्दरी का विचार करता है, हरकतों का नहीं। वह तुम जैसा मजनू तो है नहीं, जिसने अपनी लैला को दुनिया की तमाम नजरों से छिपा कर अपने दिल में उतार रखा है। काश तुम ! इन औरतों को समझ पाते।

पाल —और काश ! औरतें तुम जैसे मुर्दों को समझ पातीं।

सागर — अरे छोड़ो भी यार। औरत मर्दों की इस पहिचान में तुमने दो दिलों का रोमांस खत्म कर दिया। (ठहरकर) हाँ ढोलन तो रेशमा से शादी तय हो गयी ।

ढोलन —समय आने पर कहूँगा भैया, अभी नहीं।

पाल —मेरे ख्याल से सागर ठीक कहता है। जितनी जल्दी हो सके, तुम दोनों शादी कर लो। मुहल्ले में तुम दोनों की इतनी चर्चा है कि कान नहीं दिये जाते।

इल्ताफ —सो तो ठीक है पादरी चाचा, लेकिन ढोलन की माँ रेशमा को बहू बनाना नहीं चाहती।

सागर — क्यों ?

इल्ताफ —बुढ़िया समझती है, रेशमा आवारा लड़की है।

सागर —रेशमा को मैं अच्छी तरह जानता हूँ। वह वैसी लड़की नहीं है, विधवा है; जरा टीम-टाम से रहती है। मर्दों जैसी स्वतन्त्रता बरतती है, इसलिए बुढ़िया को शक हो गया है। ढोलन उसे मना लेगा।

सुन्दर —ढोलन कैसे मना लेगा, वह तो खुद बुढ़िया के ताबे में है।

इल्ताफ —माँ के दिल को तुम क्या जानो? हर माँ अपनी औलाद को हमेशा खुश देखना चाहती है।

पाल —जान पड़ता है, किसी ने उल्टा-सीधा समझाकर बुढ़िया के कान भर दिये हैं, तभी तो वह जिद्द कर रही है, वरना वह वैसी औरत नहीं, जो ढोलन की किसी बात में नाहीं कर दे।

सुन्दर —चाचा, यह रेशमा है कौन? मजदूरों की बस्ती में कहाँ से आयी है?

पाल —तुम सब उस समय बहुत छोटे थे, जब रेशमा का बाप मरा था। याद आती है, तो आँखें अब भी डबडबा जाती हैं। कितना नेक दिल, रहम मिजाज आदमी था वह।

इल्ताफ —तो वह भी इन्हीं खानों में काम करता था चाचा।

पाल —हाँ, हम जैसा ही एक मजदूर था। जब वह पहली बार हमारी बस्ती में आया था, तब रेशमा बहुत छोटी थी। अपनी थकी-माँदी माँ की गोद में सो रही थी।

ढोलन —बामन होकर खान में काम करता था?

पाल —इसीलिए कि समाज ने उसे ठुकरा दिया था। गाँव वालों ने उसकी जमीन छीन ला थी। उसे गाँव से निकाल दिया था।

सागर —क्यों चाचा ?

पाल —क्योंकि उसने लड़कपन में दिये गये एक गैर जाति की लड़की के प्रति अपने वचन को निभाया था। समाज की ठोकरें और लोगों की घृणा को सिर झुका स्वीकार कर उसका हाथ पकड़ा था। जब तक जीवित रहा, अपने उसूलों को बाखूबी निभाता रहा। एक ही जबाँ-मर्द था वह।

सागर —मुझे भी कुछ-कुछ उसकी याद आ रही है चाचा। लम्बा कद, गठीला बदन, चाल में वह मस्ती कि कुछ न पूछो। ताकत इतनी कि वह बाखूबी दो जवानों को अपने दोनों बाजुओं में लटका कर मिन्टों घुमाता रहता। काश ! उस दिन वह बच जाता !

इल्ताफ —उसे क्या हुआ था सागर भैया ?

पाल —यह मैं जानता हूँ। उस दिन वह मेरी ही टोली में काम कर रहा था। अचानक खान की छत बैठ गयी और वह दब कर वहीं मर गया। रेशमा उसी माँ-बाप की बेटी है, फिर बाप के गुण उसमें क्यों न हो ?

इल्ताफ —रेशमा की माँ, बच रही है न चाचा ?

पाल —हाँ। बड़े ऊँचे हौसले वाली औरत है वह। मर्द के मर जाने के बाद उसने हिम्मत नहीं हारी और खान में काम करने लगी। कोयले की इस खान में जहाँ की हर चीज काली है, वही एक ऐसी औरत मिली जो बेदाग बच निकली।

सुन्दर —सुना है, रेशमा की शादी उसने एक बूढ़े बामन से कर दी थी। इसीलिए वह इतनी जल्दी विधवा हो गयी।

पाल —कौन कहता है ? रेशमा की शादी में मैं था। उसके मर्द को मैंने देखा था। क्या ही खासा जवान था वह।

ढोलन —रेशमा कह रही थी, उसके मर्द को अचानक एक दिन हैजा हो हो गया वह भरी जवानी में चल बसा। क्या यह सच है चाचा ?

पाल —सच है ढोलन। वह तो रेशमा का गौना भी नहीं करा पाया था। उसके मरने का बुढ़िया को इतना सदमा पहुँचा कि वह पागल-सी हो गई। बराबर खप्त रहने लगी। जीवित रहने के सभी द्वार बन्द होते देखकर, रेशमा अब खानों में काम करने लगी है।

इल्ताफ —तभी तो कहता हूँ ढोलन, अब और मेरी देर मत कर। जितनी जल्दी हो सके, इस रोज-रोज की चर्चा को समाप्त कर दे। शादी तो तुझे आखिर करनी ही है, फिर समय क्यों टाल रहा है। रेशमा से अच्छी लड़की तुझे इन मजदूरों की बस्ती में नहीं मिलेगी।

पाल —बुढ़िया यदि नहीं मानती है, तो वह भी कह। हम सभी चलकर उसे राजी कर लेंगे।

इल्ताफ —मानेगी क्यों नहीं ? बुढ़ापे की आखिरी लकड़ी और एकलौती बेटे का मोह उसे अवश्य झुका डालेगा।

पाल —ऐसे तुम्हारी माँ है तो बड़ी समझदार, लेकिन वह रेशमा को बहू बनाना क्यों नहीं चाहती है ? समझ में नहीं आता है।

सागर —अगर तुम्हारी माँ किसी कदर राजी नहीं होती है, तो रेशमा को लेकर मेरे घर चला आ। तुझसे पूरी सहानुभूति है। इस काम में तुम्हारी हर मदद करने को मैं तैयार हूँ।

ढोलन —ठीक है सागर भैया। समय आने पर यह भी करूँगा।

इल्ताफ —इस बार मेरी एक तमन्ना है चाचा।

सुन्दर —वह क्या ?

इल्ताफ —रेशमा और ढोलन की शादी में बासुरी पर बह राग बजाऊँगा कि सुनने वाले मरते दिन तक याद रखेंगे। बशर्ते कि··········

सागर —ठर्रे की एक बोतल मिल जाय।

सुन्दर —वह भी मुफ्त। (सभी हँसते हैं)

इल्ताफ —क्या कहूँ, जब तक ठर्रा नहीं पीता, ठस्से की बाँसुरी नहीं बजती। कैसा विचित्र संयोग है। ठर्रे की मुझसे और मेरी बाँसुरी से।

ढोलन —तो अभी पीओगे।

इल्ताफ —यदि मिल जाय।

सागर —मिल जायगी। लेकिन पहले अपनी बाँसुरी सुनाओ।

इल्ताफ —नहीं सागर भैया, पहले पी लूँ।

ढोलन —नहीं, पहले बाँसुरी सुन लेने दो सागर भैया, तब पिलाना।

इल्ताफ —लेकिन मेरी बाँसुरी कहती है, बिना लालपरी के मैं तुम्हारे ओठ नहीं चूमूँगी।

सागर —और लालपरी कहती है, पहले मैं बाँसुरी सुन लूँ। पेट में चले जाने के बाद वह सुनने से गयी और तुम बजाने से गये।

इल्ताफ —क्यों ?

ढोलन —क्योंकि तब लालपरी तुम पर हावी होगी और तुम लालपरी पर।

इल्ताफ —अच्छा बाबा। तुम जीते मैं हारा।

सागर —तो शुरू करो।

इल्ताफ —लो। (कह कर बाँसुरी बजाने लगता है और थोड़ी देर तक बजाता रहता है।)

सागर —(इल्ताफ को बजाना बन्द करता देखकर) चाचा, इसे अपना आर्केस्टा रखना चाहिये था। कितनी अच्छी बाँसुरी बजाता है।

पाल —इसकी बाँसुरी सुनकर तो लगता है, यह गलती से मजदूर बन गया है।

इल्ताफ —इस बार तुमने मेरे मुँह की बात छीन ली है पादरी चाचा। कभी-कभी मैं भी यही सोचता हूँ लेकिन मजबूरी है।

सुन्दर —किस बात की ?

इल्ताफ —पैसों की।

ढोलन —सुना है, तुम आर्केस्टा के लिए पैसे जमा कर रहे हो।

इल्ताफ —(आह भर कर) ठीक कहते हो ढोलन। मेरे दोस्त, कुछ दिन और ठहर जाओ। कुछ पैसे और जमा कर लेने दो, फिर देखना, मैं इस मनहूस खान को सदा-सदा के लिए छोड़ दूँगा।

सुन्दर —यह तो तुम्हारे मुँह से कितनी बार सुन चुका हूँ, लेकिन यार तुम गये कभी नहीं। बुरा मत मानना, तुम इस कोयले की खान को नहीं छोड़ सकते।

डोलन —आर्केस्टा के किस चक्कर में हो इल्ताफ भैया। शादी कर लो शादी; भाभी आ जायगी तो तुम्हारी मुफ्तखोरी की आदत छूट जायगी और हम सबों को गाहे-बगाह एक कप चाय नसीब होती रहेगी।

सागर —वाह बच्चू। अपनी कर चुके, अब दूसरों की करवाने चले हो।

सुन्दर —भाभी जरा चुन के लाना। कहीं ऐसा न हो तुम्हारी बाँसुरी पाकेट में पड़ी रह जाय, और उधर आर्केस्टा बिना तुम्हारी बाँसुरी के बजने लगे।

डोलन —मेरी तो आज या कल हो ही जायगी, लेकिन इल्ताफ भैया तो इस तरह जिन्दगी भर कुँआरा रह जायगा। उसकी फिक्र तो पहले होनी चाहिए, क्यों चाचा ?

इल्ताफ —मैं शादी-वादी नहीं करूँगा पादरी चाचा। कुछ पैसे और जमा कर लूँ, अपना एक आर्केस्टा बना लूँ, फिर देखना अपनी पार्टी के साथ सारे हिन्दुस्तान का सफर करूँगा घूम-घूमकर। इस बाँसुरी की तान को हिन्दुस्तान की फिजाओं में लहराता फिरूँगा।

सुन्दर —हौसला तो बुरा नहीं है, बशर्ते कि पूरा कर लो।

सागर —भली याद आयी।

सुन्दर —क्या भैया ?

सागर —अरे ! उस फोरमैन की लड़की का क्या हुआ ?

सुन्दर —मै क्या जानूँ।

ढोलन —कल शाम को उसका बाप मिला था। कह रहा था, सुन्दर उससे शादी करने को तैयार है।

सुन्दर —सुन्दर और शादी ? बूढ़े को गलतफहमी हो गई है।

सागर —लेकिन चमचम तो तुम पर जान देती है। जानते हो, वह उस बूढ़े फोरमैन की एक ही और आखिरी औलाद है। बूढ़े ने पैसा खूब बचाकर रखा होगा।

सुन्दर —कौन अनहोनी बात हो गई है, जो एक बार मुझे देख लेती है, वही जान देने लगती है।

इल्ताफ—और जनाब की इसी में बन जाती है।

ढोलन —सवा सोलह आने।

सुन्दर —इसमें मेरा क्या कसूर है ? मरती है तो मरने दो। अपने राम तो मौज करने के लिए पैदा हुए हैं, बस। कोई दाव कभी खाली नहीं गया, कोई-न-कोई मिल ही जाती है।

इल्ताफ—लेकिन इस बार बच्चू; अन्दाज है, निकल नहीं सकते। जाल काफी मजबूत है।

सुन्दर —कभी-कभी मैं भी डरने लगता हूँ इल्ताफ। दिल को समझाता हूँ उस लौंडिया का पीछा छोड़ दे, परन्तु मानता ही नहीं। शाम को जब तक एक नजर देख नहीं लेता, दो बातें नहीं कर लेता, चैन नहीं पड़ता। दिन कैसा-कैसा तो करने लगता है।

सागर —लच्छन अच्छे दिखते हैं। यह बेल इस बार मुंडेर अवश्य चढ़ेगी।

पाल —फिर तो इन्तजारी करो। जिस दिस यह बेल मुंडेर चढ़ेगी, उस दिन इस धरती पर एक इन्सान और बढ़ जायगा।

सुन्दर —लगता तो मुझे भी ऐसा ही है पादरी चाचा, लेकिन जब एक बात सोचता हूं, तो दिल बैठने लगता है। आगे बढ़े हुए पाँव रुक जाते हैं। दिल के हौसले पस्त होने लगते हैं।

सागर —कौन-सी ऐसी बात है भला ?

सुन्दर —मियाँ बीबी के झगड़े।

इल्ताफ—यह भी कोई बात हुई।

सुन्दर —इतनी जल्दी भूल गये। तुम्हारे ही मुहल्ले की बात है न। रोज-रोज के झगड़े से तंग आकर मियाँ तालाब में डूब मरे, तो बीबी रस्सी से लटक गई।

सागर —चलो, अच्छा ही हुआ। कम-से-कम दुनियाँ को दो बुजदिलों से तो छुट्टी हुई। वे जीने नहीं मरने आये थे और मर गये।

ढोलन —और हम तुम।

सागर —जिसमें हिम्मत है, इस दुनिया से लड़ने की ताकत है, वह मरने नहीं, जिन्दा रहने आया है। मियाँ बीबी के बीच तो रोज झगड़े होते हैं और रोज सुलह होती है। इस समय मैं तुम्हारी भाभी से लड़कर आया हूँ। शाम को यदि मेरे घर आओ, तो देखोगे तुम्हारे भैया और भाभी गले-से-गले लगे बैठे हैं। कहाँ का झगड़ा और कहाँ की रार।

पाल —औरत-मरद तो इस सृष्टि रूपी गाड़ी के दो पहिये हैं। किसी एक की गैरहाजिरी में यह गाड़ी खड़ी नहीं रह सकती। ऐसा झगड़ा, जैसा कि सागर ने कहा है, मैं समझता हूँ, रोज एक नये प्रेम को जन्म देता है।

सागर —तुम बिल्कुल ठीक कहते हो चाचा। कुछ कहा-सुनी हो जाने पर दोनों के दिल का कलुष निकल जाता है। फिर मिलते हैं, तो हर चीज नई होती है। हर रोज की सुबह एक नयापन लिये होती है। जिन्दगी की एक मुस्कुराहट हजार कष्टों से जूझने को तैयार मिलती है।

सुन्दर —लेकिन मैं ऐसा नहीं सोचता। मुझे तो लगता है बीबी गले लटकी ढोल है। बजाना पड़े या न पड़े ढोना तो पड़ेगा ही।

इल्ताफ—अच्छा, तुम इसे गले में लटकाये फिरना नहीं चाहता।

ढोलन —तो सिर पर उठा लो।

सागर —सुन रहे हो न चाचा, बीबी गले लटकने वाली ढोल है।

सुन्दर —नहीं तो और क्या है ?

पाल —और यदि यही बात मर्दों के विषय में बीबियाँ समझने लगे तो ? मैं समझता हूँ, ऐसा कहने वाला पैदा ही नहीं होता। दुनियाँ ही कुछ और होती। न किसी के बाप का पता चलता और न किसी के माँ की। क्यों सुन्दर ?

सुन्दर —राबर्ट को तुम जानते हो चाचा।

पाल —क्या कहना चाहता है।

सुन्दर —अदालत में जो दर्खास्त उसने दी थी, वह मंजूर हो गई।

ढोलन —क्या मतलब ?

सुन्दर —यही, कि उसने अपनी बीबी को तलाक दे दिया है, और अदालत ने उसे मंजूर भी कर ली है।

मिला था।

सुन्दर —हाँ, पूछने पर कहने लगा, बस समझो जेल से रिहा हुआ हूँ। मैं अब और कुछ दिन अधिक जीवित रह सकूँगा।

सागर — शाबाश। मेरे राबर्ट के अनुयायी, शाबाश। बस तुम भी जिन्दगी भर खुली हवा में सांस लेते रहो जिस दिन बदन पर झुर्रियाँ पड़ेगी, हाथ थरथरायेंगे, और जब न तुझ से कोई बोलने वाला होगा और न कोई एक लोटा पानी देने वाला, तब समझोगे। लाख बार इन आँखों को आँसुओं से धोने पर जब कुछ दिखलाई नहीं देगा, तब अपनी दाढ़ी नोचेगा। आज तुम्हारी आँखें खुली हैं, लेकिन दिमाग बंद है। उस दिन दिमाग खुला और आँखे बन्द होंगी। समझे।

पाल —खाक समझेगा। ऐसा ही दिमाग होता तो एक छोटी-सी और जरूरी बात भी नहीं समझता।

सागर —सच कहता हूँ चाचा ? मुन्ना जब शाम सुबह मेरी गोद में चह-चहाता है, तो लगता है, मेरा अपना बचपना मेरी गोद में मुस्कुरा रहा है। कुलाचें मार रहा है। मुझे तो लगता है गलती से लोगों ने स्वर्ग की कल्पना आसमान से ऊपर की है, वह तो बच्चों की मुस्कुराहट और घर के आँगन में होनी चाहिये थी।

पाल —बिल्कुल ठीक कहते हो। पुरुषार्थ भी तो इसी में है कि स्वर्ग को आसमान से उतार कर धरती पर लाया जाय। इस अभाव-भरी दुनियाँ में रहकर यदि हम अपने क्षणिक जीवन के क्षणिक क्षण को ही आनन्द में बदल सके, तो मेरे और तुम्हारे लिए यही स्वर्ग है।

(खान में दुर्घटना का भोंपू चीख उठता है। सभी के काम करते हाथ रुक जाते हैं और जो जहाँ है, वहीं काठ-सा हो जाता है। भयभीत नजरों से एक-दूसरे को देखने लगता है।)

रेशमा —(भयभीत स्वर में चीखती एक ओर से प्रवेश करती हुई।) भागो। खान बैठ रही है। (सभी हड़बड़ाकर उठ खड़े होते हैं और भागने का उपक्रम करने लगते हैं। रंगमंच पर अँधेरा छा जाता है। दुर्घटना का भोंपू लगातार बज रहा है।)

पृष्ठभूमि से—दुकानदार जल्दी-जल्दी दुकानें समेट रहे हैं। स्कूली बच्चे बगल में किताबें दबाये अपने-अपने घरों की ओर भागते चले आ रहे हैं। एक साथ खेल रहे बच्चे तितर-बितर हो चुके हैं। औरतें परेशानी की दशा में चीखती-चिल्लाती खान की ओर भागी चली आ रही हैं।

भोंपू अब भी गूँज रहे हैं। माँगें उजड़ रही हैं। लाड़ले यतीम हो रहे हैं। खान के लिफ्ट मजदूरों को बाहर निकाल रहे हैं। जब कोई लिफ्ट ऊपर आता है, समूह की सांस रुक जाती है, और फिर, अचानक चंद चेहरे खिल उठते हैं और बाकी मुरझा जाते हैं। एम्बुलेंस भोंपू बजाती हुई खान के मुँह पर आ खड़ी हुई है। खान के अफसरों और मालिकों की कारें आने लगी हैं।

और अब हजारों फीट की गहराई में कमरों के खम्भे गिर रहे हैं। चट्टानें गिर रही हैं। राहें बन्द हो रही हैं। राही दब रहे हैं। राही पिस रहे हैं। राही काल कोठरियों में कैद हो रहे हैं।

(रंगमंच पर अब भी अंधेरा है, कुछ देर निस्तब्धता छाई रहती है। सागर टार्च का प्रकाश एक ओर घुमाता है और बाकी सभी गमगीन निराश और हतोत्साह घुटनों पर सिर दिये बैठे दिखलाई पड़ते हैं। प्रकाश पड़ते ही उनमें एक कम्पन आ जाता है और सभी प्रकाश की ओर उसी प्रकार बैठे बैठे मायूस निगाहों से देखने लगते हैं।)

सागर —तो हममें से कोई भी बाहर नहीं निकल सका।

सुन्दर —नहीं, किसी को भागने का कोई रास्ता नहीं मिला।

ढोलन —रास्ते सभी बन्द हो चुके हैं। और, इस छोटी-सी कोठरी में हम छह व्यक्ति जीवित कैद हो चुके हैं।

पाल —(मायूस स्वर में) हे भगवान ! क्या हम यहाँ से कभी नहीं निकल सकते ?

इल्ताफ—कभी नहीं, कभी नहीं।

रेशमा —(रोती आवाज में) ऐसा न कहो। भगवान के लिए ऐसा न कहो।

ढोलन —(हतोत्साह स्वर में) इल्ताफ ठीक कहता है, रेशमा।

पाल —हमें खुदा पर भरोसा रखना चाहिए। यदि उसने चाहा तो हम यहीं से अवश्य वापस निकल जायेंगे (कहकर दोनों हाथ पसार कर भगवान से दुआ माँगने लगते हैं।)

सुन्दर —पादरी चाचा ठीक कहता है। खुदा अगर हमें नहीं, तो हमारी आत्माओं को तो अवश्य इस कैद से रिहा कर ही सकता है। (कह कर अपनी उँगलियों को अपने बालों में फिराने लगता है।)

सागर —सारे काम भगवान पर छोड़ देने से कोई काम नहीं बनता। भगवान भी उसी की मदद करता है, जो अपनी मदद आप करता है।

ढोलन —फिर तुम्हीं कोई उपाय बतलाओ भैया।

सागर —मैं सोच रहा हूं, हमें बचाने वाले तीन दिन से पहले यहाँ नहीं पहुँच सकते तब तक हमें उनका इन्तजार करना होगा। उनके आने तक जिन्दा रहना होगा। हम यहाँ पर एक औरत और पाँच मर्द हैं।

इल्ताफ—तुम कहना चाहते हो भैया, कि हमें जितने दिन तक हो सके, जिन्दगी को घसीटना होगा। इस अँधेरी कोठरी में मौत से लड़ना होगा।

सागर —हाँ ! और उसका एक ही उपाय है कि हम सब अपना नाश्ता इकट्ठा कर चार-पाँच दिनों पर बाँट ले। वरना हम अपना-अपना खाना खत्म करके बारी-बारी से मरने लगेंगे। (पुनः टार्च का प्रकाश फेंकता हुआ) देखें कहाँ हो ?

सुन्दर —(झुँझलाहट के स्वर में) यही हैं। हम जायेंगे कहाँ ?

पाल —सुन्दर, हमें यों हिम्मत नहीं करनी चाहिये। खुदा पर भरोसा.....

इल्ताफ—(बीच में ही) खुदा ! खुदा !! खुदा !!! पादरी चाचा, कम-से-कम खुदा के वास्ते तुम इस जमींदोज कैदखाने में तो खुदा की रट न लगाओ। (रेशमा को हँसी आ जाती है। ढोलन के होटों पर मुस्कुराहट दौड़ जाती है और फिर देखा देखी सभी हँसने लगते हैं।)

पाल —(हँसना बन्द करता हुआ) जानती है रेशमा इस हँसी ने हमें क्या दिया है ?

रेशमा —क्या चाचा ?

पाल —इस घोर अंधकार में, हमारी इस मिली-जुली मुस्कुराहट ने, मरण-धर्मी मानव की शाश्वत महानता के दीपक की काँपती शिखा में कुछ स्थिरता ला दी है।

सागर —साथियो, आओ। जरा गम्भीरता से सोचें कि हमें क्या करना है ?

ढोलन —हमें सबसे पहले अपना एक लीडर चुन लेना चाहिये, ताकि हमें इस कैद में कितने दिन जीना है, अच्छी तरह जी सकें।

इल्ताफ—ढोलन ठीक कहता है।

पाल —और मैं इसके लिए सागर का नाम पेश करता हूँ।

सभी —(एक स्वर से) हम सभी इसका समर्थन करते हैं।

सागर —साथियो, इस सम्मान के लिए धन्यवाद। अब मैं आप लोगों के सामने, इस नई दुनियाँ की चंद-रोजा जिन्दगी का कार्यक्रम पेश करता हूँ। उस पर अमल करना आप सबों का फर्ज है। यहाँ हमारे जीवित रहने के साधन सीमित हैं। और जब साधन सीमित हों, तब वैयक्तिक स्वातंत्र्य के लबादे में छुपी हुई खुद-गर्जी बड़ी घातक सिद्ध होती है। इसीलिए आप सभी अपने-अपने टीपिन कैरियर पीने का पानी तथा शराब की बोतलें लाकर मेरे पास जमा कर दें। (सभी अपना-अपना सामान लाकर सागर के पास जमा कर देते हैं। सागर सभी को एक नजर मुआयना करता

हुआ।) अब हमारे पास खाने के पाँच नाश्तेदान, पानी की पाँच छागलें और शराब की डेढ़ बोतलें तथा दो टार्च हैं मैं हर बारह घंटे के बाद दो घंटे के लिए टार्च जलाया करूँगा। हर बारह घंटे के बाद आपको खाना मिलेगा, और रेशमा खाना परोसा करेगी।

ढोलन —हमें, तुम्हारी बातें स्वीकार हैं।

इल्ताफ—आप जैसा कहेंगे हम वैसा ही करेंगे।

शेष लोग—हाँ ! हाँ !! हमें कोई ऐतराज नहीं होगा।

सागर —एक बात और। आप अपनी पुरानी दुनियाँ, अपने सगे-सम्बन्धियों को बिल्कुल भूल जायें। जितना आप पुरानी बातें सोचेंगे, उतनी ही तीव्रता से भूख, उदासी, विवशता और दुर्भाग्य का एहसास आपको सतायेगा।

सुन्दर —तो हम पुरानी दुनियाँ के बारे में कुछ न सोचें।

सागर —बिल्कुल नहीं। समझ लें आप एक दुनियाँ से रवाना होकर दूसरी दुनियाँ में जाते हुए थोड़ी देर के लिए एक अस्थायी पड़ाव पर ठहर गये हैं। आप इससे अधिक कुछ न सोचें।

पाल —सागर ठीक कहता है। यदि हम अपने को ऐसा बना लें तो हमारे दिलों का बोझ हल्का लगेगा। संजीदगी से जीना ही जिन्दगी है।

रेशमा —और हमारा भविष्य।

सागर —वह तो और भी अंधकारमय है। जब तक हमारी सड़ी लाशें यहाँ से निकाली जायेंगी, तब तक हमारे रोने वालों के घाव भर

चुके होंगे। हमारी सड़ी हुई लाशें प्रगट होकर, उनके भरते हुए घाव को छील कर रख देंगी और तब उनके पास रोने के लिए आँसू भी न होंगे (ठहर कर) एक बात जानते हो?

ढोलन—क्या भैया?

सागर—जब मिस्री का फेराओ मरा था, तब उसे पिरामिड में दफ़न कर दिया गया था।

इल्ताफ—यह तो होना ही था।

सागर—और उसके साथ-साथ वे भी जीवित दफ़न हो गये थे, जो उसे दिल से प्यार करते थे। जब पिरामिड के पत्थर एक-दूसरे-से मिल रहे थे तब अन्दर फेराओ की लाश के करीब, उसके साथ जीवित दफ़न होने वाले बड़े इत्मीनान से मंत्र पाठ कर रहे थे।

रेशमा—लेकिन तुम क्या कहना चाहते हो?

सागर—यही, कि तुम लोग मुझे मरा हुआ फेराओ समझ लो, और अपने को उसके साथ जीवित दफ़न होने वाले।

(सभी ठट्ठाकर हंस पड़ते हैं।)

सुन्दर—यह भी खूब रही। तुम फेराओ और हम सभी उसके साथ जीवित दफ़न होने वाले।

सागर—और अंत में आप सबों से मुझे यह कहना है कि अब से बारह घंटे बाद, इस दुनियाँ का पहला खाना आप लोगों को मिलेगा। हर खाने के पहले आप सबों को पादरी चाचा के साथ मिलकर भगवान की प्रार्थना करनी होगी। किन्तु मैं उसमें शामिल नहीं होऊँगा।

इल्ताफ—क्यों ?

सागर —क्योंकि मैं मरा हुआ फेराओ हूँ। (सब फिर हँसते हैं।)

रेशमा —लेकिर खाने में तो शामिल होंगे।

सागर —उसमें भी नहीं।

पाल —क्यों ?

सागर —क्योंकि मरा हुआ व्यक्ति खाना नहीं खाता।

रेशमा—भला यह कैसे होगा ? हम सब खायेंगे और तुम भूखे रहोगे।

सब —यह नहीं हो सकता। हम सभी इस फैसले को रद्द करते हैं।

सागर —(तेज स्वर में) भाइयो। आप अपना फर्ज भूल रहे हैं। आप अभी से मेरी बात मानने से इन्कार कर रहे हैं, आगे न जाने क्या होगा ?

(सभी चुप एवं शांत हो जाते हैं।)

पाल —इस तरह तो तुम हम सबों से पहले ही चल बसोगे।

सागर —विश्वास कीजिए, हम सब एक साथ मरेंगे।

पाल —यही आत्म-विश्वास तुम्हारी नास्तिकता है।

सागर —नहीं चाचा, यही आत्म-विश्वास मेरा मजहब है। (ठहर कर) इसके पहले कि मैं टार्च की रोशनी गुल करूँ आप सभी अपना-अपना स्थान ले लें। रेशमा से कुछ हटकर ढोलन रहेगा। दूसरी दीवार के साथ पाल चाचा और इल्ताफ सोयेगा। तीसरी के साथ सुन्दर अकेला और चौथी के साथ मैं रहूँगा। (सभी उसके बतलाये हुए के अनुसार करते हैं। सागर टार्च की रोशनी में एक नजर मुआयना करता हुआ।) सब कुछ ठीक है।

सभी —(एक स्वर से) ठीक है।

सागर —सभी तैयार हैं।

सब —हाँ।

सागर —फिर मैं टार्च की रोशनी ऑफ करता हूँ। (कहकर टार्च की रोशनी बुझा देता है।)

(पर्दा गिरता है।)

दूसरा दृश्य

(पर्दा उठता है और सागर टार्च जलाकर जमीन पर रखता है।

सागर —भाइयो, तुम्हारी इस दुनियाँ का दूसरा सूरज उदय हो गया है। आज की सुबह सबको मुबारक हो।

सब —मुबारक हो।

सागर —रेशमा तुम इस दुनियाँ का पहला खाना परोसो, और भाइयो आप सभी एक कतार में बैठ जायें। (ढोलन को छोड़कर सभी एक पंगत में बैठ जाते हैं।) अरे। तुम नहीं खायगा।

ढोलन —भूख नहीं है।

रेशमा —बिना खाये कैसे रह सकोगे। (ढोलन फिर भी चुपचाप रहता है।)

पाल —ढोलन बेटे, जिद न कर। खाना खा ले। मरना तो है ही, फिर घुट-घुटकर मरने से क्या लाभ। जबतक जीना है मौज से जी।

ढोलन —(लेटा ही लेटा) मुझे ऐसे हो रहने दो चाचा। मैं मजे में हूँ। (कहकर मुँह फिरा लेता है।)

सागर —रेशमा। केवल तुम चार जगह ही खाना परोसो। (ठहर कर) परोस चुकी है।

रेशमा —हाँ भैया।

सागर —क्या-क्या परोसा है।

रेशमा — एक-एक पराठे, एक-एक टुकड़ा गोश्त, प्याज के एक-एक अद्धे। बस।

सागर —चाचा सब मिलकर प्रार्थना कर लो।

पाल —अच्छा भैया। (खँखार कर प्रार्थना करने लगता है। सागर और ढोलन को छोड़कर सभी अपने-अपने ढंग से प्रार्थना में शरीक होते हैं। कुछ देर तक प्रार्थना करते रहते हैं। पुनः सभी अपनी-अपनी जगह पर आ जाते हैं।)

सागर —अब तुम सब खाना शुरू करो। हर रोज आप सबों को इसी प्रकार खाना मिलेगा। एक बात और ध्यान में रखें। अपने-अपने खाने का आठवें हिस्से के बराबर एक कौर लेकर मुँह में रखें और फिर उसे आहिस्ता-आहिस्ता चबाते हुए निगलें। कोशिश यह होनी चाहिये कि, कौर को चबाने और निगलने में अधिक-से-अधिक समय लगे, आपके जबड़ों को ज्यादा-से-ज्यादा हरकत करनी पड़े। (कुछ देर तक सभी खाना खाते रहते हैं। सभी मौन हैं।)

रेशमा —खाना समाप्त हो चुका भैया।

सागर —तो अब सब को दो-दो घूँट पानी पिलाओ।

रेशमा —(पानी पिलाती हुई) यह भी कर चुका भैया।

सागर —अब एक-एक घूँट शराब इल्ताफ, सुन्दर और पाल चाचा को देना और दो घूँट मुझे (सभी आश्चर्य से सागर को देखने लगते हैं।) आश्चर्य करने लगे। मैंने खाना न खाने का वायदा किया था, किन्तु शराब के विषय में तो कुछ नहीं कहा था। (ठहरकर)

तुम सब क्या जानो मेरी इस लगन को। तुम्हारी भाभी अर्थात् मेरी घर वाली हर रोज मेरी जेब में एक बोतल लाल परी रख दिया करती थी। कितनी अच्छी थी वह। भगवान उसे सद्गति दे। (सभी हँसने लगते हैं।)

इल्ताफ—यदि कहो भैया तो हम लोग भी उसकी सद्गति के लिए प्रार्थना करें।

सागर —उसके लिए सद्गति की प्रार्थना तो बाद में करना, पहले इसके लिए तो कुछ करो। (कहकर ढोलन को आग्रहपूर्वक उठाता है।) ढोलन उठो तुम भी कुछ खालो।

ढोलन —(रूखे स्वर में) नहीं भैया। मुझे छोड़ दो।

पाल —विधवा माँ के एकलौते बेटे पर मुझे तरस आता है, लेकिन मैं क्या कर सकता हूँ। कोई क्या कर सकता है।

सागर —तो भाइयो अब आज का दिन समाप्त होता है। तुम सभी अपनी-अपनी जगह पर चले जाओ। (सभी अपनी अपनी जगह पर चले जाते हैं) चले गये। सूरज को अस्त होने दूँ।

सब —अस्त होने दो।

सागर —(टार्च की रोशनी गुल कर देता है तथा अँधेरे में बड़बड़ाने लगता है।) मुर्दे भी हमारी ही तरह बेबसी के आलम में चित लेटे, अपने लिए रोने वालों के बारे में इसी तरह सोचा करते होंगे। (ठहर कर) चाचा, अभी तो लोग मायूस नहीं हुए होंगे।

पाल —होना तो नहीं चाहिये। मेरा ख्याल है खुदाई का काम तेजी से हो रहा होगा।

(अचानक रेशमा चीख उठती है। सागर टार्च की रोशनी जला देता है। टार्च की रोशनी में रेशमा सुन्दर को ढकेलती, उठ बैठती दिखाई पड़ती है। वह लम्बी लम्बी साँस ले रही है। ढोलन एक क्षण यह देखता रहता है। पुन: तेजी से झपट कर सुन्दर को पकड़ लेता है और उसे पटक कर उसकी छाती पर चढ़ बैठता है। दोनों हाथों से उसके सिर के बाल पकड़ कर उसके सिर को जमीन पर मार रहा है। थोड़ी देर यही क्रम चलता है सुन्दर को असमर्थ तथा बेहोश होते देखकर पाल तथा इलताफ उसको छुड़ाने लगते हैं।)

सागर —(पाल तथा इलताफ को अलग करता हुआ) छोड़ दो इन लोगों को। अगर ढोलन इस बदकिस्मत शैतान को मार सकता है, तो मार डालने दो।

(ढोलन देर तक वैसा ही करता रहता है। आखिर सुन्दर बेहोश हो जाता है। सागर पास पहुँच कर दोनों को अलग कर देता है। सुन्दर को खींचकर पाल की पहलू में डाल देता है।)

सागर —इस अभागे के लिए सद्गति की प्रार्थना करो। (कहकर टार्च बुझा देता है और अपनी जगह पर आकर लेट जाता है।)

ढोलन —रेशमा, अब मैं तुम्हारी खातिर उस दिन तक जिन्दा रहूँगा, जब तक यह जलील मर नहीं जाता।

सागर —(टार्च जलाता हुआ) रेशमा अपने प्यारे हीरो को खाना खिलाओ। उसे शराब की एक घूँट के बदले दो घूँट देना। दो घूँट शराब पाल चाचा को भी दे आओ, ताकि वह उस बदनसीब को भी पिला दे।

ढोलन —(हँसकर) इस रियायत के लिए शुक्रिया। (रेशमा खाना लगाने को उठती है।)

❋

तीसरा दृश्य

सागर —(टार्च की रोशनी जलाता हुआ) आज का शुभ दिन मुबारक हो भाइयो।

सभी —मुबारक हो।

सागर —(टार्च की रोशनी से सुन्दर के चेहरे को भली प्रकार देखता हुआ तथा उसके गाल पर हल्की चपत मारता हुआ) नालायक बेटे। (रेशमा खाना परोस देती है और सभी एक कतार में बैठ जाते हैं। आज के खाने में ढोलन शामिल है।)

रेशमा —तुम भी आओ न सागर भैया। तुम्हारे लिए भी परोस रही हूँ।

सागर —ठीक है। अब मैं भी शरीक होऊँगा। तुम अपने, ढोलन और सुन्दर के लिए और लोगों की अपेक्षा दुगुना खाना परोसना। समझी।

रेशमा —ढोलन और सुन्दर को दोहरा हिस्सा मिलने की वजह हो सकती, मगर मुझे क्यों ?

सागर —यह अभी बतलाता हूँ। (पाल को सम्बोधित करता हुआ) चाचा, सबके लिए भगवान से दुआ माँगो। (पाल दुआ माँगता है और अंत में उसके "आमीन" कहने पर सभी एक स्वर से आमीन कहते हैं। सभी चुप हैं।)

इल्ताफ—तो अब शुरू किया जाय।

सागर —जरा ठहर जाओ। दोस्तो! आज हमारी इस दुनियाँ का सबसे

सुन्दर दिन है। आज ढोलन और रेशमा की चिर-कालीन अभिलाषाएँ पूरी होने वाली हैं।

पाल —वह कैसे ?

सागर —ढोलन और रेशमा दुल्हा-दुल्हन बनेंगे। (**रेशमा आनन्द में चीख उठती है और लाज में सिमटी एक ओर बैठ जाती है। ढोलन और सुन्दर को छोड़ बाकी सभी ताली बजाने और कहकहे लगाने लगते हैं।**)

ढोलन —यह तुम क्या करने जा रहे हो सागर भैया।

सागर —जो तुम बहुत दिनों से सोच रहे थे।

ढोलन —भगवान के लिए इसे अभी रोक दो।

सागर —अब तो भगवान ही रुक सकता है, लेकिन शादी नहीं रुक सकती। (**सुन्दर को हाथ पकड़ कर उठाता हुआ**) उठो, तुम क्या सोच रहे हो। तुम रेशमा के भाई बनो और रेशमा का हाथ ढोलन के हाथ में दो।

(**सुन्दर उठ खड़ा होता है और सर्वप्रथम ढोलन से गले-गले मिलता है। रेशमा की आँखों में खुशी से आँसू उमड़ आये हैं और वह दोनों हाथों से अपना मुँह छिपा कर रोने लगती है। सुन्दर उसके पास जाता है और एक क्षण रेशमा को श्रद्धा की दृष्टि से देखता रहता है।**)

सुन्दर —(**रेशमा का हाथ पकड़ कर उठाता हुआ**) उठ बहन, भूल हुई थी, क्षमा कर देना।

रेशमा —(**उठ खड़ी होती है, और एक क्षण आँसू भरे नेत्रों से सुन्दर को देखती रहती है।**) भैया।

(कहकर सुन्दर से लिपट जाती है। दोनों एक क्षण वैसे ही खड़े रहते हैं। आँसू दोनों की आँखों से गिरते रहते हैं। सभी की आँखें डबडबा आई हैं।)

सागर —(आँखों को हाथ की तलहत्थी से पोंछता हुआ) देर हो रही है। अब बस करो।

सुन्दर —(रेशमा से अलग होता हुआ) आओ बहन। (कहकर रेशमा का हाथ ढोलन के हाथ में देता हुआ) और तो पास में कुछ है नहीं एकलौती बहन का हाथ तुम्हारे हाथ दे रहा हूँ लाज रखना। बस, इतना ही कहूँगा। (एक हाथ से ढोलन का हाथ पकड़कर रेशमा का हाथ ढोलन के हाथ में दे देता है। रेशमा ठगी-सी चुपचाप खड़ी रहती है।)

सागर —शादी की रस्म यहीं खत्म करो। मेहमानों को भूख लग रही है, इसीलिए मियाँ बीबी अब अलग होकर खाने पर सबका स्वागत करें। (सभी हँसने लगते हैं और अपनी-अपनी आँखों के लछछलाये आँसू पोंछने लगते हैं। सभी चुपचाप खाने लगते हैं।)

सागर —शेष शराब को सभी पुरुषों में बराबर बाँट देता है) हमारी व्यवस्था में त्योहारों और खुशियों का पूरा-पूरा लिहाज रखा जाता है। आओ। इस शुभ विवाह के अवसर पर हम सभी दुल्हा-दुल्हन की खुशी में शरीक हों। (सभी पीते हैं। तालियाँ बजाने और कहकहे लगाने लगते हैं। और धीरे-धीरे खाना खाकर सभी अलग हो जाते हैं।) तथा अपना हाथ-मुँह पोंछने लगते हैं।

इल्ताफ—साथियो। आज का दिन शुभ दिन है। हम सभी खुश हैं। मैं

चाहता हूँ, इस खुशी के क्षण को कुछ और आगे बढ़ा दूँ यदि इजाजत हो तो.......................

सुन्दर --इसमें पूछने की कौन-सी बात है। अपनी बाँसुरी सँभालो और खुशी के मौके पर कोई अच्छी-सी चीज सुनाओ।

सागर —हाँ। हाँ। कोई अच्छी-सी चीज बजाना।

इल्ताफ़—तो सुनो। (कहकर बाँसूरी बजाने लगता है और बन्द करने पर सभी तालियां बजाते हैं।)

सागर —भई, अब हमें नये मियाँ-बीबी के आराम का बन्दोबस्त करना चाहिए। दोनों दिल-ही-दिल हमें गालियाँ दे रहे होंगे। (ठहरकर) पाल, इल्ताफ़ और सुन्दर सभी मेरे साथ चले आवें, और बाकी जगह उनके लिए खाली कर दें। (सभी अपनी-अपनी जगह आ जाते हैं और सोने की तैयारी करने लगते हैं।)

सागर —(टार्च की रोशनी बन्द करता हुआ) भई आप लोग अपने-अपने कान बन्द करके सो जायें, और दुल्हा-दुल्हन की सरगोशियाँ सुनने की कोशिश न करें। (कहकर हँसने लगता है। उसके साथ-साथ और भी हँसने लगते हैं और धीरे-धीरे वह मिली-जुली हँसी अंधेरे में डूब जाती है।)

पृष्ठभूमि से—समय यों ही बीतता गया। खुराक चुकती गई। कमजोरियाँ बढ़ती गयीं। वे सभी थक चुके थे, फिर भी जिन्दगी की लड़ाई लड़ रहे थे। किन्तु आज वे मैदान छोड़ चुके हैं। उनकी ताकत खत्म हो चुकी है। किसी-किसी के शरीर का कोई हिस्सा सुन्न होने लगा है। सभी चुप हैं और सोच रहे हैं।

पाल —(अंधेरे में ही मौत-जैसे खामोश वातावरण को चीरता हुआ) पिछली बार दो दिनों तक तो तेजी से तलाश जारी रही थी; फिर सब मायूस हो गये थे। खुदाई की रफ्तार सुस्त हो चुकी थी। आँसू थम चुके थे। धीरे-धीरे सब कुछ अपनी उसी पुरानी रफ्तार से चलने लगी थी, जैसे कुछ हुआ ही न हो।

पृष्ठभूमि से—और सागर सोच रहा था.......................

सागर —(अंधेरे में ही) मेरी घरवाली अब रोते-रोते थमक गई होगी। हाय ! अब वह किस पर बिगड़ेगी। किससे रूठेगी, और कौन उसे मनायेगा। छोटा मुन्ना अब भी रो रहा होगा। गीता अब जवान हो चुकी है। हर चीज वह समझती है। वह हर समय उदास और खोयी-खोयी रहती होगी।

पृष्ठभूमि से—सुन्दर को चमचम याद आ रही थी और वह सोच रहा था.............. ....

सुन्दर —(अंधेरे में) अजीब लापरवाह लड़की है। कहा करती थी, सुन्दर मुझे धोखा न देगा। कल तक वह रोती रही होगी। किन्तु उसके माँ-बाप मेरी मौत पर खुश होंगे। आज चमचम केवल उदास होगी और कल..............कल.................

पृष्ठभूमि से—और इल्ताफ को याद आ रहे थे.................

इल्ताफ—(अंधेरे में) मैंने अमीर बनने और अपना बैंड स्थापित करने की धुन में, जिन्दगी की जरूरतों की तौहीन की है। मैं किस कदर जलील आदमी हूँ। मेरी बैंक की रकम का अब क्या होगा ? बैंड कौन स्थापित करेगा ?

पृष्ठभूमि से —और रेशमा ढोलन से कह रही थी.................

रेशमा —(अंधेरे में) मेरे पाँव सुन्न हो गये हैं। क्या अब मैं मर जाऊँगी ?

ढोलन —नहीं ! नहीं !! जब तक मैं जिन्दा हूँ, तू नहीं मर सकती।

रेशमा —मान लो यदि हम नहीं मरे, तो क्या फिर भी तुम्हारी माँ मुझसे घृणा करेगी।

ढोलन —अगर उसका दिल पत्थर का नहीं है, तो कभी नहीं।

पृष्ठभूमि से—कब्र के वासी फूलों की तरह वे ढह पड़े थे। उनके ख्यालात मर चुके थे। वे स्वप्न में खो चुके थे। हर एक अपनी जिन्दगी की बाजी हार चुका था। सभी औंधे मेटे थे, जैसे उन पर मनों बोझ पड़ रहा हो।

धप ! धप !! धप !!!

ढोलन —यह क्या है रेशमा ?

धप ! धप !! धप !!

सागर —मैं देखता हूँ (**कहकर टार्च की रोशनी जला देता है और टार्च के प्रकाश में चारों तरफ देखने लगता है।**)

सुन्दर—यह क्या कर रहे हो टार्च बुझा दो।

सागर —नहीं। आज मैं मौत का चेहरा देखूँगा।

पाल —पागल हुए हो।

सागर —वही समझ लो।

धप ! धप !! धप !!!

इल्ताफ—सुन रहे हो।

सभी —हाँ।

सागर —ऐसा मालूम होता है, जैसे मौत यहाँ आने के लिए पत्थरों में से अपना रास्ता बना रही हो। (टार्च की रोशनी से इधर-उधर देखता रहता है और अन्त में उसकी रोशनी पाइप पर आकर टिक जाती है। वह अपने को घसीटता हुआ पाइप के पास ले जाता है, और पाइप से कान लगाकर सुनने लगता है। पुनः चीख पड़ता है) साथियो। "यह मौत नहीं, जिन्दगी है", जो हमारी तलाश कर रही है।

(शेष सभी अपने को घसीटते हुए पाइप के पास ले जाते हैं, और सभी पाइप से कान लगाये हुए हैं। ढोलन पाइप से मुँह-से-मुँह लगाकर जोर से चिल्लाता है और उसको हटाकर उसकी चिल्लाहट का जवाब सुनने लगता है।) चारों तरफ निस्तब्धता है।

रेशमा —कोई जवाब मिला।

सुन्दर—(खुशी के स्वर में) कह रहा है मैं अभी अकेला हूँ घंटे भर में मदद लेकर आ रहा हूँ। (सभी के मुरझाये चेहरे एक बार फिर खिल उठते हैं। और सभी एक-दूसरे को देखने लगते हैं।)

पर्दा गिरता है।

डूबते हुए इन्सान

(साहसिक तथा ऐतिहासिक परम्परा की एक अभिनव कड़ी)

पुरुष पात्र

कैप्टन जतार

कारनीक

गुन्हा

कैप्टन दीक्षित

कैप्टन पाठक

पिमेण्टा

डिसुजा

□

स्त्री पात्र

मिस ग्लोरिया बेरी

प्रथम अंक

प्रथम दृश्य

पृष्ठभूमि से—१९५५ की ११ अप्रैल। बैन्डूग कान्फरेंस का प्रथम दिवस। इतिहास का एक खौफनाक और सुन्दर पृष्ठ। उस दिन एशिया और अफ्रीका के छोटे-बड़े स्वतन्त्र राष्ट्र बैन्डूग में जमा हो रहे थे। पंचशील की छाया में पनपने और फूलने-फलने का स्पप्न देख रहे थे। नुमाइन्दे जमा हो रहे थे। एशिया और अफ्रीका के क्षितिज पर एक नया सूरज गहन अंधकार को चीरता उग रहा था। और इधर बेटे अपनी माँ से, भाई अपनी बहन से, पति अपनी पत्नी से, प्रेमिका अपने प्रेमी से बिछुड़ रहे थे। माँगें उजड़ रही थीं। बच्चे यतीम हो रहे थे। भारतीय अन्तर्राष्ट्रीय परिवहन का यात्री विमान "काश्मीर प्रिन्सेज" चीन समुद्र में डूब रहा था। चालक; यात्री मौत से जुझ रहे थे। आइये आप मेरे साथ आइये। मैं आपको हांगकांग लिए जा रहा हूँ। इधर आइये, यह रहा, हांगकांग हवाई अड्डे का जलपान घर। और ये रहे आपके चालक। उधर देखिये उस खिड़की से दूर खड़ा काश्मीर प्रिन्सेज दिखलायी पड़ रहा है।

(पर्दा उठता है। कैप्टन जतार; कारनीक, ग्लोरिया बेरी, गुन्हा, कैप्टन दीक्षित और कैप्टन पाठक रेस्टुरेंट में एक टेबुल के चारों ओर बैठे चाय पीते दिखलाई पड़ते है। रेस्टुरेन्ट की खिड़की से दूर खड़े 'काश्मीर प्रिंसेज' का एक भाग दिखलायी पड़ता है। एक अजनबी प्रवेश करता है और एक ओर से एक कुर्सी खींचकर बैठ जाता है।

अजनबी—(टूटी-फूटी अंग्रेजी में) Are not you flying a Chienese delegation to Bandung ? (बनावटी हँसी हँसता है। सभी स्तब्ध रह जाते है। कभी अजनबी को कभी एक दूसरे को देखने लगते हैं।)

अजनबा—(दीक्षित की ओर मुड़कर) Are not these chinks (things) very sicretive ? (सभी स्तब्ध हैं। कोई कुछ नहीं बोलता है।) Is not I right ?

कैप्टन दीक्षित—I do not know.

अजनबी—(पाठक की ओर मुड़कर) Ah "I am sure, you will be taking off pretty soon." Is an hour or so." (सबों को चुप देखकर) when will you reach Jakarta ?

कैप्टन पाठक—Some time in the evening. (ट्रैफिक कर्मचारी प्रवेश करता है) Passanger's luggage had heen loaded. The aircraft refuelled and ready for the flight.

कैप्टन जतार—Fast work.

कर्मचारी—No customs examination for the delegates, who are diplomates.

कैप्टन जतार—All right. We are coming.

(अजनबी उठकर चला जाता है)

ग्लोरिया बेरी—Some inquisitive journalist. I presume.

डि० गुन्हा—What a bore he was.

कैप्टन पाठक—I did not like him any way.

कारनीक—Nor did I ?

कर्मचारी—यह हांगकांग है, सर। ऐसे अपरिचितों से यहाँ सावधान रहना चाहिए। ये बड़े खतरनाक होते हैं।

कारनीक—लेकिन एक अजनबी दूसरे अजनबी को कैसे पहिचान सकता है।

ग्लोरिया बेरी—क्या मतलब ?

कारनीक—देखो मिस, यहाँ हम अजनबी हैं ऐसी हालत में····

कै० पाठक—(**बीच में ही**) तुम ठीक कहते हैं।

कै० जतार—लेट अस गो नाऊ। (**उठ खड़ा होता है।**)

ग्लोरिया बेरी—यस सर, (सभी उठ खड़े होते हैं और कै० जतार के साथ-साथ जाते हैं। मंच पर अँधेरा छा जाता है। पुनः एक क्षण बाद रोशनी होती है और काश्मीर प्रिन्सेज पर सभी बैठे दिखलायी पड़ते हैं।)

ग्लोरिया बेरी—भद्रजन। दोपहर का अभिनन्दन है। भारतीय अन्तर्राष्ट्रीय परिवहन का यात्रिक यान "काश्मीर प्रिन्सेज" आपसे अपने-अपने स्थान ग्रहण करने का अनुरोध करता है। तथास्तु आपका स्वागत है। स्थानीय समय अभी दिन के १२ बजकर २ मिनट हुआ है। हम लोग जकार्त्ता की यात्रा आरम्भ करने ही वाले हैं। यात्रियों से अनुरोध है, कृपया वे अपनी-अपनी सीट बेल्ट बाँध लें और धूम्रपान न करें। (**मौन**) यहाँ से जाकार्ता की १९६० मील की दूरी करीबन ७ घंटे और ३० मिनट में पूरी होने की सम्भावना है। हम सभी १८,००० फीट की ऊँचाई पर उड़ रहे होंगे और दोपहर की चाय आपकी सेवा में वहीं पेश की जायेगी। (**मौन**) उड़ान अनु-धावक (Flight Pursers) डी सोजा तथा पिमेन्टा और यान सत्कारिणी (Air hostess) मिस ग्लोरिया बेरी आप सबों की सेवा

में उपस्थित हैं। इनसे आप किसी प्रकार की सहायता लेने में तथा आवश्यकतानुसार नाश्ता-पानी माँगने में कृपया संकोच न करेंगे। (मौन) मैं कैप्टन जतार तथा उनके सहयोगियों की ओर से आप को सुखमय तथा आनन्दप्रद यात्रा की मंगल कामना करती हूँ। (मौन) कृपया आप सभी इस ओर ध्यान देंगे। हवाई यात्रा में लाइफ बोट (Life boat) के अभ्यास का प्रदर्शन एक आम बात है। आपके सामने लाइफ बोट (Life boat) पहन कर हम आपको यह दिखावेंगे कि कुसमय तथा आपत्ति में पानी में उतरते समय कैसे लाइफ-बोट का उपयोग अपने जीवन रक्षा के हेतु किया जाता है। आपके सामने अनुधावक डी सोजा तथा पिमेन्टा लाइफ-बोट पहन कर आपको दिखलायेंगे। (मौन) आकस्मिक दुर्घटनाओं में पानी पर उतरते समय किस प्रकार लाइफ-जैकेट प्रयोग में लाया जाता है, इसका प्रदर्शन अभी-अभी आपके सामने डिसोजा तथा पिमेन्टा ने किया। और जिसे आप सबों ने देखा भी। आपका यह लाइफ जैकेट बड़ी आसानी से पहना जाता है और स्वत: फूलता है। इसके अतिरिक्त इसे मुँह से हवा देकर फुलाने की सुविधा भी दी गयी है। मुख्य और ध्यान देने की बात यह है कि जब तक आप यान से भली-भाँति निकल न जायें इसे फुलाने की चेष्टा नहीं करें। और अन्त में मैं फिर कहती हूँ यह प्रदर्शन रोज की ही तरह एक आम बात है। धन्यवाद !

★

दूसरा दृश्य

पृष्ठभूमि से—[और इस प्रकार काश्मीर प्रिन्सेज हवा में उड़ने लगा। समुद्र की सतह से १८,००० फीट की ऊँचाई पर नीले आकाश के नीचे २८० मील प्रति घंटे की चाल से वह भागा जा रहा था। हांगकांग पीछे छूट चुका था। जकार्त्ता समीप आता जा रहा था। यात्री इत्मीनान से बैठे बैन्डूग कान्फरेंस को सोच रहे थे। यान पूरी वफादारी से अपने फर्ज निभाता बढ़ता जा रहा था। समय बीत रहा था। मिनट घंटों में बदल रहे थे। और इस तरह चार घन्टे और पैंतीस मिनट बीत चुके थे। विमान बम्बई रीफ पार कर चुका था और अब वह दक्षिण चीन समुद्र के नुतना द्वीप समूह से गुजर रहा था। धीरे-धीरे द्वीप खण्ड पीछे छूटते जा रहे थे। नुमाइन्दे एशिया और अफ्रीका की एकता को बैन्डंग कान्फरेंस से निकलते सूरज को देख रहे थे। देख रहे थे एशिया और अफ्रीका के छोटे-छोटे किन्तु नये राष्ट्रों को गुलामी का जुआ फेंक कर धरती पर उगते हुए। देख रहे थे अफ्रीका और एशिया के भाई-चारे को पनपते हुए। दूरी को सिमटते हुए। (रह-रह कर हवाई जहाज उड़ने की आवाज) और इधर कैप्टन जतार पूर्वी एशिया में अपनी नयी पोस्टिंग को सोच रहा था। सोच रहा था पोस्टिंग कहीं भी हो, किन्तु साथ में एक दिल-मिला दोस्त अवश्य रहे।

दीक्षित —अपने लड़के भरत को सोच रहा था। जो अब बड़ा हो चुका था। उसकी पढ़ाई के विषय में नये-नये मनसूबे बाँध रहा था।

डी०गुन्हा—अपने पत्र के जवाब के लिए बेजार हो रहा था, जो उसने अपनी पत्नी को लिखा था।

डी० सुजा—घर पर अकेली इन्तेजार करती अपनी पत्नी को सोच रहा था।

पिमेन्टा —बहुत दूर गोआ में अपनी बूढ़ी माँ को सोच रहा थ।।

और ग्लोरिया बेरी—कलाई पर बँधी सुन्दर घड़ी के शीशे में अपने होने वाले प्रीतम की हँसती हुई तस्वीर देख रही थी। सोच रही थी एक महीने के बाद दोनों एक दूसरे की भुजाओं में बँधे होंगे। और तभी······(बम फटने की भीषण ध्वनि। रंगमंच पर धुआँ छा जाता है। और सारा हाल (Hall) एक अजीब प्रकार की विषैली गंध से भर जाता है।) सब के चेहरे पर हवाइयाँ उड़ने लगी हैं। मन के दौड़ रहे घोड़े जहाँ तक पहुँच चुके थे, वहीं रुक गये। आश्चर्य और भय से एक दूसरे को देखने लगे। मौत की भीषण छाया आँखों के आगे नाचने लगी। हवाई जहाज उड़ने की आवाज दूर से समीप आती है। आग की लपटें हवा में जब-तब दर्शकों को दिखलाई पड़ती हैं। धुआँ बराबर आ रहा है।)

कारनीक—(घबड़ाये स्वर में) कैप्टन, जान पड़ता है रीअर बैगेज कम्पार्टमेंट में आग लग गयी है।

कै० जतार—डी० गुन्हा, आग बुझाने का प्रयत्न करो।

डी० गुन्हा—यस बॉस। (मौन)

कैं० पाठक—(भयभीत स्वर में) कैप्टन, आग रीअर बैगेज कम्पार्टमेंट में नहीं प्रिन्सेज के दाहिने डैने में लगी है।

डॉ० गुन्हा —तुम ठीक कहते हो। आग सचमुच दाहिने डैने में लगी है। वह देखो, कितनी तेजी से आग फैलती आ रही है।

कैं० पाठक—आग भयानक होती जा रही है। कैप्टन, डीच (Ditch) करने के अतिरिक्त बचाव का और कोई रास्ता नहीं है। जितनी जल्दी हो सके प्रिन्सेज को पानी पर उतारने की····

डॉ० गुन्हा—(बीच में ही) The hydraulic system had failed.

कैं० दीक्षित—So they have done us in. It is un-doubtedly an act of sebotage. May I send the May day signal cap.

कैं० जतार—तुम कन्ट्रोल सँभालो। मैं एक बार स्वयं सारी परिस्थिति को समझ लेना चाहता हूँ। विमान को नीचे की ओर·········...

कैं० दीक्षित—(बीच में ही) ठीक है कैप्टन ! वैसा ही करूँगा। (मौन) तुम आ गये कैप्टन क्या स्थिति है ?

कैं० जतार—ऐसा लगता है, टाइम बम के फटने से पेट्रोल की टंकी फट गयी है। आग भयंकर होती जा रही है बचने की आशा कम है। तुम मे डे मेसेज दो।

कैं० दीक्षित—एस कैप (Captain)

Victor Echo PAPA Calling.

May day, May day, May day.

कारमीक—मिस बेरी, लाइफ जैकेट यात्रियों को पहना दो।

ग्लोरिया बेरी—वह तो मैं कब की कर चुकी।

कारनीक—तुम से यही उम्मीद थी मिस। अपनी-अपनी जिम्मेदारी पूरी कर इस संकट की घड़ी में कप्तान की मदद करना हमारा फर्ज है।

ग्लोरिया बेरी—यह तो हमें करना ही चाहिए।

कारनीक——आग की लपटें कितनी भयावह होती जा रही हैं। कितनी तेजी से जहाज को भस्म करती जा रही हैं। मिस बेरी, इधर आओ, वह देखो। आग की लाल और पीली लपटें आकाश को छू लेना चाहती हैं। सम्पूर्ण जहाज को निगल लेना चाहती है।

मिस बेरी—हे भगवान ! कितना भयावह दृश्य है। वह देखो, कारनीक, वह देखो, आलमोनियम की कठोर चादरें साधारण कागज की भाँति जलती .जा रही हैं। टूट-टूट कर गिरती जा रही हैं। वींग्स कमजोर होता जा रहा है। जहाज से उसका सम्बन्ध टूटता जा रहा है। वह देखो, वह जलता हुआ टुकड़ा गिरकर वायुमंडल में विलीन हो गया। क्षणमात्र में ही अदृश्य हो गया। जहाज को जलते हुए देखने के अलावे और हम कुछ नहीं कर सकते।

कारनीक—मिस ग्लोरिया जल्दी करना।

ग्लोरिया बेरी—क्या बात है ?

कारनीक—अभी समय है। आओ, लाइफ जैकेट हम कप्तान और उसके साथियों को भी पहना दें।

ग्लोरिया बेरी—खूब याद दिलायी। वक्त निकलता जा रहा है। चलो। (मौन)

कै० जतार—दीक्षित, प्रिन्सेज की मौजूदा हालत और लोकेसन (Location) की सूचना भेज दो।

कै० दीक्षित—मैं भी यही सोच रहा था। अभी भेजता हूँ। (**ठहर कर भयभीत स्वर में**) कैप्टन, कैप्टन, रेडियो इज डेड। इलैक्ट्रिक सीसटम इज फेल्ड।

कै० जतार—Dear Gunha, Switch off the electrical generation and the batteries." Let us hope for the best.

कारनीक—कैप्टन, दो एक मिनट में वींग्स टूट कर गिर सकता है।

कै० जतार—घबड़ाओ नहीं, हम डीच कर रहे हैं (**मौन**)

डी० गुन्हा—तीसरे इंजिन को भी आग पकड़ चुकी है। वह भी जलने लगा है।

कै० जतार—इसे बंद कर दो, और आग बुझाने की कोशिश करो।

डी० गुन्हा—Cabin is now fully depressurised cap.

कै० जतार—कारनीक, बाहर निकलने के सारे द्वार और खिड़कियाँ खोल दो।

कारनीक—अभी खोलता हूँ।

पृष्ठभूमि से—और इस प्रकार वह भयंकर आग बढ़ती गयी। दाहिना डैना पूर्णतः जल चुका था। आग बायें डैने को पकड़ चुकी थी। सारा कैबिन भयंकर धुएँ से भर चुका था। कैबिन गर्म हो चुका था। जिन्दगी और मौत की लड़ाई जारी थी, प्राण रक्षा के सारे प्रयत्न विफल होते जा रहे थे। प्रिन्सेज नीचे उतर चुकी थी। पानी दिखलाई पड़ रहा था। बाहर निकलने के सारे द्वार और खिड़कियाँ खुल चुकी थीं। अब प्रिन्सेज पानी की सतह पर उतर चुकी है। पानी के भीतर १५० मील प्रति घंटे की रफ्तार से भागी जा रही है। (**पानी पर उतरने की भयानक अवाज और फिर घोर निस्तब्धता।**)

(पर्दा गिरता है।)

तीसरा दृश्य

[पर्दा उठता है। जलता हुआ पेट्रोल पानी पर बहता दिखलायी पड़ता है। पानी पर आग की लपटें ऊपर उठती हुई दिखलायी पड़ती हैं। कारनीक आग से अपनी रक्षा करता हुआ एक ओर से तैरता प्रवेश करता है। कुछ दूर पर उससे सट कर पाठक तैरता हुआ दिखलायी पड़ता है। आग पाठक के पीछे से आ रही है। कारनीक उसे देख लेता है।]

कारनीक—पाठक आग से बचो। तुम्हारी ओर आ रही है। (पाठक एक बार अपनी चारों ओर देखता है—पीछे से आग आती देखकर एक ओर हट जाता है और कारनीक के पास आने का प्रयत्न करता है। उन दोनों के बीच से पानी के अन्दर से दीक्षित, निकलता है। आग उसके पास है। कारनीक उसे देख लेता है।) दीक्षित वहाँ आग है। और हट जाओ कैप्टन।

कै० दीक्षित—(एक बार अपनी अपनी चारों ओर देखता है और आग की लपटों से अपनी रक्षा करता है।) कैप्टन को भूल जाओ। अपनी रक्षा करो। (पाठक) बहता हुआ कारनीक से आगे निकल जाता है, और कारनीक तैरता हुआ दीक्षित के पास पहुँच जाता है। (दीक्षित दर्द से कराहता है।) मुझे अकेले न छोड़ना कारनीक। मेरी पसली की हड्डी शायद टूट गयी है। बुरी तरह दर्द कर रही है।

कारनीक—ऐसा न सोचो दीक्षित। हम एक दूसरे को छोड़कर दूसरी भूल करेंगे। तैर कर या तो हम एक साथ पार करेंगे या फिर एक साथ ही डूब मरेंगे।

(एक दूसरे के कुछ फासले पर तीनों बहते जाते हैं। पाठक, फिर कारनीक और सबके पीछे दीक्षित है।)

दूर से धीमी आवाज—Where are you ? Where are you ?

तीनों —(अपना एक-एक हाथ उठाकर हिलाते हैं) हम यहाँ हैं। चले आओ।

दीक्षित— कौन हो सकता है ?

कारनीक-डी० गुन्हा की आवाज जैसी लगती थी।

पाठक —मुझे भी ऐसा ही लग रहा था।

(तीनों के पास से एक और व्यक्ति बहता हुआ गुजर जाता है।)

कारनीक—यह कौन जा रहा है ?

पाठक —पहिचान में नहीं आ रहा है :

कारनीक—मृत तो नहीं है ?

पाठक —ऐसा तो नहीं लगता। उसका फूला हुआ वह पीला लाइफ जैकेड बह रहा है, अभी वह जीवित है।

दीक्षित —तुम ठीक कहते हो।

कारनीक—आखिर हम इस गर्म धारा के साथ कहाँ बहे जा रहे हैं।

दीक्षित — यों तो चारों ओर द्वीप ही द्वीप दिखलायी पड़ते हैं। किन्तु मेरी समझ से लक्ष्य बनाकर चलना सुगम रहेगा और आसान भी होगा।

पाठक —सो तो ठीक है। किन्तु, मैं समझता हूँ इस हालत में पानी से खिलवाड़ करना नादानी होगी। धारा के अनुकूल चलने में हमें कम परिश्रम करने पड़ेंगे और किनारे पर शीघ्र पहुँच जायेंगे।

कारनीक—सामने देखो ! नारियल के लम्बे-लम्बे वृक्ष हमें अपनी ओर बुला रहे हैं। कह रहे हैं, घबड़ाओ नहीं, सब ठीक हो जायेगा।

दीक्षित —फिर तो हम उसी ओर चलें। (पाठक दर्द से कराहता है)

कारनीक—क्या बात है पाठक ?

पाठक —मेरे बायें हाथ की हड्डी कहीं टूट गयी है। (कराहता है।)

कारनीक—धीरज रखो। दीक्षित की भी गले की हड्डी टूट गयी है।

दीक्षित —(उँगली से संकेत करता है) हमें वहाँ जल्दी पहुँचने की कोशिश करनी चाहिये। वहाँ पहुँचकर और तट के लोगों की सहायता से हमें औरों को बचाने का प्रयत्न करना चाहिये।

कारनीक—वह द्वीप उतना समीप नहीं, जितना तुम समझते हो। मैं समझता हूँ वह द्वीप उजाड़ है। आबादी हीन है।

पाठक—लेकिन ऐसा समझने का कारण।

कारनीक—बहुत साफ है। हमारा जहाज हवा में जल रहा था। उसकी भयानक लपटें दूर से अवश्य दिखलायी पड़ रही होंगी। अभी-अभी कितना भीषण शब्द हुआ था, जब हमारी प्रिन्सेज पानी के भीतर उतरी थी। पानी पर बहता हुआ पेट्रोल बुरी तरह जल रहा था। उसकी लपट पचास फीट तक उठ रही थीं। इतना सब कुछ मिनटों में हो गया। किन्तु द्वीप पर मैंने किसी प्रकार की कोई हलचल नहीं देखी। यदि द्वीप पर कोई प्राणी मात्र होता, तो हमारी सहायता के लिये अब तक आ चुका होता।

दीक्षित— तुम्हारा अनुमान ठीक भी हो सकता है। किन्तु हमें आशा नहीं छोड़नी चाहिए।

पाठक— अब तो सूरज भी डूब रहा है।

(डूबता हुआ सूरज क्षितिज पर दिखलायी पड़ता है)

कारनीक— यही तो चिन्ता है। जो हमें भटकने से बचा रहा था, इस बुरी हालत में भी जो हमें धीरज बँधा रहा था, वह भी अपनी ममता को समेट कर छिपने जा रहा है।

दीक्षित—(**अपनी कलाई पर बँधी घड़ी देखता है।**) अरे? जानते हो, हमें तैरते हुए एक घंटा से अधिक हो गया। किन्तु किनारा हमसे दूर होता जा रहा है।

(पाठक तेज धार में पड़कर तेजी से बहने लगता है।)

कारनीक—पाठक! पाठक!

पाठक—मेरी चिंता मत करो। प्राण रक्षा का सारा दारोमदार तुम दोनों पर है। शीघ्रता से द्वीप पर पहुँचने की चेष्टा करो। मुझे मेरे भाग्य पर छोड़ दो। (**तेजी से बहता हुआ अदृश्य हो जाता है।**)

दीक्षित—अन्धेरा बढ़ता जा रहा है कारनीक? रोशनी......

कारनीक—(**बीच में से**) वह तो अब भी हमारे पास है।

दीक्षित—मजाक छोड़ो।

कारनीक—सच्ची बात तुम्हें मज़ाक लगने लगी। तुम्हारी लाइफ जैकेट में Illuminated water proof bulb लगा है। इस अँधेरे में तुम्हारा वह बल्ब ही हमारा मार्ग प्रदर्शक होगा। (**कुछ देर तक दोनों मौन तैरते रहते हैं।**)

दीक्षित—मैं समझता हूँ, पंडित जी अब तक किनारे पर पहुँचाये होंगे। लोगों को हमारी मदद के लिये जमा कर रहे होंगे।

कारनीक—मैं भी ऐसा ही सोच रहा हूँ (**दोनों एक दूसरे से हटने लगते हैं।**)

दीक्षित—कारनीक, लगता है, हम एक दूसरे से अलग होते जा रहे हैं।

कारनीक—फिर तो हम दोनों रात के इस फैलते अँधेरे में सदा के लिये गुम हो जायेंगे।

दीक्षित—मुझे एक बात सूझी है।

कारनीक—कहो भी।

दीक्षित—हम दोनों एक दूसरे को आपस में बाँध लें।

कारनीक—अच्छी सूझ है। अपनी लाइफ जैकेट की डोर में तुम्हारे लाइफ जैकेट की डोर बांध लेता हूँ।

दीक्षित—बहुत खूब! यह लो।

कारनीक—लाओ। (**डोर को एक दूसरे से बाँधता है कुछ देर तक दोनों मौन बहते जाते हैं।**)

दीक्षित—न जाने क्यों? पाठक का अलग होना मुझे अच्छा नहीं लग रहा है। वह अभी हमारे साथ रहता तो अच्छा था।

कारनीक—ऐसा सोचना तुम्हारी भूल है।

दीक्षित—कैसे?

कारनीक—पाठक को मैं अच्छी तरह जानता हूँ। वह बहुत कुशल तैराक है। यदि हम उसे अपने पास रोक लेते तो वह कभी भी शीघ्रता से तट पर नहीं पहुँच पाता। और फिर हमारी सहायता भी······

दीक्षित—(**बीच में ही**) समय पर नहीं मिल पाती। तुम ठीक कहते हो। (**मौन बहते जाते हैं**)

कारनीक—देख रहा हूँ; जीवन और मरण की यह आँख मिचौनी शीघ्र समाप्त नहीं होने जा रही है।

दीक्षित—इस खेल को खेलते रहने के लिये हमें कल सुबह तक जीवित रहना होगा।

कारनीक—समय के साथ हम थकते जा रहे है। शरीर पर भार का दबाव बढ़ता जा रहा है।

दीक्षित—तो एक काम करो।

कारनीक—क्या ?

दीक्षित—हम अपने पेंट उतार लें। ऐसा करने से हमारे शरीर पर वजन का दबाव कुछ कम हो जायेगा, और तैरने में सहुलियत भी होगी।

कारनीक—गुड आइडिया। (**दोनों वैसा ही करते हैं।**)

दीक्षित—अब कितनी दूर जाना है कारनीक ?

कारनीक—कोई सौ गज। (**मौन तैरते जाते हैं।**)

दीक्षित—लगता है हम गलत दिशा में बहते जा रहे हैं।

कारनीक—गलत हैं या सही, हमें चलते रहना है।

दीक्षित—लेकिन कितनी देर तक।

कारनीक—जब तक हमारा शरीर हमारा साथ देता रहेगा (**मौन बहते जाते हैं।**)

दीक्षित—कितना बाकी है ?

कारनीक—कोई सौ गज होगा।

क्यों मजाक कर रहे हो। तुम्हारा यह सौ गज कितना बड़ा है, जो समाप्त होने का नाम ही नहीं लेता।

कारनीक—घबड़ाने की कौन-सी बात है। जहाँ पहुँचे, समझो समाप्त हो गया।

दीक्षित—(निराश होकर) ठीक है दोस्त।

कारनीक—निराश न हो दीक्षित। हमें जीवित रहना है और हम रहेंगे।

दीक्षित—किसलिये।

कारनीक—यह कहने के लिये कि कितनी बहादुरी से हमने मुसीबत का सामना किया है। यह कहने के लिये कि "प्रिन्सेज" डूबी नहीं, उसे टाइम बम से दुश्मनों ने डुबो दिया है। सत्य को संसार से कहने के लिये हमें जीवित रहना होगा। (ठहर कर) तुम चुप क्यों हो गये ? क्या सोचने लगे ?

दीक्षित—सोच रहा था, हमारी ही तरह कैप्टन जतार और ग्लोरिया बेरी भी कहीं जीवित हैं। कैप्टन जैसा साहसिक और धैर्यवान अपने जीवन में दूसरा नहीं देखा।

कारनीक—और मिस ग्लोरिया बेरी भी किसी से कम नहीं थी।

दीक्षित— उसी के कारण में अब तक जीवित हूँ। यह लाइफ-जैकेट उसी ने अपने हाथों पहनायी थी। मैं आजीवन उसका आभारी रहूँगा।

कारनीक—भगवान, उन दोनों का मंगल करें।

दीक्षित— (चौंककर) अरे, यह क्या ? यहाँ का पानी बहुत ठंडा है।

कारनीक—सचमुच लगता है पानी यहाँ बहुत गहरा है।

दीक्षित —(घड़ी देखता है) कारनीक, हमें तैरते हुए चार घंटे हो गये।

कारनीक—फिर तो अब तक सारी दुनिया जान चुकी होगी, कि "काश्मीर प्रिन्सेज" समुद्र में कहीं खो गयी है।

दीक्षित —(थके स्वर में) बदन थक चुका है। तैरने की शक्ति घटती जा रही है। लगता है हम नाहक अपने को थका रहे हैं।

कारनीक—इस प्रकार सोचोगे तो यहीं रह जाओगे। हिम्मत ही हमारी पूँजी है। यदि हमने इसे भी गँवा दी तो समझो बेड़ा कभी किनारे नहीं लगेगा। मरना ही था तो हम जहाज में ही मर गये होते।

दीक्षित —फिर तो हम एक काम करें।

कारनीक—क्या ?

दीक्षित—बुरी तरह थक चुके हैं। बारी-बारी से हम थोड़ा सुस्ता लें कुछ सो लें।

कारनीक—ख्याल बुरा नहीं है।

दीक्षित —फिर।

कारनीक—सोचता हूँ कहीं सोने की झंझट में हम सदा के लिये सो गये तो ?

दीक्षित —फ़िर क्या कहते हो ?

कारनीक—भगवान पर भरोसा रखो और आगे बढ़ते चलो। (मौन बहते जाते हैं।)

दीक्षित —हमारा इस प्रकार मरना बड़ा दुःखदायी होगा।

कारनीक—और दयनीय भी। (ठहरकर) किन्तु मैं ऐसा नहीं सोचता।

दीक्षित —फिर क्या सोचते हो ?

कारनीक—मुझे विश्वास है, हम अपनी बची-खुची हिम्मत और ताकत के सहारे कल सुबह तक अवश्य तैरते रहेंगे। और ऐसा ही करना हमारे हक में अच्छा भी है।

दीक्षित —तुम्हारा मतलब है, हमें इस प्रकार जीवन और मृत्यु से नौ घंटे तक और जूझते रहना होगा।

कारनीक—ऐसा ही समझो। (हवाई जहाज उड़ने की ध्वनि दूर से समीप आती है।)

दीक्षित —यह जहाज हमें ही तो नहीं खोज रहा है,? लगता है? अब हम शीघ्र ही मनुष्य लोक में वापस लौट जायेंगे। (आवाज अचानक बंद हो जाती है और दोनों उदास हो जाते हैं।)

कारनीक—किसी और बात की आशा करना व्यर्थ है। हमें अपने ही पर भरोसा रखना होगा।

दीक्षित —तुम ठीक कहते हो। (ठहर कर) अब कितनी दूर जाना है?

कारनीक—अब सौ गज से अधिक नहीं है।

दीक्षित —अरे, यार? तुम्हरा यह सौ गज नवाब साहब की लोमड़ी की दुम है, जो सौ गज से घटने का नाम नहीं लेती।

कारनीक—मैं भी सुनूँ, कौन नवाब थे, जिनकी लोमड़ी की दुम इतनी लम्बी थी।

दीक्षित —एक नबाब साहब थे। उनका एक खानसामा था। उसे वे बराबर अपने साथ रखते थे। नवाब साहब अपने जमाने में आले दर्जे के गप्पी थे। इसलिये अपने खानसामे को कह रखा था, यदि गप्प बनाने में मुझसे कहीं गलती होने लगे तो तुम खँबर देना। मैं सँभल जाऊँगा।

कारनीक—फिर क्या हुआ।

दीक्षित —एक दिन ऐसा संयोग भी आ गया। नवाब साहब एक बड़ी मजलिस में बैठे हुए थे। गप्पें चल रही थीं। उनका खानसामा उनके बगल में खड़ा था। होते-होते हमारे नवाब साहब की बारी आयी।

कारनीक—तो इसमें लोमड़ी की दुम कहाँ से आयी ?

दीक्षित —बीच में टोककर मूड खराब कर देते हो।

कारनीक—अच्छा बाबा, नहीं टोकूँगा। आगे कहो।

दीक्षित—नवाब साहब कहने लगे। एक-बार अपने इसी खानसामे के साथ कहीं जा रहे थे। रास्ते में एक जंगल पड़ता था। दोनों जंगल में घुस गये, तो क्या देखते हैं, एक लोमड़ी दौड़कर हमारा रास्ता काट गयी। दोनों खड़े हो गये, और दुम गुजरने तक वैसे ही खड़े रहे।

कारनीक—क्या मतलब ?

दीक्षित —लोमड़ी तो जंगल में अदृश्य हो गयी, किन्तु उसकी दुम को रास्ते से गुजरने में कई मिनट लग गये।

कारनीक · अच्छा !

दीक्षित—यह सुनकर नवाब साहब के साथियों ने आश्चर्य से पूछा, आखिर उसकी दुम कितनी बड़ी थी।

कारनीक—क्या कहा नबाब साहब ने।

दीक्षित—नवाब साहब ने कहा, 'क्या कहूँ जनाब उसकी दुम करीबन पाँच सौ गज लम्बी रही होगी, खानसामा जोर से खँखरा।

कारनीक—फिर।

दीक्षित—खानसामे को खाँसते देखा तो नवाब ने कहा पाँच सौ गज तो नहीं, किन्तु तीन सौ गज अवश्य रही होगी। खानसामे ने फिर खाँस दिया।

कारनीक—तब क्या हुआ।

दीक्षित —नवाब साहब ने सोचा शायद वे कहीं गलती कर बैठे हैं, इसलिये उन्होंने दुम की लम्बाई तीन सौ गज से घटाकर दो सौ गज कर दी। लेकिन इस बार भी खानसामे से नहीं रहा गया और उसने खँखर दिया।

कारनीक—आखिर म क्या हुआ ?

दीक्षित —नवाब साहब गुस्से में आ गये। झुँझलाकर कहा, 'तुम खाँसो या खूँसो मैं सौ गज से कम नहीं कर सकता।' (दोनों खिल खिलाकर हँसते हैं।)

कारनीक—तुम्हारी इस कहानी ने हमें थकने से बचा लिया है। हममें नयी ताजगी और ताजी हिम्मत भर दी है। हम अवश्य किनारे पर पहुँचेंगे। (चिड़ियों की चहचहाने की आवाज दूर से आती है।)

दीक्षित —कुछ सुन रहे हो ?

कारनीक—नही तो।

दीक्षित —लगता है, जैसे समीप में ही चिड़ियाँ चहचहा रही हैं।

कारनीक —(कान लगाकर सुनता है।) अरे, यह तो शुभ चिह्न है। किनारा समीप है दीक्षित। (चौंककर) यह क्या है ? (लाइफ जैकेट टटोलता है।)

दीक्षित —क्या हुआ।

कारनीक —मेरा लाइफ जैकेट पुलपुला होता जा रहा है। जान पड़ता है हवा कहीं से निकल रही है।

दीक्षित —(लाइफ जैकेट टटोलता है।) मेरा भी पुलपुला होता जा रहा है। अब क्या होगा ?

कारनीक —यही तो मैं भी सोच रहा हूँ।

दीक्षित —हम अपने मुँह से हवा भर लें तो।

कारनीक—किन्तु हम वैसा नहीं कर सकते।

दीक्षित —क्यों ?

कारनीक—हमारे अन्दर अब इतनी शक्ति शेष नहीं रह गयी है। मैं सोचता हूँ हवा देने की कोशिश में हमारी बची-खुची हवा निकल गयी तो !

दीक्षित —तुम ठीक कहते हो। (मौन बहते जाते हैं।)

दीक्षित —(मौन भंग करता है।) तुम गा सकते हो।

कारनीक—गाने की बात इस स्थिति में तुम्हारे दिमाग में कहाँ से आयी।

दीक्षित —कहीं से भी आई हो। भले आदमी तुम गा सकते हो।

कारनीक—नहीं।

दीक्षित —लेकिन मैंने तुम्हें गाते सुना है ?

कारनीक—सुना होगा। बाथ रूम में। जब मैं शावर (Shower) के नीचे पानी का आनन्द लेता रहता हूँ तो अवश्य गुनगुनाता रहता हूँ।

दीक्षित —बहुत अच्छे ! तो समझो तुम इस समय अपने बाथ रूम में शावर के नीचे पानी का आनन्द ले रहे हो।

कारनीक—मान लेने से कोई बात थोड़े हो जाती है।

दीक्षित —कुछ भी गाओ। इस भयानक समुद्र में किसी भी समय हम सदा के लिये मौन हो सकते हैं। कारनीक इससे बचने के लिये तुम्हें गाना होगा।

कारनीक—तुम्हारी जिद है, तो यही सही। (गाता है।)

चलता चल, बढ़ता चल

चल मेरे साथी, चलता चल

सागर की लहरों पर अपने
गीत, जीत के लिखता चल। चल मेरे....

१

बोल रहे तारे अम्बर के
बोल रही लहरें सागर की
भगवान मदद उसकी करता है--
जो अपनी आप मदद करता है।
संकट में, रख धैर्य हृदय में
साहस कर बढ़ता चल। चल मेरे....

२

रुक जाना है मौत का आना
चलना ही मैं जीवन जाना
हारी बाजी, जीती है उसने
कोशिश कभी न छोड़ी जिसने
हिम्मत की पतवार थाम तू—
मौत से लड़ता चल। चल मेरे....

३

मन हारा वह हारा साथी
मन जीता वह जीता,
जब तक साँस बनी है तन में
तब तब आस लगी है मन में
आस डोर में बंधे जीव हैं—
बँधे हुए अम्बर भूतल। चल मेरे....

(दोनों मौन कुछ क्षण तक बहते जाते हैं। दूर से टार्च की रोशनी दिखाई पड़ती है ?)

दीक्षित —कारनीक, वह रोशनी देख रहे हो ?

कारनीक—देख रहा हूँ।

दीक्षित —लगता है कोई हमें ढूंढ़ रहा है।

कारनीक—हो सकता है। (दोनों अपना एक-एक हाथ उठाकर हिलाते हैं। रोशनी बुझ जाती है।)

(बादल गर्जता है। बिजली चमकती है। हवा जोरों से चलने लगती है।)

दीक्षित —अब हमारी मौत बहुत समीप है कारनीक। ये उठ रहे काले-काले बादल, चमकती बिजलियाँ हमारी मौत को बुला रही हैं और कह रही हैं "वे यहाँ हैं! यहाँ हैं!)

कारनीक—तुम ठीक कहते हो। इस भीषण तूफान में और अधिक देर तक जीवित रहना असम्भव है। (तूफान आता है। समुद्र में ढह उठने लगते हैं। दोनों ढहों में कभी ऊपर उठते और कभी ढहों के साथ नीचे गिरते दिखलायी पड़ते हैं। उसी बीच बिजली चमकती है और बिजली की रोशनी में द्वीप का तट दिखलायी पड़ता है।)

दीक्षित —(हर्ष के स्वर में) कारनीक, हम बच गये। किनारा बहुत नजदीक है। अभी-अभी बिजली की रोशनी में मुझे किनारा दिखलायी पड़ा था।

कारनीक—काश! तुम्हारी बात सत्य होती। (ठहरकर) ठंड के मारे बदन जमा जा रहा है।

दीक्षित —तो एक काम करें।

कारनीक—क्या ?

दीक्षित —हम एक दूसरे की कमर में हाथ डालकर अपने बदन को एक दूसरे से सटाये रहें। ऐसा करने से हमारे शरीर एक दूसरे से रगड़ खाते रहेंगे और हमारे शरीर में गर्मी बनी रहेगी। ठंड कम सता पायेगी।

कारनीक—तुम ठीक कहते हो। (दोनों एक दूसरे से सट जाते हैं और कमर में हाथ डालकर बहते हैं।)

[बादल का गर्जना और बिजली की चमक थम जाती है। हवा चलती रहती है। वर्षा होने लगती है। दोनों अपनी आँखें बन्द कर लेते हैं और मौन एक दूसरे से सटे हुए बहते जाते हैं। एक बार पुनः बादल गर्जता है। बिजली चमकती है। फिर एक साथ ही पानी का बरसना, बिजली का चमकना और बादल का गर्जना रुक जाता है। बादल छँट जाते हैं और आकाश साफ हो जाता है। चाँद निकल आता है। चाँदनी फैल जाती है। सफेद चाँदनी में द्वीप का किनारा दिखलायी पड़ता है।]

दीक्षित —(हर्ष के स्वर में) कारनीक! कारनीक!! वहाँ, दाहिनी ओर देखो तो क्या है?

कारनीक—(हर्ष के स्वर में) हमारी नयी दुनियाँ है।

दीक्षित —अंतिम बार अपनी बची-खुची शक्ति को समेट कर एक बार और जोर लगाओ। भगवान ने चाहा तो इस बार अवश्य विजयी होंगे।

कारनीक—ऐसा ही होगा दीक्षित। ऐसा ही होगा। किनारा आधे-मील से अधिक नहीं लगता है।

दीक्षित —भगवान का नाम लेकर बढ़ते चलो। (दोनों बढ़ते जाते हैं।)

[रंगमंच पर अँधेरा छा जाता है। एक क्षण बाद रात्रि के पिछले पहर का हल्का प्रकाश रंगमंच पर छा जाता है। दीक्षित और कारनीक किनारे पर पास-पास बैठे दिखलायी पड़ते हैं। चारों ओर गहन शांति है। कीड़े-मकोड़ों के बोलने की आवाज आ रही है। चिड़ियों की चहचहाट जब तब सुनाई पड़ती है।]

कारनीक—तो आज १२ अप्रैल है।

दीक्षित – नहीं कारनीक। आज हमारे दूसरे जन्म का पहला दिन है।

कारनीक –मैं भी घर लौटकर १२ अप्रैल को अपना जन्म दिन मनाने के लिए सोच रहा था।

दीक्षित —(चारों ओर देखता है।) इस द्वीप पर शायद कोई मनुष्य नहीं बसता है।

कारनीक—मुझे भी ऐसा ही लग रहा है।

दीक्षित —फिर इस हालत में हम कितने दिन तक जीवित रह सकेंगे ?

कारनीक—अनिश्चित समय तक। (ठहरकर) बचाने वाले ने हमारे चारों तरफ खाने-पीने का सामान जुटा रखा है।

दीक्षित —लेकिन मैं तो कुछ नहीं देख रहा हूँ।

कारनीक—नारियल के अनगिनत पेड़ और उसमें लटकते हुए फल तो तुम देख ही रहे हो। हमें इन फलों को खाकर और इन्हीं का पानी पीकर जीवित रहना होगा।

दीक्षित —यह भी खूब रही।

कारनीक—तुम्हारी घड़ी चल रही है ?

दीक्षित —हाँ अभी तक तो चल रही है।

कारनीक—फिर टाइम क्या हुआ है ?

दीक्षित —सबेरे के तीन बजकर तीस मिनट हुए हैं।

कारनीक—तो भोर हो रहा है।

[दोनों अपना-अपना लाइफ़ जैकेट उतारते हैं। कारनीक अपनी कमीज निकालकर निचोड़ता है, किन्तु एक बूँद भी पानी नहीं निकलता है।]

कारनीक—देख रहे हो, किस बुरी तरह से हाथ-पाँव शून्य हो गये हैं।

दीक्षित —छोड़ो इन बातों को। जान बची और लाखों पाये। (ठहरकर) यहीं लेटकर थोड़ा आराम कर लें तो कैसा रहे ?

कारनीक—किन्तु ठंड जो लग रही है।

दीक्षित —एक काम करो। मैं लेट जाता हूँ और तुम मेरी छाती पर अपना सिर रखकर लेट जाना। इस तरह हम दोनों को गर्मी मिलती रहेगी।

कारनीक—ठीक है। (दीक्षित लेट जाता है और कारनीक उसकी छाती पर अपना सिर रखकर लेट जाता है।)

पर्दा गिरता है।

और गुम्मद गिर गया

[सामाजिक नाटक]

पात्र

अमरीतवा	—एक शिक्षित हरिजन युवक ।
रमधुन	—अधेड़ उम्र का एक रूढ़िवादी ब्राह्मण और गाँव के मन्दिर का पुजारी ।
ठाकुर बटोरनसिंह	—गाँव के पुराने जमींदार । अधेड़ उम्र और ठाकुरी वेष-भूषा ।
सिकी भगत	—अधेड़ उम्र का एक ढोंगी भगत ।
झगरू, पेरू	—अधेड़ उम्र के सिकी का साथ देने वाले दो ग्रामीण ।
सुमन	—प्रगतिशील विचारों का एक शिक्षित युवक और गाँव की पाठशाला का अध्यापक ।
रूपा	—एक रूपवती हरिजन युवती ।

[भारतीय गाँव की पृष्ठभूमि में राधेश्याम का एक ग्रामीण तथा पुराना मंदिर। मंदिर के चारों ओर ओसारा है। सामने से मंदिर में प्रवेश करने के लिए सीढ़ियाँ बनी हैं। सीढ़ियों से ओसारे में चढ़ने पर सामने ही मंदिर का प्रमुख द्वार है, जिसके खुले रहने पर गर्भ-गृह में स्थापित राधेश्याम की मूर्त्तियाँ साफ-साफ दिखलायी पड़ती हैं। प्रमुख द्वार के सामने ओसारे में एक घंटा टंगा है। ओसारे से होकर बाँयीं ओर जाने पर पुजारी के रहने की एक कोठरी है। मंदिर के सामनेवाली जमीन परती है। परती जमीन में मन्दिर के सामने एक ऊँचा चबूतरा बना है, जिस पर छोटी-छोटी सात पीढ़ियाँ बनी हैं। पीढ़ियों में अट-पटे ढंग से सिन्दूर तथा अलता लगा हुआ है।]

पहला अंक

पहला दृश्य

[पृष्ठभूमि से]

श्याम गौर सुन्दर दोऊ भाई । सबरी परी चरण लपटाई ॥
प्रेम मगन मुख बचन न आवा । पुनि-पुनि पद सरोज सिर नावा ॥
सादर जल लै चरन पखारे । पुनि सुन्दर आसन बैठारे ।
कंद मूल फल सुरस अति, दिए राम कहुं आन ।
प्रेम सहित प्रभु खाए, बारम्बार बखानि ॥

[पर्दा उठता है और एक ओर से अमरीतवा स्तुति करता हुआ प्रवेश करता है। भक्तिपूर्वक हाथ जोड़े मन्दिर की सीढ़ियों के पास जाकर खड़ा होता है !]

पानि जोरि आगे भई ठाढ़ी । प्रभुहि विलोकि प्रीति अति बाढ़ी ॥
केहि विधि अस्तुति करौं तुम्हारी । अधम जाति मैं जड़मति भारी ॥

[सीढ़ियाँ चढ़ता हुआ ।]

अधम से अधम अधम अतिनारी । तिन्ह महँ मैं मति मंद गँवारी ॥

रामधुन—[हाथ में पूजन सामग्री लिए एक ओर से प्रवेश करता है। अमरीतवा को सीढ़ियाँ चढ़ता देखकर क्रोध पूर्वक] अमरीतवा ।

अमरीतवा—[उसके उठे हुए पैर एक व एक रुक जाते हैं। भयभीत सा धीरे-धीरे पीछे मुड़कर खड़ा हो जाता है। अपने को संयमित करता हुआ] हाँ पुजारी बाबा ।

रामधुन — [आगे बढ़ता हुआ] तुम्हारी यह हिम्मत ।

अमरीतवा—[स्तुति में कोई भूल हो गई है क्या ? मैं अनजान हूँ, माफ कर दो।

रामधुन — अछूत का बेटा चला है मन्दिर में भगवान की पूजा करने। नीचे उतर।

अमरीतवा—ऐसा क्या हो गया जो नीचे उतरने को कहते हो ?

रामधुन — मन्दिर अपवित्र हो जायेगा, इसीलिये।

अमरीतवा—मेरे प्रवेश करने से।

रामधुन — नहीं तो क्या ब्राह्मण के प्रवेश करने से।

अमरीतवा—लेकिन अब तो जहाँ-तहाँ अछूतों के लिए भी मन्दिर के द्वार खुलने लगे है।

रामधुन — फिर तो वहीं जा। तेरा बाप जब बचता था, और जब कभी इस रास्ते से गुजरता था, तो मन्दिर आने की बात कौन कहे, रास्ते से ही सीधे डंडे की भाँति जमीन पर लेट कर प्रणाम कर लिया करता था।

अमरीतवा—वह कल की बात थी बाबा।

रामधुन — और आज की बात क्या है ?

अमरीतवा—आज दुनिया बहुत आगे निकल गई है। यहाँ की सारी चीजें बहुत तेजी से बदल रही हैं। समय और परिस्थिति को देखते हुए, हम सबों को भी बदलना चाहिए। जब हम एक ही पानी पीते हैं, एक ही हवा का साँस लेते हैं, एक ही धरती पर रहते है, एक ही आसमान के नीचे जन्म लेते और मरते हैं। फिर हम उस एक ही पूजा एक साथ बैठ कर क्यों न करें ? मनुष्य-मनुष्य में इतना भेद-भाव अच्छा नहीं लगता बाबा।

रामधुन — हद हो गयी इस घोर कलियुग की। रमदास का बेटा पुस्तैनी ब्राह्मण के लाड़ले को धरम की बात बतलाने आया है। राम-राज्य से ही जो परम्परा चली आ रही है उसे ही हीन और निरर्थक बतलाता है। अछूतों को मन्दिर में बैठकर पूजा करने दिया जाय, भला यह किस धर्म की बात हुई।

अमरीतवा—मानव धर्म की।

रामधुन — और अभी जो धरम-करम चल रहा है, वह क्या जानवरों का है ?

अमरीतवा —गौर से देखो बाबा, तो वे जानवर भी हमसे अच्छे हैं। सारी भिन्नताओं के बावजूद भी वे एक साथ चरते और एक ही सरोवर का पानी एक साथ पीते हैं। कितने अच्छे है वे।

रामधुन — फिर तो उन्हीं की श्रेणी में जाओ। यहाँ एक साथ बैठकर तुझे मन्दिर में पूजा-पाठ नहीं करने दिया जायगा। मन्दिर, मन्दिर है। यदि अपवित्र हो गया तो ?

अमरीतवा —तुड़वा कर दूसरा बनवा लेना।

रामधुन — मुँह सम्भाल कर बातें कर। यह तुम्हारे रहने का बाड़ा नहीं, मन्दिर है मन्दिर।

अमरीतवा —मन्दिर है ? तब तो अपवित्र नहीं होना चाहिए।

रामधुन — क्या होना चाहिए और क्या नहीं ? यह निर्णय करना हम ब्राह्मणों का काम है। समाज ने यह काम मुझे सौंपा है, तुम्हें नहीं।

अमरीतवा—जब ऐसी बात है, तब तो तुम्हारे मन्दिर की एक-एक ईंट अपवित्र है। और जो चीज पहले से ही अपवित्र है, वह मेरे प्रवेश करने से अपवित्र नहीं हो सकती।

रामधुन —मैं ब्राह्मण हूँ। समाज का सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति हूँ। मन्दिर की एक-एक ईंट अपवित्र है, यह केवल तुम्हारे कहने से मान लूं।

अमरीतवा—रामधुन पंडित, अंधे को दिन के उजाले में भी लकड़ी का सहारा लेना पड़ता है।

रामधुन —तो मैं अंधा हूँ ?

अमरीतवा—कभी नहीं। आपको अंधा कहना, अंधों को आँख वाला कहना है।

रामधुन —अमरीतवा। यदि और कुछ कहा तो अनर्थ हो जायगा।

अमरीतवा—अब भी अनर्थ का अन्त नहीं हुआ रामधुन पंडित! सतयुग बीत गया। त्रेता बीत गया। द्वापर बीत गया और अब कलियुग बीत रहा है, फिर भी तुम्हारे अनर्थ का अन्त नहीं हुआ।

रामधुन —जब तक तुम्हारा अन्त नहीं हो जाता, मेरे अनर्थ का भी अन्त नहीं हो सकता! मैं पूछता हूँ, तुमने मन्दिर को अपवित्र क्यों कहा ?

अमरीतवा—यदि मैं अपवित्र हूँ, तो यह मन्दिर भी अपवित्र है।

रामधुन —कैसे ?

अमरीतवा—जब यह मन्दिर बन रहा होगा, तो किसी अछूत ने ही ईंट, चूने और गारे लाकर दिये होंगे। यह गुम्मद जो तुम देख रहे हो, कौन जाने किसी अछूत के ही अछूत हाथों का करिश्मा हो। और वहाँ, जो वह भगवान की मूर्ति देख रहे हो, हो सकता है, किसी अछूत ने ही उसे अछूत पत्थर से काटकर

बनाया हो। इतना ही नहीं, तुम्हारा वह भगवान भी किसी अछूत के ही कंधों का सहारा लेकर इस मन्दिर तक आया है।

रामधुन —तब भगवान की यह मूर्ति अप्राण थी। उसमें प्राण नहीं थे। छूत कैसे लगती ?

अमरीतवा—और अब।

रामधुन —वह, सब कुछ है। मूर्ति को त्रिवेणी के जल से स्नान कराया गया। वेद मंत्रों के ध्वनि के साथ मन्दिर में स्थापित किया गया। पवित्र मंत्रों से उसमें प्राण संचार किये गये। तब वह पत्थर की मूर्ति थी, और अब यह भगवान की मूर्ति है।

अमरीतवा—कहो तो मैं भी त्रिवेणी के जल में स्नान कर आऊँ।

रामधुन —अरे चल, चल। जिसे भगवान ने ही अछूत बनाकर पैदा किया, वह त्रिवेणी क्या ? सात समुद्रों के जल में भी स्नान करेगा तब भी पवित्र नहीं हो सकता। वह अछूत का अछूत ही रहेगा।

अमरीतवा—जब अछूत के हाथ की बनी वह मूर्ति त्रिवेणी के जल से पवित्र हो सकती है, वेद मंत्रों से उसमें प्राण संचार किये जा सकते हैं, फिर मैं तो स्वयं ईश्वर के हाथों गढ़ा गया हूँ मैं अछूत कैसे हो सकता हूँ।

रामधुन —मैं जो कहता हूँ।

अमरीतवा—बिल्कुल गलत कहते हो।

रामधुन —शास्त्र-पुराण भी यही कहते हैं।

अमरीतवा—उसका रचयिता भी तुम्हारा ही जैसा कोई अदूरदर्शी ब्राह्मण रहा होगा। और नहीं, तो तुमने उसके लिखे शास्त्र के नियमों के

गलत अर्थ लगाकर समाज को दिये होंगे और दे रहे हो। स्वार्थ अंधा होता है रामधनु पंडित ! और अंधे को दिखलायी नहीं पड़ता।

रामधनु —दिखलायी तो तुझे नहीं पड़ता, जो सामने खड़े पुस्तैनी ब्राह्मण को, भगवान की मूर्ति के सामने बेइज्जत कर रहा है। उसके पूर्वजों को गालियाँ दे रहा है।

अमरीतवा —तुम मुझे गलत समझ रहे हो पुजारी बाबा, प्राचीन काल के परम-पूज्य ऋषियों और मुनियों की आँखों से देखते रहने की अपेक्षा, हमें अपनी ही आँखों से देखना और अपनी समस्याओं का स्वयं हल निकालना चाहिये।

रामधुन —लेकिन कोई समस्या हो तब न।

अमरीतवा —अछूतों से घृणा करना, उनका स्पर्श न करना, उनका छुआ न खाना और मन्दिर में बैठ कर पूजा न नहीं करने देना, समस्या नहीं है ?

रामधुन —कोई समस्या नहीं है। जो चीज कभी नहीं हुई। वह कभी नहीं होगी।

अमरीतवा—तभी तो कहता हूँ तुम्हारे शास्त्र के नियम बहुत पीछे छूट गये है और समय बहुत आगे निकल गया है। संसार की हर चीज बदल रही है। किन्तु न तुम बदले और न तुम्हारे शास्त्र के नियम।

रामधुन —देख रहा हूँ आज चउए पर खड़े होकर बातें कर रहे हो। इस घोर कलियुग में जो न हो जाय, सब थोड़ा है। राम-राज्य में आज जैसी बातें की होती तो तुम्हारी जिह्वा काट ली गयी होती।

अमरीतवा—शास्त्रों में ऐसी भी कोई व्यवस्था है क्या ?

रामधुन —बृहस्पति स्मृति, अध्याय १२, श्लोक १३ में लिखा है, यदि शूद्र वेदोच्चारण करे या ब्राह्मण का अपमान करे, तो उसकी जीभ काट ली जाय। समझे।

अमरीतवा—फिर तो उसमें शूद्रों की व्याख्या भी की होगी।

रामधुन —शूद्र, शूद्र हैं। उसकी व्याख्या क्या हो सकती है ?

अमरीतवा—फिर भी।

रामधुन —जो समाज के सभी वर्गों की सेवा करे वह शूद्र हुआ।

अमरीतवा—तो कर्मों के ही आधार पर मनीषियों ने ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र, चार वर्ण बनाये थे।

रामधुन —ऐसा ही जान पड़ता है।

अमरीतवा—अब मान लो पुजारी बाबा कि एक ब्राह्मण के चार बेटे हुए। बड़े ने अध्ययन-अध्यापन का कार्य सँभाला तो वह ब्राह्मण कहलाया। दूसरे ने तलवार को अपनी जीविका का साधन बनाया तो वह क्षत्रिय कहलाया। तीसरे ने व्यापार आरम्भ किया तो वह वैश्य कहलाया। और यदि चौथे ने दैवयोग से इन तीनों की सेवा का कार्य सँभाला तो शूद्र कहलाया। क्या तुम इस शूद्र से घृणा करोगे ?

रामधुन —शास्त्र में जहाँ यह बात लिखी है, वहाँ यह भी लिखी है कि ब्रह्मा ने अपने मुख से ब्राह्मण की, भुजाओं से क्षत्रियों की, उदर से वैश्य की और जंघों से शूद्रों की रचना की।

अमरीतवा—बात एक ही है। दोनों रिश्तों से चारों भाई हुए।

रामधुन —राम ! राम ! राम ! शूद्रों को ब्राह्मणों का भाई बतला कर तुम हम ब्राह्मणों को अपमानित कर रहा है।

अमरीतवा—सच्ची बातें कड़वी होती हैं बाबा।

रामधुन—[दाँत पिसता हुआ] बाबा का बच्चा। जायगा या नहीं। कहीं बटोरन सरकार ने तुझे यहाँ देख लिया तो मुझे कहीं का नहीं रहने देगा।

अमरीतवा—समाज और संस्कृति के दुश्मनो जाता हूँ। [कहकर एक ओर चला जाता है।] [रामधुन पंडित दाँत पीसता उसे घूर-घूर कर देखता है। पुनः अपने अंगों पर कमण्डल का पानी छिड़कता है, और कुछ बड़बड़ाता पूजा करने चला जाता है, पूजा समाप्त कर आरती का थाल लिए रामधुन मन्दिर के बाहर आता है और सीढ़ियों से उतर कर पीढ़ियों को आरती दिखलाता है और अन्त में दिशाओं की आरती कर वह मन्दिर में लौटने लगता है। सामने से आती हुई रूपा पर उसकी नजर पड़ जाती है और एक टक सब कुछ भूल वह उसे देखता रहता है। वासना उसके मुँह पर बिखर जाती है।]

रामधुन —[अपनी भावनाओं को दबाता तथा मुस्कुराता हुआ] रूपा [घूरने लगता है।]

रूपा —[आश्चर्य तथा भय से] इस तरह क्यों घूर रहे हो ?

रामधुन—कुछ नहीं रूपा। देख रहा हूँ बीते कल की अपेक्षा आज कितना सुन्दर और सुघड़ दिन है। तुम जैसी खूबसूरत लड़की तो इस गाँव में कोई नहीं है।

रूपा —ऐसी बातें गाँव के पण्डित को शोभा नहीं देती।

रामधुन —और ऐसा रूप किसी हरिजन की लड़की को भी शोभा नहीं देता। तुम्हें तो कोई ब्राह्मणी या क्षत्राणी होना चाहिए था।

रूपा —अकेले में किसी जवान लड़की को छेड़ना धरम की बात नहीं है रामधुन पंडित।

रामधुन —धरम की बात तू क्या जाने। मेरे पास आकर देख, वहाँ राधेश्याम की जोड़ी कितनी अच्छी लग रही है।

रूपा —लगती होगी। किन्तु तुम्हीं तो कहा करते थे, हरिजनों को भगवान की मूर्ति का दर्शन नहीं करना चाहिये। क्योंकि हरिजनों को देखने से भगवान को छूत लग जाती है।

रामधुन —सो तो ठीक है। लेकिन तुम्हारे लिए मैं इस नियम को तोड़ देना चाहता हूँ। तुम जब चाहो, भगवान के दर्शन कर सकती हो।

रूपा —न बाबा ऐसी रियायत मैं नहीं चाहती। जैसी हूँ भली हूँ।

रामधुन —इतने सबेरे कहाँ जा रही है?

रूपा —खेत जा रही हूँ। बाबू को कलेवा देने।

रामधुन —(**आगे बढ़कर रूपा का हाथ पकड़ कर**) इतना तड़के भी कहीं काम होता है। इधर आ, [**मन्दिर की ओर खींचता हुआ**] भगवान का प्रसाद लेती जा।

रूपा —[**झटक कर हाथ छुड़ाती हुई**] यह क्या करते हो रामधुन पंडित?

[**हाथ छूट जाता है।**]

रामधुन —कितने मुलायम हाथ हैं।

रूपा —क्या कहा?

रामधुन —कुछ नहीं। यहाँ क्यों रुक गयी ? ऊपर चल। भगवान का दर्शन कर प्रसाद लेती जा। सबेरे-सबेरे भगवान का दर्शन बड़ा फलप्रद होता है। तुम्हारा आज का सारा दिन मंगलमय रहेगा।

रूपा —रहने दो रामधुन पंडित। जब कल तक नहीं गयी, तो आज भी नहीं जाऊँगी। खेत पर बाबू बाट जोह रहा होगा। जल्दी है। [कह कर जाने को मुड़ती है।]

रामधुन —[तेजी से बढ़कर रूपा का हाथ पकड़ता हुआ] कहाँ जा रही है ? ऊपर चलकर कुछ नहीं तो कम-से-कम प्रसाद तो लेती जा।

रूपा —[हाथ छुड़ा कर क्रोधपूर्वक रामधुन को देखती हुई] दिन दहाड़े इतनी हिम्मत। [कह कर जोर का एक चाँटा रामधुन के गाल पर मारती है और तेजी से भाग जाती है।]

रामधुन —[अपने गाल को सहलाता हुआ] रूप का इतना गर्व ? इतनी ऐंठ ? शायद यह रामधुन को नहीं जानती ? [जाती हुई रूपा को देखता रहता है।]

बटोरनसिंह —[एक ओर से प्रवेश करते हैं तथा रामधुन को इस प्रकार खड़ा देखकर] उधर क्या देख रहे हो रामधुन पंडित ?

रामधुन —कौन ? बटोरन सरकार ? आपने कुछ सुना ? [कह कर आरती का थाल आगे बढ़ा देता है।]

बटोरनसिंह —[आरती लेकर] नहीं तो।

रामधुन —गाँव में बड़ी चर्चा है।

बटोरनसिंह —किन्तु मैंने अब तक कुछ नहीं सुना।

रामधुन —वह जो मटरा की बेटी रूपा है न, उसके चाल-चलन कुछ अच्छे दिखलायी नहीं पड़ते। अपनी जाति की मर्यादा से बाहर जा रही है।

बटोरनसिंह —कैसे ?

रामधुन —यह न पूछो ठाकुर। तुम अपनी पकी मूँछों की कसम खा कर कहो, अपनी याद में गाँव की किसी लड़की को कभी घूँघट उघाड़ कर चलते देखा था।

बटोरनसिंह —नहीं तो !

रामधुन —लेकिन उस रूपा के रूप को देखो जो घूँघट के भीतर रहना ही नहीं जानता। लड़की भी ऐसी बेशरम है कि हर घसीटे फहड़ की तरह घूँघट उघाड़ कर चलती है किसी से लाज-शरम नहीं करती।

बटोरनसिंह —क्या करोगे ? समय ही कुछ ऐसा आ गया है।

रामधुन —इसीलिए तो धर्म का नाश हो रहा है। पाप और अत्याचार बढ़ रहे हैं। मुझे अच्छी तरह याद है, आपके पिताजी के समय में इस गाँव में धर्म का निवास था। नित्य गौ-ब्राह्मण की पूजा होती थी। लेकिन आज गौ-माता कसाई के हाथ निःसंकोच बेची जा रही है। ब्राह्मण दिन-दहाड़े अपमानित किये जा रहे हैं।

बटोरनसिंह —यह मैं क्या सुन रहा हूँ। ब्राह्मणों को अपमानित किया जा रहा है ? गौ-माता कसाई के हाथ बेची जा रही है ? मेरे जीते जी किसने ऐसा करने का साहस किया है। नाम बतलाओ रामधुन पंडित। खड़े-खड़े यदि मैंने उसकी जिह्वा नहीं निकलवा ली, तो मेरा नाम ठाकुर बटोरनसिंह नहीं।

रामधुन —[स्वर में करुणा उभरता हुआ] कहना तो नहीं चाहता सरकार, लेकिन कहना पड़ रहा है। आज सबेरे नदी से स्नान कर लौट रहा था। रास्ते में अचानक रूपा से भेंट हो गयी और उसने............

बटोरनसिंह —तुम्हें छू दिया।

रामधुन —नहीं सरकार, मेरे साथ दिल्लगी करने लगी।

बटोरनसिंह —[क्रोध में] रामधुन पंडित, रूपा तुम्हारा नहीं, ठाकुर बटोरन सिंह का अपमान कर रही थी। परम्परा ने ठाकुरों को ब्राह्मण के सम्मान का संरक्षक स्वीकार किया है। मैं खानदानी ठाकुर होकर ब्राह्मण का अपमान नहीं देख सकता। मैं अभी उसे सजा देता हूँ। [कह कर एक ओर चला जाता है।] [दूसरी ओर से मृदङ्ग बजाता हुआ झगरू और झाँझ बजाता हुआ पैरू आगे-आगे प्रवेश करता है। दोनों एक धुन में देवी मैया का गीत गा रहे हैं। उन दोनों के पीछे सिकी भगत आधी पीली धोती पहने और आधी ओढ़े नंगे बदन प्रवेश करता है। उसके दाहिने हाथ में नीम की पत्ती भरी कुछ टहनियाँ हैं और बाँये हाथ में मिट्टी की उलटी थाल जैसी एक बड़ी धूपदानी है।]

रामधुन —आ गये तुम लोग।

झगरू —देख लो रामधुन पण्डित, जैसा तुमने कहा था, मैंने वैसा ही इन्तजाम कर दिया है। कोई कमी नजर आवे तो कहो।

रामधुन —वह तो मैं देख रहा हूँ। लेकिन इस भगत को नहीं पहिचानता।

पैरू —इसे नहीं जानते ? यही तो सिकी भगत है।

रामधुन —यही सिकी है। नाम तो मैंने सुना था, किन्तु देखा अब तक नहीं था। कहो सिकी, भगतगिरी अच्छी तरह मालूम है न ?

सिकी —पाँय लागों रामधुन पण्डित। जिन्दगी भर यही तो करता आया हूँ। मैं कोई ऐसा-वैसा नहीं; खानदानी भगत हूँ; तुम्हारा आशीर्वाद है कि किसी भी माई के लाल ने अब तक उँगली नहीं उठायी है। आगे को देवी मैया जाने।

रामधुन —जमाना खराब है, इसीलिये पूछ लेता हूँ।

सिकी —सो तो ठीक कहते हो। लेकिन मेरी ओर से इतमिनान रखो। मैं अपनी जिम्मेदारी अच्छी तरह जानता हूँ [ठहरकर] मैं सब कुछ कर तो दूँगा, लेकिन मुझे दोगे क्या ?

रामधुन —वह तो मैंने झगरू से कह दिया था।

सिकी —लेकिन वह मुझे मंजूर नहीं। मैं तो आधे-आध लूँगा।

रामधुन —तुम्हारी बात मैं नहीं उठा सकता, लेकिन एक काम करना होगा।

पेरू —वह क्या ?

रामधुन —हर काम की सिद्धि के लिये ब्राह्मण जीमाने की बात अवश्य कहना। और पूछने पर केवल मेरा नाम बतलाना।

झगरू —एक ब्राह्मण जीमाने की बात रही, तब तो ठीक है। किन्तु यदि कहीं पाँच-दस ब्राह्मण जीमाने की बात हुई तो।

रामधुन —उससे लगातार पण्डित रामधुन को दस शाम या पाँच दिन जीमाने को कहना। इसमें दस ब्राह्मण का जीमनार भी हो जायगा और उसकी सिद्धि भी। समझे।

पेरू —समझ गया।

सिकी —और कुछ।

रामधुन —बच्चा माँगने वाली औरतों को जड़ी के लिये मेरे पास आने की सलाह देना।

झगरू —ऐसा ही करूँगा।

रामधुन —तो अब शुरू करो। मैं भी देख लूँ।

सिकी —कोई उजर नहीं रामधुन पण्डित। लो देख लो। [कह कर आधी पीली धोती को कमर में बाँध लेता है] रामधुन पण्डित इस ढकने में थोड़ी धूप और आग चाहिये।

रामधुन —बहुत अच्छा।

[रामधुन पंडित ढेर-सी धूप और आग लाकर धूपदानी में देता है और धूप की सुगन्धि फैलने लगती है। झगरू मृदंग पर थाप देता है और पैरू सिकी की कमर में घूँघर बाँध कर झाँझ बजाने लगता है। सिकी इशारे से पैरू से शराब की बोतल माँगता है। पैरू शराब की बोतल देता है। सिकी बोतल लेकर पीडी की ओर बढ़ता है। बोतल खोलकर कुछ शराब पीडी पर ढालता है और शेष स्वयं पी लेता है। झगरू और पैरू देवी मैया का गीत गाने लगते हैं। मृदंग और झाँझ जोर पकड़ते हैं। सिकी देवी मैया के आगमन की नकल करने लगता है। कुछ देर ऐसा ही चलता है] पर्दा गिरता है।

—××—

दूसरा दृश्य

[पर्दा उठता है और एक ओर से ठाकुर बटोरनसिंह और पंडित रामधुन आपस में बातें करते प्रवेश करते हैं]

बटोरनसिंह —कौन सी अनहोनी हो गई रामधुन पंडित ?

रामधुन —गजब के ठाकुर हो। गाँव में रहते हो। दबदबा इतना है कि बिना तुम्हारी इजाजत गाँव की एक पत्ती भी नहीं हिलती, और कहते हो खबर नहीं है।

बटोरनसिंह —ताब न दिलाओ पंडित। साफ-साफ कहो, कहाँ कौन सा बज्र गिरा है।

रामधुन —बज्र ही समझो। बैठो तो सारी बातें बतलाता हूँ। [**दोनों मन्दिर के ओसारे में पास-पास बैठ जाते हैं।**] जिच्छवा रमदास के बेटवा असरीतवा ने अपने टोले में एक पाठशाला खोली है। वहाँ गाँव के अछूतों के बच्चे पढ़ते हैं।

बटोरनसिंह —तब तो उसने बहुत अच्छा किया है।

रामधुन —तुम्हारी अक्ल भाँग खा गई है ठाकुर, इसीलिये तुम्हें हरा ही हरा दिखता है। यदि सचमुच वे अछूत पढ़ गये तो न तुम ठाकुर रहोगे और न मैं ब्राह्मण।

बटोरनसिंह —समझता तो सब कुछ हूँ, किन्तु जमाने की हवा साथ नहीं देती। कहा है—जैसी बहे बयार पीठ तब तैसी दीजै।

रामधुन —और गौतम धर्म सूत्र, अध्याय २० सूत्र चार से छः तक में गौतम मुनि ने कहा है—"यदि शूद्र वेद को जान-बूझ कर

सुने, तो उसके कान में गला हुआ शीशा या लोहा डाल दें यदि वह वेदोच्चारण करे, तो उसकी जीभ काट ली जाय। और यदि वह वेदमंत्र को याद रखे, तो उसके दो टुकड़े कर दिये जायँ समझें।"

बटोरनसिंह —लेकिन अभी शूद्र न तो वेदोच्चारण कर रहा है, न सुन रहा है और न याद कर रहा है।

रामधुन —ठाकुर। तुम आज की सोचते हो और मैं कल की सोचता हूँ। जब वे पढ़-लिख लेंगे तब क्या वे वेद नहीं पढ़ सकेंगे? उसका उच्चारण नहीं कर सकेंगे? उसे सुन और समझ नहीं सकेंगे।

बटोरनसिंह —इससे क्या हुआ? दिल्ली अभी बहुत दूर है।

रामधुन —लेकिन जब उसने दिल्ली की ओर डेग बढ़ा दिये हैं, तो दिल्ली वह पहुँचेगा ही। देर या सबेरे। आज या कल।

बटोरन . . ो हो सकता है।

रामधुन —धर्म विरुद्ध बातें अच्छी नहीं लगती ठाकुर। ब्राह्मण का कर्तव्य है, वह शास्त्र के विरुद्ध जहाँ कहीं भी कोई कुछ करता हो—उसे रोके। और क्षत्रिय उस ब्राह्मण को उस काम में मदद करे।

बटोरनसिंह —इसमें मैंने नाहीं कब की है। तुम्हारी मदद करने को मैं बराबर तैयार रहता हूँ।

रामधुन —तुम्हारी अटपटी बातें सुनकर मुझे भय होने लगा था ठाकुर। लेकिन अब मुझे संतोष है कि इस हालत में भी तुम्हें अपने कर्तव्य का ध्यान तो है।

बटोरनसिंह —मुझे एक शंका हो रही है रामधुन पंडित।

रामधुन —कैसी शंका ?

बटोरनसिंह —अमरीतवा में इतनी हिम्मत नहीं, कि वह मेरी आँख के नीचे इस गाँव में पाठशाला खोल दे। इसमें उस मास्टर का हाथ अवश्य लगता है। भला सा नाम है उसका। [**सोचने लगता है।**]

रामधुन —तुम्हारा अनुमान बिल्कुल सही है। सुना है वह ब्राह्मण है। फिर भी अछूतों का छुआ खाता है। उन लोगों के साथ उठता-बैठता है।

बटोरनसिंह —यह तो और भी बुरी बात है। जब ब्राह्मण ही ब्राह्मण की जड़ खोदने पर अड़ा हो, फिर तो उसे भगवान बचाये। वह देखो, जिसकी चर्चा कर रहे हो, वह इधर ही आ रहा है।

रामधुन —आइये मास्टरजी, आइये। आपकी बड़ी लम्बी उमर है।

सुमन —[**दोनों को नमस्ते करता हुआ**] वह कैसे।

बटोरनसिंह —अभी-अभी आपकी ही चर्चा हो रही थी। आपका ना.........म...............

सुमन —जी मुझे लोग सुमन कहते हैं।

रामधुन —आप ब्राह्मण हैं ?

सुमन —क्षमा करेंगे। नहीं मैं किसी से उसकी जाति पूछता हूँ और नहीं किसी को अपनी जाति बतलाता हूँ।

बटोरनसिंह —क्यों ?

सुमन —मेरी समझ से जाति पूछना और बतलाना पाप है।

रामधुन —समय ही ऐसा आ गया है मास्टरजी। सनातन से जो पाप नहीं समझा गया, अब वही पाप समझा जाने लगा है खैर जाने दीजिये। पता लगाने वाले लगा ही लेंगे।

सुमन —जाति का पता लगाने वाले जितना समय किसी की जाति ढूँढने में लगाते हैं, यदि उतना ही समय अपने किसी सार्थक काम में खर्च करें, तो देश, समाज और उनके लिए भी अधिक हितकर हो।

बटोरनसिंह —बात तो आप यथार्थ कहते हैं, लेकिन इतना सोचता कौन है?

सुमन —बटोरन बाबू, देश का धर्म हम से जाति-पाँति के कठोर बन्धनों को ढीला करने को कहता है। तीक्ष्ण जाति भेद-भाव की कटुता को राष्ट्रीय सहानुभूति से दबा देने को कहता है।

रामधुन —और यही सोचकर आप अछूतों के साथ रहते हैं, और उनका छुआ खाते हैं।

सुमन —तो क्या बुरा करता हूँ।

रामधुन —अपना नहीं, कम से कम दूसरों का तो अवश्य कर रहे हैं।

सुमन —वह कैसे।

बटोरनसिंह —इस गाँव की परम्परा में ठाकुरों और ब्राह्मणों ने बराबर से अछूतों से घृणा की है। उन्हें हम अपने से नीच समझते हैं। आप उनके साथ रहते हैं, उनका छुआ खाते हैं, इससे हमारी प्रतिष्ठा में धक्का लगता है। अब तक वे अछूत जो हमको ऊँच समझते आ रहे थे, अब हमको अपने बराबर समझेंगे। [ठहर कर] और अछूतों के साथ रहने और उनका छुआ खाने से आपकी जाति भी तो चली जायगी।

सुमन —इसकी चिन्ता आप न करें ठाकुर साहब! मेरी जाति कोई कच्ची मिट्टी का घड़ा तो है नहीं, जो छूआ-छूत के एक मामूली ठिकरे से फूट जाय।

रामधुन —तो हम लोग कच्चे मिट्टी के घड़े हैं, जो किसी समय भी फूट सकते हैं।

सुमन —यह तो आप स्वयं सोचकर देख लें। मैं तो केवल इतना ही कहूँगा कि अपनी नजरों से गिरा हुआ हिन्दू जब दूसरों की नजरों में ऊपर उठना चाहता है, तो वह छुआ-छूत को और भी बढ़ा देता है।

रामधुन —आपको पता है, आप क्या कर रहे हैं?

सुमन —क्या कर रहा हूँ?

रामधुन —असंवृत नामक नरक में जाने का मार्ग तैयार कर रहे हैं।

सुमन —वह कैसे?

रामधुन —"मनुस्मृति, अध्याय चार श्लोक अठहत्तर से इक्यासी तक में लिखा है" शूद्र को कोई सलाह न दे, न हवि का घी दे, और न धर्म बताये। यदि कोई शूद्र को धर्म बताता है, तो वह उनके साथ असंवृत नामक नरक में गिरता है। समझे मास्टर जी।

बटोरनसिंह —यह तो बड़ी भयानक बात है। मास्टर जी, आप पढ़े-लिखे आदमी हैं। जान-बूझकर अपना अगला जन्म क्यों खराब कर रहे हैं।

सुमन —बटोरन बाबू, इसकी कौन गारंटी है, कि आप दोनों को मरने पर स्वर्ग मिलेगा।

रामधुन —शास्त्र के अनुसार आचरण करने पर स्वर्ग अवश्य मिलेगा।

सुमन —लेकिन स्वर्ग तो देवताओं ने अपने लिये आपके शास्त्र के नियम बनने के बहुत पहले ही रिजर्व कर लिया था। फिर मनुष्य उसमें कैसे रह सकता है?

रामधुन —आप हमारे शास्त्रों की हँसी उड़ा रहे हैं।

सुमन —शास्त्रों के सूत्रों का अर्थ लगाकर आप स्वयं अपने शास्त्रों की आप हँसी उड़ा रहे हैं। समयानुकूल परिवर्तन से घृणा कर, पुरानी रीतियों तथा वंश-परम्परा पर अधिक जोर देकर आप लोग अपने को मनुष्यता के आसान से नीचे गिरा रहे हैं।

बटोरनसिंह —और आप अछूतों को गले गला, मनुष्यता के आसन से ऊपर उठ रहे हैं।

सुमन —यदि ऊपर नहीं उठ रहा हूँ, तो मनुष्यता के आसन से नीचे भी नहीं गिर रहा हूँ। मुझे तो असंवृत नामक नरक मिलेगा, किन्तु आपको तो वह भी नहीं मिलेगा, क्योंकि आप मनुष्य होकर मनुष्य से घृणा करते हैं।

रामधुन —क्या बक रहे हो?

सुमन —सच्ची बात कह रहा हूँ। आज जब चारों तरफ आगे बढ़ने की, ऊपर उठने की धूम मची हुई है, भारतवर्ष के स्वामी और पंडित अपनी जाति की तमोगुणी निंद्रा के बनाये रखने के लिये लोरियाँ गा रहे हैं; लोरियाँ।

बटोरनसिंह —बकवास बन्द करो।

सुमन —भारत के भक्तों! तुम उस मनमोहन ग्वाले के प्रेम-पात्र तभी बन सकते हो, जब तुम हार्दिक प्रेम के साथ चाण्डाल और चोर में, पापी और अपरिचित में, सबमें दिव्य प्रेम से उसके दर्शन करोगे। केवल पाषाण-मूर्तियों में उसे परिमित करने से काम नहीं चलेगा।

रामधुन —मुझे उपदेश सुनना नहीं, देना आता है। यदि इस गाँव में रहना है, तो..........

बटोरनसिंह —हमारी तरह रहो।

सुमन —नहीं तो।

बटोरनसिंह —गाँव छोड़ देना होगा।

सुमन —यदि नहीं छोड़ा तो..........

बटोरनसिंह —हाथ पकड़कर बाहर कर दिया जायगा।

सुमन —तब देखा जायगा। फिलहाल यदि आप इस नये प्रकाश को, जो आपही के देश की प्राचीन रोशनी है, सहर्ष आत्मसात करने को तैयार नहीं हैं तो कृपया इस दुनिया को खाली कर दें। [उठकर चल देता है। दोनों उसे घूरते रहते हैं।]

बटोरनसिंह —क्या शान से उठकर चला गया।

रामधुन —[दाँत पीसता हुआ] मन करता है, इस ब्राह्मण के लाड़ले को मसल कर रख दूँ। मेरी जमी-जमाई धाक को एक फूँक से उड़ा देना चाहता है। आज लोहा लोहे को ही काँटने चला है।

बटोरनसिंह —लोहा तो लोहे से ही काटता है रामधुन पण्डित।

रामधुन —मैं भी यही सोच रहा हूँ। कुछ दिन और ठहर कर देख लेने दो, ऊँट किस करवट बैठता है। यदि यह सुमन का बच्चा समय के पहले नहीं सँभला, तो वह पाठ पढ़ाऊँगा कि छठी का दूध याद आ जायगा। ब्राह्मण के उदर पर लात मारने चला है।

बटोरनसिंह —और मेरी छाती पर, रामधुन पण्डित।

रामधुन —तब तो तुम्हें मेरा साथ देना चाहिये।

बटोरनसिंह —मैं तुमसे अलग कब हूँ।

रामधुन —वही कहे देता हूँ। जब तक ब्राह्मण की बुद्धि और क्षत्रिय की भुजा एक साथ न होगी, यह सुमन बराबर हम दोनों की अवहेलना करता रहेगा।

बटोरनसिंह —[उठता हुआ] तो अभी मैं जाता हूँ समय आने पर मुझे पुकार लेना। मैं तैयार मिलूँगा। [चला जाता है।]

रामधुन —ऐसा ही करूँगा। [कुछ सोचने लगता है।]

पर्दा गिरता है

तीसरा दृश्य

[पर्दा उठता है और सिकी क्रोध में काँपता एक ओर से प्रवेश करता है।]

सिकी —जिस पत्तल में खाते हो, उसी में छेद भी करते हो रामधुन पण्डित ।

रामधुन —[**अपने रहने के कमरे से निकलकर मन्दिर के ओसारे में खड़ा होता हुआ**] क्या हुआ सिकी जजमान ?

सिकी —सब कुछ लूटकर अब इतने भोले बन रहे हो, जैसे कुछ जानते ही नहीं ।

रामधुन —कुछ कहो तो समझूँ भी । मैंने कौन-सा ऐसा काम किया जिससे तुम इतने नाराज हो ।

सिकी —[**सिर पकड़ कर ओसारे में बैठता हुआ**] अब, और करने को बाकी ही क्या है, जो पूछ रहे हो ? तुम्हारे कहने पर कुआँ मैंने दूसरों के लिये खोदा था, लेकिन क्या जानता था, कि पहले मुझे ही गिरना होगा ।

रामधुन —कुआँ और गिरना ? मैं कुछ समझ नहीं रहा हूँ । बात खोलकर कहो सिकी भगत ।

सिकी —दूसरे के घर की बात होती, तो खोल कर क्या, गला फाड़-फाड़ कर कहता । अपने घर की बात है, इसीलिए सिर झुक गया है पण्डित ।

रामधुन —आखिर कौन-सी ऐसी अनहोनी हो गयी, जिसके लिए तुम इतने परेशान हो । मेरी मदद चाहते हो, तो मैं अब भी तैयार हूँ ।

सिकी —तुम्हारी मदद से मैं भर पाया। अब और नहीं चाहिए। [**ठहरकर**] एक बात मानोगे रामधुन पण्डित।

रामधुन —[**पास बैठता हुआ**] कौन-सी बात ?

सिकी —जड़ी देकर सन्तान देने का ढोंग बन्द कर दो।

रामधुन —क्या कहते हो सिकी जजमान ?

सिकी —ठीक ही तो कहता हूँ। तुम्हारे विषय में यदि कोई दूसरा आकर यही बातें कहता तो मैं स्वयं विश्वास नहीं करता। किन्तु जो कुछ तुमने मेरे साथ किया है, वह मैं तुमसे उम्मीद नहीं करता था। तुम इतने नीचे गिर गये कि अपना पराया भी भूल गये।

रामधुन —[**संकोच पूर्वक**] क्या जड़ी के लिए तुम्हारे घर के लोग भी आये थे।

सिकी —परसों-तरसों मेरी घरवाली अपनी पतोहू को लेकर तुम्हारे पास आयी थी।

रामधुन —तो क्या मैंने उसे जड़ी नहीं दी ?

सिकी —तुमने मेरी घरवाली को ओड़हूल का फूल लाने भेज दिया। मेरी घरवाली तुम्हारी बातों में आकर चार घण्टे तक ओड़हूल का फूल ढूँढ़ती रही, और मेरी बहू चार घण्टे तक अकेली यहीं तुम्हारे पास बैठी रही।

रामधुन —इसी से मेरे ऊपर शक हो रहा है ? किन्तु विश्वास रखो, मैंने वैसा कुछ नहीं किया।

सिकी —इतने भोले न बनो रामधुन पंडित। मेरे पास भी थोड़ी बहुत सोचने-समझने की बुद्धि है। तुम पण्डितगिरी करते हो, तो मैं भगतगिरी करता हूँ। तुम्हारे ईमान पर मेरा विश्वास नहीं है।

रामधुन —तुम मुझे नाहक बदनाम कर रहे हो ।

सिकी —तुम्हारी इस गलथेथरी से मुझे गुस्सा आ रहा है। भगवान के लिए चुप रहो ।

रामधुन —तुम्हें कैसे समझाऊँ सिकी जजमान, कि मैंने कुछ नहीं किया। फिर भी यदि तुम्हें मुझ पर विश्वास नहीं है तो मुझे क्षमा कर दो ।

सिकी —और कर ही क्या सकता हूँ रामधुन पण्डित ? घर की इज्जत का सवाल है, बिरादरी वालों में बदनामी का डर, है इसीलिए सब कुछ सोचकर भी कुछ नहीं कर सकता ।

रामधुन —मुझे भी इसका अफसोस है सिकी जजमान ।

सिकी —आज से जड़ी देना बन्द कर दो ।

रामधुन —कहते हो तो बन्द कर दूँगा । किन्तु·······

सिकी —[**बीच में ही**] किन्तु-इन्तु मैं नहीं जानता ।

झगरू —[**हाथ जोड़ एक ओर से प्रवेश करता है । रामधुन के सामने खड़ा होकर गिड़गिड़ाता हुआ**] अब बस करो रामधुन पंडित, बस करो ।

सिकी —[**रामधुन पण्डित को मौन देखकर**] बोलते क्यों नहीं । तुम्हीं से कह रहा हूँ ।

रामधुन —सुन तो रहा हूँ ।

झगरू —फिर तो दया करो । नहीं तो मैं मर जाऊँगा ।

रामधुन —वस ! रामधुन पण्डित को पाँच शाम जिवनार कराने में ही तुम्हारा भुर्ता निकल गया ।

सिकी —क्या बात है झगरू ?

झगरू —भला पूछते हो भगत जी। पण्डित जी की बात में आकर, लुट गया। तबाह हो गया।

सिकी —आखिर हुआ क्या ?

झगरू —एक ब्राह्मण के लिए रोज-रोज जिवनार के लिए इन्तजाम करने से अच्छा है, कि दस ब्राह्मणों को एक दिन जिमा दिया जाय। है कि नहीं, तुम्हीं बतलाओ।

सिकी —बात तो ठीक कहता है।

रामधुन —मुझ जैसे एक को ही खिलाने में तुम्हें इतना तरद्दुत करना पड़ रहा है, कि मरे जा रहे हो।

झगरू —तुम जैसे एक को खिलाना कोई साधारण बात नहीं है रामधुन पंडित। सच कहता हूँ, डकार कर खा लेने के बाद पीठ पर दछिना बाँध कर चलते तुम्हें देखता हूँ, तो कलेजा फट जाता है। कभी-कभी सोचता हूँ, काश ! मैं भी तुम्हारी ही तरह एक ब्राह्मण होता। दूसरों के घर मालपुए साफ करता और चलते समय घरवाली के लिए भी पीठ पर बाँध लेता। कभी सोचता हूँ, समाज का सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति और.....................

रामधुन —[बीच में ही] बस ! बस !! रहने भी दे। अपने घर की चार पूरियों से मेरा ब्राह्मणत्व तौलने आया है। जानता नहीं, दक्षिणा लेने की प्रथा कितनी सनातन है। मैं इसे नहीं तोड़ सकता।

सिकी —किन्तु इसके घर खाना तो छोड़ सकते हो।

रामधुन —तो पाँच शाम खिलाकर ही उद्धार चाहता है।

झगरू —तुम्हारी बात बहुत महँगी पड़ रही है रामधुन पण्डित। उस दिन की तुम्हारी चाल आज समझ में आ रही है। तुम इतने स्वार्थी हो कि अपनी जाति-बिरादरी वालों का भी ख्याल नहीं किया।

रामधुन —नहीं खिलाना है तो चुप रह। मेरे सामने उपदेश मत झाड़। गाँव का पण्डित मैं हूँ। उपदेश देना मेरा काम है, तुम्हारा नहीं। समझे!

झगरू —समझ तो सब रहा हूँ रामधुन पण्डित। लेकिन रूढ़ियों ने मुझे इतना कुचल दिया है कि कुछ कर नहीं पा रहा हूँ।

रामधुन —जब सामर्थ्य नहीं है, फिर बात की बाँह क्यों चढ़ाता है?

पृष्ठभूमि से—राम नाम सत्य है। [**तीनों आश्चर्य से ध्वनि आ रही दिशा की ओर देखने लगते हैं।**] राम नाम सत्य है।

[**तीनों आश्चर्य से एक दूसरे को देखने लगते हैं।**]

पैरू —[**हड़बड़ा कर प्रवेश करता है, घबड़ाहट के स्वर में**] रामधुन पण्डित।

रामधुन —क्या बात है पैरू? इतना डरा हुआ क्यों है? [**पैरू को चुप तथा भयभीत देखकर**] यह लाश किसकी जा रही है?

पैरू —[**भयभीत स्वर में**] मंगरूआ दुसाध की है।

सिकी —[**आश्चर्य से**] मंगरूआ की।

झगरू —कल तो मैंने उसे अच्छा चंगा भला देखा था। आज अचानक मर कैसे गया?

पैरू —रात को उसको अचानक हैजा हो गया था, और आज सुबह होते-होते मर गया।

रामधुन —हैजा ! [**एक भयानक हँसी उसके मुँह पर फैल जाती है।**]

पैरू —गाँव में बहुत लोगों को हो गया है। हरिजनों की बस्ती में तो घरा-घरी हो गया है।

रामधुन —तभी तो, कल शाम को सूरज डूबने के पहले गीदड़ रो रहा था। जानते हो, इस तरह गीदड़ का रोना बड़ा अपशकुन होता है। मुझे तो ऐसा लगता है, इस बार गाँव में बहुत बड़ी विपत्ति आयेगी।

पैरू —डाक्टर आ जाने पर सब ठीक हो जायेगा रामधुन पण्डित।

सिकी —कोई लाने गया है।

पैरू —अमरीतवा शहर गया है। डाक्टर और दवा लाने।

रामधुन —इस विपत्ति में सुमन मास्टर क्या कर रहा है।

झगरू —वह तो टरेनिंग कर रहा है।

रामधुन —[**खुश होता हुआ**] तो वह यहाँ नहीं है।

सिकी —वह रहता तो डाक्टर और दवायें अब तक आ गयी होती।

रामधुन —इस अगलगी में डाक्टर आकर क्या करेगा ?

झगरू —यह भी पूछने की बात है रामधुन पण्डित। डाक्टर के आ जाने से लोगों में धीरज बँध जाती। बीमारी और न फैले इसका उपाय किया जाता।

रामधुन —तुमलोग इसे बीमारी मानते हो।

पैरू —नहीं तो और क्या है ?

रामधुन —ऐसी भूल में न रहना बच्चू, नहीं तो सर्वनाश हो जायगा। संत तुलसीदास जी ने रामायण जी में कहा है—

पुण्य एक जग महुं नहीं दूजा, मन क्रम वचन विप्र पद पूजा।
सानुकल तेहि पर मुनि देवा, जो तजु कपट करइ द्विज सेवा॥

अर्थात् भगवान्, देवता तथा देवी उसी पर प्रसन्न रहते हैं, जो छल-कपट तज कर ब्राह्मण की सेवा करता है। समझे।

सिकी —सो तो गाँव वाले बराबर से ही करते आ रहे हैं। ब्राह्मण धरती का देवता है, यह तो हम सभी मानते हैं। तुम्हीं बतलाओ, गाँव वालों की तुम्हारे प्रति कितनी श्रद्धा है। देवता तुल्य तुम्हारी पूजा करते हैं।

झगरू —इस घर आयी विपत्ति को भगाने के लिए तो कुछ उपाय करना ही पड़ेगा।

रामधुन —वह तो मैंने सोच लिया है। विप्र जेवाँइ देहि नित दाना। अर्थात् ब्राह्मणों के जेवनार कराओ। उन्हें दान दो।

पैंरू —गाँव में आग लगी है और तुम्हें हाथ सेंकने की सूझ रही है।

रामधुन —इसमें हाथ सेंकने की कौन सी बात है? नीति की बात कहता हूँ। भगवान् राम की मंगल कामना के लिए महाराज दशरथ 'विप्र साधु सुर पूजत राजा, करत राम हित मंगल काजा' और महारानी कौशिल्या 'आनन्द मगन राम महतारी, दिए दान बहु विप्र हँकारी।' अब तुम्हीं कहो जब भगवान् राम की मंगल कामना के लिए महाराज दशरथ और महारानी कौशिल्या ब्राह्मणों को पूज सकती हैं, उन्हें जेवनार करा सकती हैं, तो फिर गाँव की मंगल कामना के लिए ब्राह्मण जेवनार और पूजा की बात कहता हूँ, तो क्या बुरा कहता हूँ?

पैंरू —यह कलियुग है रामधुन पण्डित। और इस कलियुग में रोग ब्राह्मणों के आशीर्वाद से नहीं भागते, अच्छे डाक्टर और अच्छी दवा से भागते हैं।

रामधुन —इसीलिए तोकह ता हूँ, इस मौके पर गाँव को डाक्टर और दवाओं से दूर रखो। इसी में हमारा तुम्हारा भला है।

झगरू —क्या मतलब ?

रामधुन —यही, कि मौके का चूका मनुष्य और डाल का चूका बन्दर बराबर पछताते हैं। क्या समझे !

सिकी —बात तो तुमने बहुत दूर की और मौके की कही है, किन्तु इस जलती आग में कुछ करने की हिम्मत नहीं हो रही है।

रामधुन —लेकिन बिना हिम्मत किये, कुछ हाथ भी नहीं लगेगा। गाँव वाले अभी विपत्ति में हैं। उन्हें मृत्यु का भय लगा हुआ है। वे अन्दर से डरे हुए हैं। ऐसी दशा में वे सब कुछ करने को तैयार हो जायेंगे, जो तुम कहोगे। मैं कहूँगा।

पैरू —वह कैसे ?

रामधुन —क्योंकि मैं इस गाँव का पण्डित हूँ और सिकी इस इलाके का एक मात्र भगत है। मैं भगवान का भगत हूँ, तो सिकी देवी मैया का भगत है]

पैरू —[**बात समझ कर खुश होता हुआ**] ऐसा मौका बार-बार नहीं आता। कहो तो झाँझ मृदंग ले आऊँ।

सिकी —केवल झाँझ और मृदंग से काम नहीं चलेगा। कुछ नये बहाने भी गढ़ने होंगे।

रामधुन —मैंने वह भी सोच लिया।

झगरू —क्या सोच लिया है ?

रामधुन —सिकी भगत हरिजनों की बस्ती में जाकर कहे, रात को देवी मैया ने मुझे स्वप्न दिया था और कहा ? सिकी गाँव वालों को डाक्टर बुलाने और दवा खाने से मना कर दो। उन्हें केवल मेरी पूजा करने को कहो। सब ठीक हो जायेगा। तुम दोनों इसकी हाँ में हाँ मिलाना।

झगरू —लेकिन ठाकुरों को क्या कहकर समझाओगे।

रामधुन —यह मेरे ऊपर छोड़ दो। मैं उनसे कहूँगा ? भगवान् राधेश्याम ने रात को स्वप्न में मुझसे कहा 'रामधुन, देवी मैया की आराधना कर। सब ठीक हो जायेगा।

पैरू —तब तो समझो अपनी पांचों घी में हैं।

झगरू —शुभ काम में देरी नहीं करनी चाहिए। **[उठता हुआ]** उठो भगतजी। **[दोनों एक ओर जाने लगते हैं]**।

रामधुन —सावधानी से बातें करना मैं। ठाकुरों की बस्ती में जा रहा हूँ। भगवान् राधे कृष्ण ने चाहा तो लड्डू अवश्य फूटेंगे।

सिकी —ध्यान में रखूँगा रामधुन पंडित **[तीनों एक ओर से और दूसरी ओर से रामधुन पंडित जाता है।]**

चौथा दृश्य

रूपा —[घबड़ाई, हाँफती एक ओर से तेजी से प्रवेश करती है]

रामधुन पंडित, रामधुन पंडित । [और उसके पैर सीढ़ियाँ चढ़ते-चढ़ते रुक जाते हैं और वह वहीं सीढ़ियों के नीचे मूर्तिवत् खड़ी हो जाती है ।]

रामधुन — [अपनी कोठरी से निकलता हुआ] कौन है ? [रूपा को खड़ी देखकर] रूपा ?

रूपा —उसे बचा लो रामधुन पंडित ।

रामधुन— कौन है वह ?

रूपा— मेरा बापू घर पर बीमार है। रात से ही कै-दस्त हो रहे हैं। बुरी दशा है। छटपटा कर दम तोड़ रहा है ।

रामधुन —तो मैं क्या करूं ।

रूपा —ऐसा न कहो रामधुन पंडित । इस इलाके में तुम्हीं एक आदमी हो जो पुजारी भी हो, वैद्य भी हो। हर बात में लोग तुम्हारी सलाह लेते हैं। तुमसे ही पूछ कर रोगी को पथ्य दिया जाता है। मैं अच्छी तरह जानती हूँ, पिछली मरतबा तुम यदि जोग-टोग न किये होते तो सारा गाँव उजड़ जाता । एक बार चल कर देख लो रामधुन पंडित ।

रामधुन— क्या कह रही हो ? मैं चल कर देख लूँ ?

रूपा — मुझ पर दया करो, नहीं तो मैं लुट जाऊँगी। मेरी दुनियाँ बर्बाद हो जायगी। बापू के सिवा मेरा कोई नहीं ।

रामधुन —तू तो जानती है, मैं अछूतों के घर नहीं जाता। उन्हें छूना मैं पाप समझता हूँ। मेरे पास क्यों आयी है ?

रूपा — फिर किसके पास जाऊँ ? एकबार चलकर देख लो, फिर कभी नहीं जाना। मैं फिर तुम्हें बुलाने न आऊँगी।

रामधुन —[**ललचायी आँखों से रूपा को घूरता हुआ उसकी ओर बढ़ता है**] मैं तो नहीं जा सकता। तू भगवान् राधेकृष्ण का प्रसाद लेती जा। उसे खिला देना ठीक हो जायेगा। [कहकर मन्दिर में घुस जाता है। **झूठी मुट्ठी बाँधे वह बाहर आता है और रूपा की ओर मुट्ठी बंधा हाथ बढ़ाता हुआ**] यह लो। [**और झपट कर रूपा का हाथ पकड़ लेता है।**]

रूपा — [**भयभीत नजरों से चारों ओर देखने लगती हैं**] यह क्या कर रहे हो ? मेरा हाथ छोड़ दो। [···**हाथ छुड़ाने लगती है।**]

रामधुन — घबराओ नहीं। इधर-उधर कोई नही है। मेरी कोठरी में चलो।

रूपा — रामधुन पंडित। यह क्या ? मुझे छोड़ दो। इस तरह मेरी बाँह न पकड़ो नहीं तो मेरा बापू एक घूँट पानी के बिना छटपटा कर मर जायगा।

रामधनु — [**रूपा को अ पनी ओर खीचता हुआ**] मरने वाले को कोई रोक नहीं सकता रूपा।

रूपा — [**इतना कठोर न बनो रामधुन पंडित।**] मेरा हाथ न पकड़ो।

रामधुन— हाथ पकड़ना कोई अपराध है क्या ?

रूपा — [**गिड़गिड़ाती हुई**] रामधुन पंडित, थोड़ी दया करो। घर पर मेरा बापू मर रहा होगा।

रामधुन— [**अपना एक हाथ अपने सिने पर फेरता हुआ**] और यहाँ मैं मर रहा हूँ।

रामधुन— हाय राम ! पुजारी होकर ऐसी बातें करते हो। मुझे जाने दो। तुम्हें घोर पाप लगेगा।

रामधुन— पाप लगेगा। [**भीषण हँसी हँसता है**] गौतम सूत्र अध्याय ३२ श्लोक १९ में लिखा है, "जिस द्विज ने शूद्र स्त्री का अधरपान किया है, उससे संतति उत्पन्न की है, उसके लिये कोई प्रायश्चित नहीं है।" फिर पाप कैसे लगेगा। [**हँसता है।**]

रूपा — मैं अछूत हूँ। मुझे न सताओ। मुझे छेड़ते तुम्हें शरम नहीं लगती।

रामधुन—शरम काहे की पगली। सनातन से ऐसा ही होता आया है, और होता रहेगा। [**कहकर रूपा को अपनी कोठरी की** ओर खींचने लगता है। रूपा उसकी बाँहों में छटपटाती रहती है किन्तु छुड़ा नहीं पाती है। चिल्लाती है किन्तु रामधुन उसका मुँह कसकर बन्द कर देता है और बलपूर्वक रूपा को खींचकर अपने कमरे में ले जाता है। किवाड़ बन्द कर देता है। बाद में चीत्कार की एक भीषण ध्वनि।

(पर्दा गिरता है)

पाँचवाँ दृश्य

[पर्दा उठता है और रामधुन पंडित मन्दिर के ओसारे में बैठा है। उसके सामने कागज फैले हैं, और सोच-सोच कर वह उन पर कुछ लिखता जाता है।]

सिकी — [घबड़ाया हुआ एक ओर से प्रवेश करता है। सब चौपट हो गया पण्डितजी ।

रामधुन— क्या कहा ?

सिकी — सारे मोहरे जो हम-तुमने बिछाये थे, मारे गये। हम हार गये।

रामधुन— हार गये ? असम्भव है।

सिकी — असम्भव सम्भव हो चुका है, रामधुन पण्डित। सुमन और अमरीतवा शहर से डाक्टर और दवायें लेकर लौट आये हैं। सरकारी डाक्टर लोगों को हैजे की सुई लगा रहे हैं। कुंओं और गन्दी नालियों में दवा डाली जा रही है। गाँव की सफाई की जा रही है।

रामधुन —इससे क्या हुआ ?

सिकी —यह कहो, क्या नहीं हुआ ? अंधविश्वास को चीरकर विश्वास की मैंने एक नयी रोशनी फैलती देखी। उस रोशनी में मैंने सुमन को देखा। अमरीतवा और रूपा को देखा। सबको देखा। केवल रामधुन पण्डित और सिकी भगत को नहीं देखा।

रामधुन —बस ! बस !! सुन चुका। कहो चंदे कितने मिले हैं।

सिकी —कुछ नहीं।

रामधुन —क्यों ?

सिकी —कहा न, हम हार चुके हैं। मैं लाख समझाता रहा, किन्तु किसी ने मेरी बात पर कान नहीं दिया। बहुत कहा तो कहने लगे, सिका भगत तुम बहुत देर से आये।

रामधुन — और तुम लौट आये।

सिकी —तो क्या अपना माथा फुड़वाता।

रामधुन —ऐसी बात है।

सिकी —मैंने जो वहाँ देखी और सुनी, तुम्हें सचेत होने के लिए कह रहा हूँ। इस बार हैजा शांत होने पर सभी गाँव वाले सुमन का साथ देंगे।

रामधुन – और तुम ?

सिकी — मैं भी।

रामधुन — तो तुम भी बदल गये ?

सिकी —मेरी जगह वहाँ जो भी होता, वही बदल जाता है। इस घोर विपत्ति में जब किसी भी माँई के लाल ने आगे बढ़ कर गाँव वालों की मदद नहीं की, तो सुमन ने गाँव वालों के लिये वह सब कुछ किया जो हम और तुम नहीं कर सके। कठिन बिपत्ति में दिया गया स्नेह, किया गया प्रेम, समर्पित की गई सेवायें और सहानुभूति कभी बेकार नहीं जाते, रामधुन पण्डित।

रामधुन —[बिगड़कर] बहुत देर से सुन रहा हूँ अपना राग-भैरव बन्द करो। विश्वासघाती कहीं का।

सिकी —विश्वासघाती ? मैं हूँ ! नहीं ! नहीं !! तुम हो। तुमने धर्म के साथ विश्वासघात किया है। जिस गाँव का दिया खाते हो, उसके

साथ विश्वासघात किया है। औरतो और स्वयं अपने साथ विश्वासघात किया है। ईश्वर के सामने बड़े गुनहगार तुम हो, मैं नहीं।

रामधुन —[**क्रोध में**] सिकी।

सिकी —हाथी निकल जाने पर उसकी दुम पकड़ने से कोई लाभ नहीं, रामधुन पण्डित। जब सारा गाँव हैजे की चपेट में जल रहा है, तुम और मैं धर्म के नाम पर झूठी वसूली कर गाँव वालों को झूठी तसल्ली देने की चाल चल रहे हैं। सुमन मास्टर घर-घर लोगों की सेवा कर रहा है और तुम बैठकर भाँग घोंट रहे हो। कल तक मेरी आँखें बन्द थीं, लेकिन आज खुली हैं।

रामधुन —फिर यहां क्या करने आया है ?

सिकी —तुम्हारी आँखें खोलने आया हूँ।

रामधुन —तो देख, मेरी आँखें खुली हुई हैं।

सिकी —फिर दिखलायी क्यों नहीं देता ?

रामधुन —मुँह सँभाल कर बातें कर। तू अपनी मर्यादा का उलंघन कर रहा है। ब्राह्मण, ब्राह्मण है। उस पर टीका-टिप्पणी करने का अधिकार समाज को नहीं है। क्योंकि ब्राह्मण समाज का सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति है।

सिकी —लेकिन सुमन मास्टर तो कह रहे थे, समाज का हर व्यक्ति बराबर है। न कोई ऊँचा है और न कोई नीचा।

रामधुन —तो तुम सुमन के पास जाओ। मेरे पास तुम्हारे लिये जगह नहीं है।

सिकी —जाता हूँ [**एक ओर चल देता है और रामधुन पण्डित क्रोध से उसे घूरता रहता है।**]

पर्दा गिरता है।

छठवाँ दृश्य

[पर्दा उठता है और मन्दिर के नीचे बिछी दरी पर सुमन मास्टर, अमरीतवा, सिकी, पैरू और झगरू बैठे दिखलायी पड़ते हैं। रूपा एक ओर खड़ी है। मन्दिर के ओसारे में एक बिछी दरी पर ठाकुर बटोरसिंह बैठे हैं और उसके बगल में रामधुन पण्डित खड़ा दिखलायी पड़ता है।]

ठा० बटोरनसिंह—रूपा ! बीच में आकर खड़ी हो जाओ। [रूपा बीच में आकर एक ओर खड़ी हो जाती है।] ठीक है। अब हम पंचों की और भगवान् की शपथ खाकर कहो कि तुम्हारा यह गर्भ किसका है ? [सभी आँखें रूपा की ओर उठ जाती हैं। रूपा अपनी आँखें नीचे किये लज्जा से अपने पैरों को देखने लगता है। रूपा को चुप देखकर] तुझ से ही कह रहा हूँ। झूठ बोलेगी तो पाप लगेगा।

रूपा —[अपनी आँसू भरी आँखें ऊपर उठाती है। एक नजर ठाकुर बटोरनसिंह को, रामधुन पण्डित को, और दरी पर बैठे लोगों को देखती है, पुनः अपनी आँखें नीची कर लेती है] रामधुन पण्डित का।

बटोरनसिंह —क्या कहा ? [आश्चर्य से उनका मुँह खुला रह जाता है। दरी पर बैठे लोगों में फुसफुसाहट होने लगती है और सबों की आँखें रामधुन पण्डित की ओर उठ जाती हैं। रामधुन पण्डित भय से काँप जाता है।]

बटोरनसिंह —[**रामधुन पण्डित को आश्चर्य की आँखों से ऊपर नीचे देखता हुआ**] क्या यह सच कह रही है ?

रामधुन —नहीं सरकार ! मैं राधा-गोविन्द की कसम खाकर कहता हूँ, यह झूठ बोलती है। इसे सिखलाया गया है।

बटोरनसिंह —बोलो रूपा अब क्या कहती हो ?

रूपा —[**सिसकती हुई**] मैं जो कह रही हूँ, सच कह रही हूँ। मुझे किसी ने कुछ नहीं कहा है।

बटोरनसिंह —फिर तो भगवान की कसम खाओ, जैसा कि रामधुन पण्डित ने अभी खायी है।

रामधुन —[**साहस बटोर कर**] यह अछूत भगवान को क्या समझे सरकार ? जो कसम खायेगी।

अमरीतवा —[**रूपा को चुप देखकर**] चुप क्यों है बोलो न ?

रूपा —[**धीरे-धीरे अपना कठोर और गंभीर मुख ऊपर उठाती है और तन कर खड़ी हो जाती है तथा निर्भीक स्वर में**] क्या तुम लोगों ने मुझे जानवर समझ रखा है।

बटोरनसिंह —बाहरी परदेनशीन ! कल तक सारे गाँव से दिल्लगी करती रही और आज एक ब्राह्मण को बदनाम करने चली है। तुझे शरम नहीं आती।

रूपा —शरम तो उस ब्राह्मण को आनी चाहिये जो अनुचित काम कर झूठ बोलने से नहीं सकुचाता। सच्चाई सामने है। इसमें सभी को विश्वास करना होगा।

रामधुन —कोई जबरदस्ती है।

रूपा —अगर तुम सच्चाई का साथ देते हो तो.........।

बटोरनसिंह —फिर भी पंचों को विश्वास के लिए तुम्हें कसम खानी होगी।

रूपा —किन्तु मैं भी कसम-बसम नहीं खाती।

सिकी —क्यों ?

रूपा —क्योंकि कसम का आधार झूठा अपनाता है। झूठ बात को सच ठहराने के लिए कसम खायी जाती है। रामधुन पंडित कसम खा सकता है, क्योंकि वह झूठा है।

[एक क्षण सभी चुप रहते हैं]

बटोरनसिंह —**[उत्तेजित स्वर में]** यह लड़की झूठ बोलकर एक ब्राह्मण को बदनाम करती है। मेरा फैसला है कि यह गाँव छोड़कर कहीं और चली जाये।

रूपा —**[दृढ़ स्वर में]** इस फैसले को मैं नहीं मानती।

रामधुन —क्यों ?

रूपा —क्योंकि यह बटोरनसिंह का फैसला है। पंचायत का नहीं।

बटोरनसिंह — **[क्रोध से रूपा को घूरते हुए]** इस गाँव में किसकी मजाल है, जो ठाकुर बटोरनसिंह के जीते जी पंचायत करले। मेरे पूर्वजों ने पंचायत की थी, और आज मैं करता हूँ।

सुमन —लेकिन इस गाँव में और लोग भी तो रहते हैं। उन्हें भी बोलने का हक मिलना चाहिए।

अमरीतवा —मास्टर जी ठीक कहते हैं। आखिर हम भी तो इसी गाँव में रहते हैं। गाँव के फैसले में हमारी भी सलाह ली जानी चाहिये। हम लोग भी आदमी हैं।

बटोरनसिंह —फिर तो तुम्हीं लोग पंचायत करो। मैं जाता हूँ। **[क्रोध में पैर पटकता एक ओर चल देता है।]** रामधुन पंडित भी उसके पीछे-पीछे भागने लगता है।

प रू —[तेजी से उठकर रामधुन को पकड़ता हुआ] तुम कहाँ चले इन्साफ होना बाकी है ? पंचायत तो अब बैठी है।

[रामधुन पण्डित को पकड़ कर एक ओर खड़ा कर देता है और स्वयं उसके पीछे खड़ा हो जाता।]

झगरू —रूपा, पंचायत अब बैठी है। तुम्हें क्या कहना है ?

रूपा —पंचो, उस रोज मैं रामधुन पंडित के पास, अपने मर रहे बाप के लिए आशीर्वाद माँगने आयी थी। कहने आयी थी, चलकर मेरे बाप को एकबार देखलो। किन्तु यह धरती का देवता लाख मिन्नतें करने पर भी न पिघला। मैं हारी थकी लौट रही थी······।

सिकी —फिर क्या हुआ रूपा ?

रूपा —लपक कर रामधुन पंडित ने मेरे हाथ पकड़ लिये। मैं लाख-लाख रोयी, चिल्लायी, मिन्नतें कीं किन्तु इसने मेरे हाथ न छोड़े। यह मुझे अपने कमरे की ओर घसीटने लगा। मैं चिल्ला-चिल्ला कर मदद माँगती रही, किन्तु न मिली। हाथ-पैर पटकती रही किन्तु छुड़ा न सकी। छटपटाती रही लेकित बचा न सकी। यह मुझे अपने कमरे में ले गया। कमरे का दरवाजा बन्द कर दिया और फिर···[रूपा फफक-फफक कर रोने लगती है। तथा ठहर कर] क्या पंचायत उसके लिये मुझे दोषी ठहराती है ?

सभी —[एक स्वर से] नहीं, हरगिज नहीं।

अ मरीतवा —आज तुम्हारे साथ यह हुई है कल गाँव की अन्य बहू-बेटियों के साथ भी यही हो सकती है।

झगरू —ठीक कहते हो।

सुमन —रामधुन पंडित, यह सच कहती है? [रामधुन पंडित चुप रहता है।]

पैरू —बोलो न पंडित तुम्हीं से पूछा जा रहा है।

रामधुन —हाँ! [अपना मस्तक हिलाता है और मुँह लटका कर खड़ा रहता है।]

[सभी एक क्षण आपस में सलाह करते हैं।]

अमरीतवा —[खड़ा होकर] जो होनी थी, हो चुकी। पंचायत सामूहिक रूप से रामधुन पंडित को इसके लिए दोषी ठहराती है और सामाजिक बहिष्कार करती है। गाँव के किसी भी सामाजिक या सांस्कृतिक कामों में रामधुन पंडित को न बुलाया जाय। पंचायत आज से इन्हें इस मंदिर के पुजारी पद से अलग करती है। रामधुन पंडित को रूपा के परवरिश का सारा खर्च देना होगा, जब तक उसका कोई ठिकाना नहीं लग जाता।

रूपा —लेकिन मैं रामधुन पंडित से कोई खर्च लेना नहीं चाहती।

सिकी —फिर क्या चाहती हो?

रूपा —एक सहारा चाहती हूँ।

सिकी —क्या मतलब?

रूपा —यदि आप सचमुच मुझे पवित्र समझते हैं, तो आप में से कोई मुझे पत्नी के रूप में स्वीकार करें मेरे दुःखी जीवन को सुखी बनाने की कृपा करें।

[एक क्षण सभी चुप हो जाते हैं]

सुमन —[उठकर रूपा का हाथ पकड़ता हुआ] आओ। मैं तैयार हूँ। इन पंचों के सामने हम प्रतिज्ञा करें कि जीवन भर हम एक रहेंगे।

रूपा —[एक टक सुमन को देखती है। उसके पैर काँपने लगते हैं और वह सुमन के पैरों पर गिर पड़ती हुई] मास्टर जी! [सुमन उसे उठाने लगता है]

पर्दा गिरता है

सातवाँ दृश्य

[पर्दा उठता है और रामधुन पण्डित अपना सारा सामान लिये अपने कमरे से निकलता हुआ दिखलाई पड़ता है। ओसारे में आकर वह भगवान की मूर्ति के सामने आकर खड़ा हो जाता है और भगवान की मूर्ति को ध्यानपूर्वक देखने लगता है।]

रामधुन पं०—मैं तो अब तक तुझे भगवान समझता रहा, किन्तु तुम सचमुच के पत्थर निकले। उस दिन भरी पंचायत में मुझे नीचा दिखलाया गया, मेरा सीधा-पानी गाँव वालों ने बन्द कर दिया, मैं खड़ा-खड़ा लुटता रहा, और तुम, इस गुम्मद के नीचे खड़े टुकुर-टुकुर देखते रहे। जो तुम्हारी नित्य पूजा करता रहा उसे ही ठोकर मारकर दूर कर दिया। जिस अधर्मी ब्राह्मण ने धर्म का उल्लंघन कर अछूत की लड़की से शादी करली, उसे गोद में ले लिया। अछूतों को मन्दिर में न आने देकर, तुम्हारी जिस मर्यादा को बनाये रखा, उसे ही अपने पास बुलाकर नष्ट हो जाने दिया।

[ठहर कर] तुम, तुम अपनी मर्यादा तोड़ सकते हो, किन्तु रामधुन पण्डित अपनी मर्यादा नहीं तोड़ सकता। तुम अछूतों को गले लगा सकते हो, किन्तु मैं अब भी अछूतों से घृणा करता हूँ। अछूतों को अछूत समझता हूँ। उन्हें मन्दिर में आते-जाते और तुम्हारी पूजा करते नहीं देख सकता। ब्राह्मण मन्दिर के बाहर खड़ा रहे और अछूत मन्दिर में घुसकर तुम्हारी पूजा

करता रहे, यह घोर अन्याय है। मैं इसे वर्दाश्त नहीं कर सकता। [आगे बढ़कर सीढ़ियाँ उतरने लगता है] मैं जा रहा हूँ लेकिन सुन ले। जब समाज ने मुझे ब्राह्मण नहीं रहने दिया, तो मैं भी तुझे भगवान नहीं रहने दूँगा। [कह कर तेजी से सीढ़ियाँ उतर कर एक ओर चल देता है। पृष्ठभूमि से धड़ाके की भीषण ध्वनि और चीत्कार।]

पर्दा गिरता है।

समाप्त